मुक्त व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम

पाठ्यक्रम कोड - 817

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम

1

lS)kfrd fo"k;

;kSfxd fpfdRlk

jk"Vªh; eqDr fo|ky;h f'k{kk laLFkku

¼f'k{kk ea=ky;] Hkkjr ljdkj ds v/khuLFk ,d Lok;Ùk laLFkku½

,-24-25, bULVhV~;w'kuy ,fj;k] lsDVj & 62, uks,Mk -201309 ¼m-iz-½

oslkbV% www.nios.ac.in, Vksy Ýh uacj 18001809393

ikÑfrd fpfdRlk ,oa ;kSx foKku esa fMIyksek dk;ZØe
;kSfxd fpfdRlk ¼817½

vkHkkj

सलाहकार एवं मार्ग-दर्शन समिति

प्रोफेसर सरोज शर्मा
अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उत्तर प्रदेश)

श्री एस के प्रसाद
निदेशक, व्यावसायिक शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उत्तर प्रदेश)

डॉ. टी एन गिरि
संयुक्त निदेशक, व्यावसायिक शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उत्तर प्रदेश)

श्रीमती अनीता नायर
उपनिदेशक, व्यावसायिक शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उत्तर प्रदेश)

पाठयक्रम-पाठ्यचर्या

प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज
पाठ्यक्रम समिति अध्यक्ष, पूर्व विभागाध्यक्ष
योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड

डॉ. भानु प्रकाश जोशी
कार्यक्रम संयोजक, योग विभाग
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

डॉ. सुरेश लाल बरनवाल
विभागाध्यक्ष, योग विभाग
देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार

डॉ. रामअवतार शर्मा
योग स्पेशलिस्ट, सामान्य गवर्नमेंट
हॉस्पिटल, जिला नूंह, हरियाणा

आचार्य कौशल कुमार
निदेशक
राष्ट निर्माण योग संस्थान, दिल्ली

डॉ. गोपाल जी
गेस्ट प्रोफेसर (योग)
दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली

श्रीमती सरिता शर्मा
निदेशक
योग सरिता फाउंडेशन, दिल्ली

योगाचार्या सीमा सिंह
निदेशक, इंटीग्रल योग केंद्र
वैशाली, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)

डॉ. निधीश यादव
सहा. प्रोफेसर, पतंजलि योगपीठ
विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखंड)

डॉ. निधि गर्ग
सहा. प्रोफेसर, संस्कृति विश्वविद्यालय
मथुरा (उ.प्र.)

डॉ. स्नेहलता
एसो. प्रोफेसर, वी.वाई.डी.एस.
आयु. मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल
खुर्जा (उ.प्र.)

श्री आदित्य भारद्वाज
संयुक्त सचिव
अन्तर्राष्ट्रीय प्राकृतिक चिकित्सा संघ
दिल्ली

डॉ. पवन कुमार चौहान
व.का. अधिकारी (योग एवं प्रा.चि.)
व्यावसायिक शिक्षा विभाग
रा.मु.वि.शि.सं., नोएडा (उ.प्र.)

लेखन टीम

डॉ. राजेन्द्र प्रताप मलिक
प्रवक्ता, योग विभाग, एम.बी. गवर्नमेंट पी.जी. कॉलेज
हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखंड

डॉ. तबस्सुम फातिमा
योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा केंद
थाने, मुंबई (महाराष्ट्र)

डॉ. रामअवतार शर्मा
योग स्पेशलिस्ट, सामान्य गवर्न्मेंट
हॉस्पिटल, जिला नूंह, हरियाणा

श्री आदित्य भारद्वाज,
संयुक्त सचिव,
अन्तर्राष्ट्रीय प्राकृतिक चिकित्सा संघ, दिल्ली

योगाचार्य कौशल कुमार
सचिव, राष्ट्रीय निर्माण योग संस्थान,
हौज़खास, नई दिल्ली

डॉ. मोनिका हीरा
सी. एम. ओ.
विवेकानंद प्राकृतिक चिकित्सालय, दिल्ली

सहायक दल

डॉ. ऊधम सिंह
सहा. प्रोफेसर, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी
विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड

डॉ. निधीश यादव
सहा. प्रोफेसर, पतंजलि योगपीठ विश्वविद्यालय
हरिद्वार (उत्तराखंड)

डॉ. पवन कुमार चौहान
वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी (योग एवं प्रा.चि.)
व्या.शि.वि., रा.मु.वि.शि.सं., नोएडा (उ.प्र.)

संपादन

प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज
पाठ्यक्रम समिति अध्यक्ष, पूर्व विभागाध्यक्ष,
योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विवि, हरिद्वार

डॉ. भानु प्रकाश जोशी
कार्यक्रम संयोजक, योग विभाग
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

योगाचार्य कौशल कुमार
सचिव, राष्ट्र निर्माण, योग संस्थान
हौज़खास, नई दिल्ली

डॉ. सुरेश बरनवाल
विभागाध्यक्ष, योग विभाग
देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पाठयक्रम डिजाइन, परिवर्धन एवं संयोजन

डॉ. पवन कुमार चौहान
वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी (योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा)
व्यावसायिक शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, नोएडा (उत्तर प्रदेश)

ग्राफिक्स/पिक्चर्स तथा पाठ्यक्रम विकास में विशेष सहयोग

डॉ. एस के त्यागी
विभागाध्यक्ष, योग विज्ञान विभाग
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार उत्तराखंड

आचार्य विक्रमादित्य
निदेशक
विवेकानंद हॉस्पीटल, दिल्ली

डॉ. गोपाल जी
गेस्ट फैकल्टी
(निदेशक, ग्लोबल योग संस्थान),
दिल्ली विश्वविद्यालय

केंद्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद, आयुष मंत्रालय,
भारत सरकार, दिल्ली

अध्यक्ष की कलम से ...

प्रिय शिक्षार्थियों,

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान में आपका स्वागत है!

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (NIOS), शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अधीनस्थ एक शैक्षिक बोर्ड है, जो शिक्षा से वंचित प्रत्येक वर्ग को शैक्षिक व व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करता है। आज समाज को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो शिक्षित बनाने के साथ-साथ रोजगार भी उपलब्ध करा सके और देश के युवाओं को कौशल प्रदान कर, उनके कार्यक्षेत्र में सक्षम बना सके। वर्तमान समय की इस मांग को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (NIOS) का यही प्रयास है कि, प्रमुख रूप से देश के युवा अपना काम-काज जारी रखते हुए मुक्त शिक्षा के माध्यम से अपनी रूचि अनुसार व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें और व्यवसाय व रोजगार की दिशा में उन्नति कर सकें।

प्राचीनकाल से ही मानव प्रकृति के सानिध्य में रहा है, जहां उसने अपनी जीवन शैली में प्रकृति को समाहित कर स्वस्थ जीवन जीने की कला सीखी है। उसका खान-पान, पालन-पोषण, रोग-मुक्ति आदि सब कुछ प्रकृति ही करती है, जिसकी झलक, हमारी जीवन शैली और संस्कृति में दिखाई पड़ती है। किन्तु आज भौतिकवाद, भोग-विलासता, आधुनिक जीवन शैली और खान-पान की आदतों में बदलाव के कारण, जीवनशैली संबंधित विकार (जैसे-मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह आदि) तेजी से बढ़ रहे हैं। इन सबसे बचने और स्वस्थ एवं चुस्त-दुरुस्त जीवन जीने के लिए एक बार फिर, योग एवं प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। प्रकृति में रहकर, जहां स्वस्थ जीवन प्राप्त होता है वहीं योग, शरीर, मन व आत्मशक्ति का सर्वांगीण विकास करता है और अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। इस दशक में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में, जो महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है, वह निसंदेह ही बहुत महत्वपूर्ण है।

मुझे प्रसन्नता है कि, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा क्षेत्र के अन्तर्गत आपने राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (NIOS) के प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम का चुनाव किया है। यह दो वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम है, जो स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। इसमें छः माह की इन्टर्नशिप को भी शामिल किया गया है । पाठ्यक्रम का उद्देश्य प्रशिक्षार्थियों में प्राकृतिक चिकित्सा हेतु कौशल विकसित करना एवं सक्षम बनाना है, ताकि वे सरकारी-गैर सरकारी स्वास्थ्य व योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों में रोजगार प्राप्त कर सके, अथवा स्वरोजगार कर आत्म निर्भर बन सके, तथा स्वस्थ भारत का निर्माण कर सकें।

यह पाठ्यक्रम, राष्ट्रीय स्तर पर देश के विभिन्न विषय विशेषज्ञों और चिकित्सकों द्वारा विकसित किया गया है। इसका श्रेय पाठ्यक्रम समिति के अध्यक्ष प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, पूर्व विभागाध्यक्ष, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड और डॉ. पी. के. चौहान, वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी (योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा), राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान को जाता है, जिन्होंने डॉ. भानु जोशी, कार्यक्रम संयोजक, योग एवं प्रा. चि. विभाग, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, डॉ. सुरेश लाल बरनवाल, विभागाध्यक्ष, योग विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, आचार्य कौशल कुमार, निदेशक, राष्ट्र निर्माण योग संस्थान, दिल्ली, डॉ. रामअवतार शर्मा, योग स्पेशलिस्ट, सामान्य अस्पताल (हरियाणा सरकार), जिला नूंह, हरियाणा, डॉ. निधीश यादव, सहा. प्रोफेसर पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डॉ. सत्येन्द्र मिश्रा, योग शिक्षक, योगविभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ आदि प्रतिष्ठित विद्वानों के साथ मिलकर इस पाठ्यक्रम को विकसित किया।

इस पावन एवं मंगलकार्य में विशेष सहयोग व मार्गदर्शन के लिए मैं, प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज और उनकी पूरी टीम को बहुत-बहुत बधाई देती हूँ और आशा करती हूँ कि राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (NIOS) के साथ आप इसी प्रकार अपना सहयोग बनाएं रखेंगे और अपने बहूमूल्य सुझावों से हमें अनुग्रहीत करते रहेंगे।

पाठ्यक्रम में नामांकन कराने के लिए मैं, शिक्षार्थियों को भी बधाई देती हूँ और आशा करती हूँ कि यह पाठ्यक्रम आपके लिए अत्यंत हितकर सिद्ध होगा।

मैं आपके सफल व उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ!

प्रोफेसर सरोज शर्मा
अध्यक्ष, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, नोएडा

शिक्षार्थियों के लिए दो शब्द ...

प्रिय शिक्षार्थियों,

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस डिप्लोमा कार्यक्रम में आपका स्वागत है!

आधुनिकता के इस भौतिक दौर में अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और सुरक्षित इलाज की आज सभी को आवश्यकता है। लोग अपने स्वास्थ्य और फिटनेस को लेकर काफी सजग हैं। वे समझने लगे हैं कि प्रकृति के साथ योगमयी जीवन जीना आवश्यक है। जहां प्रकृति स्वस्थ जीवन प्रदान करती है वहीं योग शरीर, मन व आत्मशक्ति का सर्वांगीण विकास करता है, और अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यही कारण है कि लोग आज, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा-पद्धतियों की ओर आकर्षित हो रहे हैं, जिससे समाज में प्राचीन चिकित्सा-पद्धतियों की मांग विशेषरूप से बढ़ी है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम की शुरूआत की है। इस दो वर्षीय डिप्लोमा कार्यक्रम में सैद्धांतिक और व्यावहारिक अर्थात प्रैक्टिकल प्रशिक्षण मिलाकर कुल 12 विषय सम्मलित हैं और छः माह की इंटर्नशिप का विशेष प्रावधान है, जिसे दो साल के प्रशिक्षण के उपरांत संबन्धित प्राकृतिक चिकित्सा के केन्द्रों, संस्थानों और अस्पतालों में पूरा करना आवश्यक होगा।

इस कार्यक्रम में आपको अध्ययन सामग्री, स्व-निर्देशक सामग्री के रूप में प्रदान की जाएगी और व्यावहारिक घटक अर्थात प्रैक्टिकल-प्रशिक्षण, एनआईओएस के मान्य प्रशिक्षण अध्ययन केंद्रों (एवीआई) पर प्रदान किया जाएगा, जहां यथोचित व्यक्तिगत संपर्क कक्षाएँ, सत्रीय कार्य, प्रैक्टीकल एवं प्रशिक्षण कक्षाएँ, इंटर्नशिप आदि का प्रावधान निर्धारित है। योजना के अनुसार, प्रथम वर्ष में आप सैद्धांतिक और व्यावहारिक (06 विषयों) का प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे और परीक्षा में बैठेंगे। इसी प्रकार द्वितीय वर्ष में भी आप सैद्धांतिक और व्यावहारिक (06 विषयों) का प्रशिक्षण प्राप्त कर परीक्षा में बैठेंगे। तदुपरान्त किसी प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग केंद्र अथवा चिकित्सालय में 06 माह की इर्न्टनशिप को पूरा करेंगे।

शिक्षार्थियों को ध्यान में रखते हुए, पाठ्यक्रम को स्व-निर्देशित पाठ्यसामग्री के रूप में विकसित किया गया है, जिसमें यूनिट परिचय, यूनिट के उद्देश्य, शिक्षक की शैली में विषयों व उपविषयों को शिक्षक की भांति समझाते हुए, बीच-बीच में आपकी प्रगति जानने के लिए प्रश्न, आपने क्या सीखा और अंत में निबंधात्मक प्रश्नों का समावेश किया गया है।

यह पाठयसामग्री राष्ट्रीय स्तर पर विषय विशेषज्ञों की समिति द्वारा विकसित की गई है। पाठ्यक्रम विकास में विशेष सहयोगी रहे प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, पूर्व विभागाध्यक्ष, योग विभाग, गुरूकुल, काँगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार, डॉ0 भानु जोशी, कार्यक्रम संयोजक, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, डॉ0 निधीश यादव, सहा0 प्रोफेसर, योग विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डा0 राजेन्द्र प्रताप मलिक, प्रवक्ता, योग विभाग, एम.बी. गवर्न्मेण्ट पी. जी. कॉलेज, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखंड, डॉ. रामअवतार शर्मा, योग स्पेशलिस्ट, सामान्य गवर्नमेंट, हॉस्पिटल, जिला नूंह, हरियाणा आदि का, मैं हृदय से आभारी हूँ, जिनके मार्गदर्शन में यह कार्यक्रम विकसित हो सका। साथ ही सीसीआरवाईएन, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, अन्य विश्वविद्यालयों, योग व प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों और टीम के अन्य सभी सदस्यों का भी मैं आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इस पाठ्यक्रम विकास के लिए अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया।

आशा करता हूँ कि यह कार्यक्रम आपको पसंद आएगा और आपके जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। कार्यक्रम से संबन्धित, यदि कोई सुझाव है तो, आपका स्वागत है। आप निःसंकोच हमसे संपर्क कर सकते हैं या लिखकर भेज सकते हैं।

आपके सफल एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए मैं, ढेर सारी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ!

शुभकामनाओं सहित,

डा0 पवन कुमार चौहन, कार्यक्रम समन्वयक
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

çkÑfrd fpfdRlk ,oa ;kx foKku esa fMIykek ikB;Øe

ikB;Øe vkj ikB;p;k

प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा एक महत्वपूर्ण पाठ्यक्रम है। यह पाठ्यक्रम, उन सभी लोगों के लिए विकसित किया गया है, जो योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में, काम करने के इच्छुक हैं। प्राचीनकाल से ही मानव प्रकृति के सानिध्य में रहा है, जहां उसने अपनी जीवन शैली में प्रकृति को समाहित कर स्वस्थ जीवन जीने की कला सीखी है। आज स्वस्थ एवं चुस्त–दुरुस्त रहने के लिए, योग एवं प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

आधुनिक जीवन शैली के पैटर्न और खान–पान की आदतों में बदलाव के कारण जीवनशैली संबंधी रोग जैसे – मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह आदि बीमारियां तेजी से बढ़ रही हैं। यही कारण है कि, लोग अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और इलाज के लिए, प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों की ओर तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। अतः आज समाज में, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की विशेषरूप से मांग है। इस विशेष मांग को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से इस व्यावसायिक पाठ्यक्रम की शुरूआत की है।

mís';

पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में लोगों को कुशल पेशेवर और निवारक विशेषज्ञ बनाना है। पाठ्यक्रम को पूरा करने के पश्चात, प्रशिक्षु निम्नांकित में कौशल प्राप्त करने और दक्षता हासिल करने में सक्षम होंगे –

- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के परिचय पर प्रकाश डालने में;
- स्वास्थ्य–जागरूकता, स्वच्छता, एवं आहार की आवश्यकता एवं महत्व का उल्लेख करने में;
- योग दर्शन एवं क्रिया विज्ञान को समझा पाने में;
- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांतों तथा पंचतत्वों पर प्रकाश डालने में;
- प्राकृतिक जीवन शैली की अवधारणाओं को जानने और व्यावहारिक बनाने में;
- स्वास्थ्य संवर्धन, बीमारियों की रोकथाम सहित सामान्य संक्रमण और जीवन शैली संबन्धित बीमारियों का प्रबंधन और आपातकालीन स्थितियों के दौरान नियंत्रण करने में;
- मानव शरीर रचना एवं शरीर क्रिया विज्ञान की मूलभूत जानकारी रखने में;
- योग के एकीकृत दृष्टिकोण के अनुप्रयोगों को लागू करने में;
- प्राकृतिक चिकित्सा से विभिन्न विकारों व बीमारियों की चिकित्सा प्रदान करने में;
- मानव शरीर पर योग के प्रभाव को स्पष्ट करने में।

ços'k vgZrk

- किसी भी मान्यता प्राप्त बोर्ड से न्यूनतम 12 वीं कक्षा पास (समकक्ष)

अथवा

- वे सभी लोग, जो योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा में किसी प्रतिष्ठित संस्थान (एनआईओएस द्वारा स्वीकृत)/विश्वविद्यालय से न्यूनतम एक वर्ष का डिप्लोमा कर चुके हैं, वे पाठ्यक्रम के द्वितीय वर्ष में सीधे प्रवेश ले सकते हैं, लेकिन प्रथम वर्ष की परीक्षा द्वितीय वर्ष के साथ उत्तीर्ण करनी आवश्यक होगी।
- न्यूनतम आयु –18 वर्ष

y{; leg

वे सभी लोग, जो योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में 'कुशल पेशेवर और निवारक विशेषज्ञ' बनने के इच्छुक हैं।

jkstxkj dh volj

कार्यक्रम पूरा करने के पश्चात प्रशिक्षु, योग संस्थानों, योग केंद्रों, स्वास्थ्य क्लबों, प्राकृतिक चिकित्सालयों तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा पद्धति के केन्द्रों आदि में सहायक चिकित्सक अथवा समकक्ष के रूप में काम कर सकते हैं।

ikB;Øe dh vof/k

पाठ्यक्रम की अवधि दो वर्ष छः माह इंटर्नशिप।

अध्ययन की योजनाः कुल अध्ययन घंटे = 1200 घंटे + छः माह की इंटर्नशिप

स्व–अध्ययन – 20%, सिद्धांत और प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण – 80%

प्रथम वर्षः 10 माह × 8 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 480 घंटे

द्वितीय वर्षः 10 माह × 8 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 480 घंटे

थ्योरी व प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण कुल संपर्क घंटे – 480 + 480 = 960 घंटे + स्व–अध्ययन – 240 घंटे

छः माह की रेग्युलर इंटर्नशिप = 6 माह × 20 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 720 घंटे

ikB;Øe&ikB;p;k

पाठ्यक्रम में सिद्धांत और प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण सहित कुल 12 विषय शामिल हैं। अध्ययन सामग्री स्व–निर्देशक सामग्री के रूप में प्रदान की जाएगी और व्यावहारिक घटक अर्थात् प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण एनआईओएस के

मान्य प्रशिक्षण अध्ययन केंद्रों (एवीआई) पर प्रदान किया जाएगा।

iFke o"k d: fo"k;			
Ø-l-	**l)kfUrd**	**Ø-l-**	**ik;kfxd**
01	योग का आधारभूत ज्ञान	04	योग अभ्यास (प्रायोगिक)
02	प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान	05	प्राकृतिक चिकित्सा का व्यावहारिक प्रशिक्षण (प्रायोगिक)
03	मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव	06	मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव (प्रायोगिक)
f}rh; o"k d: fo"k;			
01	यौगिक चिकित्सा	04	यौगिक चिकित्सा (प्रायोगिक)
02	प्राकृतिक चिकित्सा	05	प्राकृतिक चिकित्सा (प्रायोगिक)
03	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ	06	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रायोगिक)
*किसी प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र पर छः माह की इंटर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य			

***çf'k{k bVuf'ki d nkSjku vuqlU/kku lacfU/kr ifj;kstuk ij dk;Z djsxsA ftlds vf/kdre vad 200 gksxsA blds eY;kadu ,uvkbZvks,l }kjk fu;qä] ckã ijh{kd }kjk fd;k tk,xkA ftlds i=ek.ki= lacfU/kr ,ohvkbZ ¼ifr'k{k.k dsna½ vkSj ikÑfrd fpfdRlk dsna d: lkFkZ; ls ikIr gksxkA**

foLr`r ikB~;p;kZ

iFke o"k d: fo"k;

l)kfUrd fo"k; & 1 ¼ ;kx dk vk/kkjHkwr Kku & 811

bdkbZ ¼;fuV½ & 1 ;kx ¼ ,d ifjp;

- योग, अर्थ एवं परिभाषाएं
- योग की उत्पत्ति, इतिहास एवं विकास
- प्रमुख यौगिक ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय
- योग की प्रमुख परम्पराएं
- योग की उपयोगिता एवं महत्व

bdkbZ ¼;fuV½ & 2 ;kx vfLrRo dh vo/kkj.kk

- वैदिक काल (वेदों) में योग का अस्तित्व

- उपनिषद काल (उपनिषद) में योग का अँस्तित्व
- दर्शन काल (दर्शन) में योग का अँस्तित्व
- आधुनिक काल में योग का अँस्तित्व
- योग में वर्णित ईश्वर का स्वरूप

bdkb ¼;fuV½ & 3 ;kfxd thou n'ku

- संस्कृति की अवधारणा
- पुरूषार्थ
- आश्रम व्यवस्था
- विवेक, वैराग्य, षट्सम्पत्ति और मुमुक्षुत्व
- भारतीय जीवन मूल्य

bdkb ¼;fuV½ & 4 JhenHkxonxhrk d vu|lkj çe|[k ;kx ekx

- श्रीमद्भगवद्गीता में वार्णित ज्ञानयोग
- श्रीमद्भगवद्गीता के आधार पर कर्मयोग
- श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार भक्तियोग

bdkb ¼;fuV½ & 5 ikr:ty ;kxl=

पद्धतियाँ

- भारतीय परम्परा में योग के स्वरूप
- योग के महत्वपूर्ण तथा अद्वितीय ग्रंथ का परिचय तथा आधारभूत ज्ञान
- योग सूत्र के ऐतिहासिक महत्व एवं स्वरूप
- योग सूत्र के अनुसार योग की परिभाषा

bdkb ¼;fuV½ & 6 v"Vkx ;kx

- महर्षि पतंजलिकृत अष्टांग योग दर्शन की अभिव्यक्ति
- योग के आठ अंगों के क्रमिक नाम
- यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि आठ अंग
- अष्टांग योग के व्यावहारिक स्वरुप और लाभ

bdkb ¼;fuV½ & 7 gB;kx

- हठयोग का सामान्य परिचय
- हठयोग का अर्थ एवं मुख्य परिभाषाएं
- मानव शरीर में चक्र, कुण्डलिनी एवं नाड़ियों का उल्लेख
- घेरण्ड संहिता के अनुसार हठयोग के सप्तांग
- हठयोग अभ्यास के लाभ

bdkb ¼;fuV½ & 8 ;kx lkèkuk e fo?u

- योग साधना में षड्रिपु का वर्णन
- पंचक्लेश
- योग साधना में आने वाले विक्षेप
- चित्त वृत्तियों के, निरोध के उपाय

bdkb ¼;fuV½ & 9 ;kxkH;kl dju l iol&fun'k] r;kjh vkj lkoèkkfu;k

- यौगिक अभ्यास के पूर्व की जाने वाली तैयारियों एवं सावधानियाँ
- योग का आधारभूत ज्ञान यौगिक अभ्यास के लिए उपयुक्त स्थान का चुनाव
- योग अभ्यास के दौरान यौगिक परिधान और उसका महत्व
- अभ्यास के लिए योग मेट की आवश्यकता एवं महत्ता
- यौगिक अभ्यास के लिए उपयुक्त समय–सारणी
- यौगिक अभ्यास के दौरान आवश्यक सावधानियां
- यौगिक अभ्यास के दौरान अचानक होने वाली विषम परिस्थितियों को संभालना

bdkb ¼;fuV½ & 10 "kVde

- षट्कर्म अर्थ, एवं परिभाषा
- षट्कर्म के विभिन्न अंग
- शरीर पर उनका प्रभाव और इसके लाभ

bdkb ¼;fuV½ & 11 ;kfxd l{e vH;kl ¼fØ;k,½

- यौगिक सूक्ष्म क्रियाओं की आवश्यकता और उनके महत्व
- सूक्ष्म क्रियाएं करने की विधि और उनके प्रभाव
- कुछ विशेष आरामदायक व ध्यानात्मक आसन तथा विभिन्न रोगों में उनके लाभ
- यौगिक सूक्ष्म क्रियाओं से पूर्व की जाने वाली तैयारियां और सावधानियां

bdkb ¼;fuV½ & 12 ;kx vklu

- आसन, अर्थ एवं परिभाषा
- योगासनों की आवश्यकता और उनके महत्व
- आसनों के प्रकार
- सूर्य नमस्कार तथा अन्य आसनों के लाभ का विश्लेषण

bdkb ¼;fuV½ & 13 çk.kk;ke

- प्राणायाम का अभिप्राय
- प्राणायाम के प्रमुख प्रकार
- प्राणायाम के महत्व तथा लाभ

bdkb ¼;fuV½ & 14 eæk vkj cèk

- मुद्रा एवं बंध का अभिप्राय
- मुद्रा एवं बंध के प्रमुख प्रकारों का वर्णन
- मुद्रा एवं बंध के महत्व तथा लाभ

bdkb ¼;fuV½ & 15 ;kx fuæk ,o è;ku lkèkuk

- ध्यान साधना का अभिप्राय
- ध्यान साधना की विधि
- स्व–दर्शन ध्यान साधना और उसकी क्रिया विधि
- योग का आधारभूत ज्ञान, योगनिद्रा, उसकी क्रिया विधि, महत्व तथा लाभ

l)kfUrd fo"k; & 2 % ikÑfrd fpfdRlk dk vk/kkjHkwr Kku & 812

bdkbZ ¼;wfuV½ & 1 çk—frd fpfdRlk% ,d ifjp;] mn~Hko ,oa bfrgkl

- प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ
- प्राकृतिक चिकित्सा के इतिहास एवं विकास
- प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत
- प्राकृतिक चिकित्सा की आवश्यकता एवं उपयोगिता
- प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य में परस्पर में संबंध

bdkbZ ¼;wfuV½ & 2 çk—frd fpfdRlk ds ewyHkwr fl)kar

- प्राकृतिक चिकित्सा के अर्थ एवं परिभाषा
- प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत
- प्राकृतिक चिकित्सा की विभिन्न विधियां

bdkbZ ¼;wfuV½ & 3 vkgkj ,oa vk"kS/kh; ikS/ks

- उचित आहार, पोषण और स्वास्थ्य की उपयोगिता
- आहार संबंधी कुछ अच्छी आदतों की चर्चा
- कुछ औषधीय पेड़–पौधे, उनके पोषक मूल्य और उनका उपयोग

bdkbZ ¼;wfuV½ & 4 çkFkfed mipkj

- प्राथमिक उपचार सम्बन्धित सामान्य एवं आवश्यक जानकारी
- आपात स्थिति में संकेतों और लक्षणों के सहारे, प्राथमिक उपचार प्रबंध के तरीके
- आपात स्थितियों में प्राथमिक उपचार उपलब्ध कराकर, जीवन की रक्षा
- विभिन्न परिस्थितियों को समझकर, घरेलू उपचार
- शरीर के वायटल पैरामीटर्स

bdkbZ ¼;wfuV½ & 5 lE;d LokLF;

- स्वास्थ्य तथा इसके पहलुओं को परिभाषा
- स्वास्थ्य के शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक पहलू
- अच्छे स्वास्थ्य के आधार
- अच्छे स्वास्थ्य के सूचक
- रोगों के मूलभूत कारण

bdkbZ ¼;wfuV½ & 6 vkgkj ,oa iks"k.k

- भोजन, इसकी आवश्यकता एवं महत्व
- संतुलित आहार
- आहार की उपयोगिता
- सात्विक, राजसिक एवं तामसिक आहार
- उम्र, बीमारी, समय व ऋतुओं के अनुसार आहार
- आहार औषधि के रूप में

bdkbZ ¼;wfuV½ & 7 çk—frd LoPNrk

- स्वच्छता का अर्थ

- पर्यावरण की स्वच्छता तथा खान–पान में स्वच्छता कायम करने के सही तरीके
- व्यक्तिगत स्वच्छता, पर्यावरण की स्वच्छता और खान–पान की स्वच्छता के लिए आवश्यक और अच्छी आदतें

bdkbl ¼;fuV½ & 8 vkdk'k rRo fpfdRlk

- आकाश तत्व की अवधारणा
- आकाश तत्व की प्राप्ति के साधन
- उपवास का सही अर्थ, उसकी विधियां और महत्वता

bdkbl ¼;fuV½ & 9 ok;q rRo fpfdRlk

- वायु तत्व की अवधारणा
- वायु तत्व की जीवन में उपयोगिता
- वायु तत्व की उत्पत्ति, प्रकार, कार्य व महत्त्व
- वायु सेवन और इसके साधन
- पवन स्नान का उचित काल और लाभ
- प्राणायाम
- व्यायाम और शरीर मर्दन (मालिश)

bdkbl ¼;fuV½ & 10 vfXu rRo ¼lw;Z fdj.k½ fpfdRlk

- अग्नि तत्व की अवधारणा
- अग्नि तत्व की उत्पत्ति व उसकी प्राप्ति के साधन
- आतप स्नान, उसका उचित काल व सावधानियां
- वर्ण चिकित्सा व सूर्य प्रकाश का महत्व
- इन्फ्रारेड व पराबैंगनी किरणें
- सौर मंडल व नवग्रहों के रंग व प्रकृति

bdkbl ¼;fuV½ &11 ty rRo fpfdRlk

- जल तत्व की अवधारणा
- जल तत्व की उत्पत्ति, स्थान, कार्य व स्रोतानुसार गुणधर्म
- उषापान, जलपान विधि आदि
- जल चिकित्सा के सामान्य मूलभूत सिद्धांत

bdkbl ¼;fuV½ &12 iFoh rRo fpfdRlk ¼feêh fpfdRlk½

- पृथ्वी तत्व की अवधारणा
- पृथ्वी तत्व की उत्पत्ति व प्राप्ति के साधन
- प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्टी की आवश्यकता व महत्व
- रोगानुसार मिट्टी का प्रयोग

l)kfUrd fo"k; & 3 % ekuo 'kjhj jpuk] fØ;k foKku vkj ;kx dk i;kx & 813

bdkbl ¼;fuV½ & 1 ekuo 'kjhj ljpuk ifjp; ,o ;kx dk çHkko

- मानव शरीर का सामान्य परिचय

- मानव शरीर की विवेचना
- ऊतक का अर्थ एवं प्रकार
- मानव शरीर के विभिन्न तंत्र
- मानव शरीर पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 2 ekuo vfLFk ra= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;ksx dk çHkko

- अस्थि तंत्र का सामान्य परिचय
- अस्थि तंत्र का वर्गीकरण
- अस्थि तंत्र की विवेचना
- अस्थि तंत्र का महत्व
- अस्थि तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 3 isf'k; ra= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;ksx dk çHkko

- पेशीय तंत्र का सामान्य परिचय
- पेशीय तंत्र की विवेचना
- पेशीय तंत्र का वर्गीकरण
- पेशीय तंत्र का महत्व
- पेशीय तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव

bdkbZ ¼;wfuV½ & 4 KkusfUæ; ra= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;ksx dk çHkko

- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र का सामान्य परिचय
- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र की विवेचना
- पांचों ज्ञानेन्द्रियों की संरचना एवं कार्य
- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र का महत्व
- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 5 ikpu ra= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;ksx dk çHkko

- पाचन तंत्र का सामान्य परिचय
- पाचन तंत्र की व्याख्या
- पाचन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि
- पाचन तंत्र का महत्व
- पाचन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 6 'olu ra= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;ksx dk çHkko

- श्वसन तंत्र का सामान्य परिचय
- श्वसन तंत्र की व्याख्या
- श्वसन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि का वर्णन
- श्वसन तंत्र का महत्व
- श्वसन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 7 mRlZtu ra= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;ksx dk çHkko

- उत्सर्जन तंत्र का सामान्य परिचय
- उत्सर्जन तंत्र की व्याख्या
- उत्सर्जन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि
- उत्सर्जन तंत्र का महत्व

- उत्सर्जन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 8 jä ifjlapj.k r= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;kx dk çHkko

- रक्त परिसंचरण तंत्र का सामान्य परिचय
- रक्त परिसंचरण तंत्र की व्याख्या
- रक्त परिसंचरण तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि
- रक्त परिसंचरण तंत्र का महत्व
- रक्त परिसंचरण तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 9 vUr%lzkoh r= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;kx dk çHkko

- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का सामान्य परिचय
- अन्तःस्रावी तंत्रा की व्याख्या
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से उत्पन्न हार्मोन्स के कार्य
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का महत्व
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 10 çfrj{kk r= ,oa çtuu r= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;kx dk izHkko

- प्रतिरक्षा तंत्र का सामान्य परिचय
- प्रतिरक्षा तंत्र की व्याख्या
- प्रतिरक्षा तंत्र के अंगों का वर्णन
- प्रतिरक्षा तंत्र का महत्व
- प्रजनन तंत्र का संक्षिप्त परिचय
- प्रतिरक्षा तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या
- प्रजनन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

bdkbZ ¼;wfuV½ & 11 rf=dk r= dh lajpuk&fØ;kfofèk ,oa ;kx dk çHkko

- तंत्रिका तंत्र का सामान्य परिचय
- तंत्रिका तंत्र की व्याख्या
- तंत्रिका तंत्र का वर्गीकरण
- तंत्रिका तंत्र का महत्व पर प्रकाश
- तंत्रिका तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या

fo"k; & 4 % ;kx vH;kl ¼izk;ksfxd½ & 814

fo"k; & 5 % ikÑfrd fpfdRlk dk 0;kogkfjd if'k{k.k ¼izk;ksfxd½ & 815

fo"k; & 6 % ekuo 'kjhj jpuk] fØ;k foKku vkj ;kx dk izHkko ¼izk;ksfxd½ & 816

f}rh; o"kZ dk fo"k;

lS)kfUrd fo"k; & 1 % ;kfxd vH;kl & 817

bdkbZ ¼;wfuV½ & 1 ifl) ;kfx;ksa dk ;kx esa ;kxnku

- योग के क्षेत्र में महान योगियों के जीवनदर्शन एवं योगदान

bdkbZ ¼;wfuV½ & 2 ;ksx fØ;k foKku ¼fQft;ksykWth½ ,oa iapdks'k dh vo/kkj.kk

- योग क्रिया विज्ञान (यौगिक फिजियोलॉजी)
- पंचकोश का अर्थ एवं वर्गीकरण
- भारतीय आध्यात्मिक और दार्शनिक परम्परा में पंचकोश का वर्णन
- मानव जीवन में पंचकोश का महत्त्व

bdkbZ ¼;wfuV½ & 3 ;kSfxd LokLF; izcU/ku

- यौगिक स्वास्थ्य प्रबंधन का सामान्य परिचय
- बाल्यावस्था का यौगिक प्रबन्धन
- किशोरावस्था का यौगिक प्रबन्धन
- युवावस्था का यौगिक प्रबन्धन
- प्रौढ़ावस्था का यौगिक प्रबन्धन
- वृद्धावस्था का यौगिक प्रबन्धन
- खिलाड़ियों के लिए यौगिक प्रबन्धन
- सुरक्षाबलों के लिए यौगिक प्रबन्धन
- फिटनेस के लिए यौगिक प्रबन्धन
- पर्यटकों के लिए यौगिक प्रबन्धन

bdkbZ ¼;wfuV½ & 4 ruko ¼LVsªl½ esa ;kSfxd izcU/ku

- तनाव का सामान्य परिचय
- मानसिक तनाव का अर्थ एवं परिभाषा
- छात्रों में तनाव प्रबन्धन
- सामान्यजनों में मानसिक तनाव का यौगिक प्रबन्धन
- कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर में मानसिक तनाव का यौगिक प्रबन्धन

bdkbZ ¼;wfuV½ & 5 efgykvksa ds fy, ;kSfxd izcU/ku

- महिला स्वास्थ्य का सामान्य परिचय
- मासिक धर्म की समस्या में यौगिक प्रबन्धन
- गर्भावस्था एवं प्रसवोत्तर के दौरान यौगिक प्रबन्धन
- रजोनिवृत्ति के दौरान यौगिक प्रबन्धन

bdkbZ ¼;wfuV½ & 6 'olu ,oa ân; ¼dkfMZ;ksoLdqyj½ lEcU/kh jksx ,oa ;kSfxd fpfdRlk

- श्वसन तंत्र के प्रमुख रोग
- श्वसन तंत्र के प्रमुख रोगों की यौगिक चिकित्सा
- हृदय से सम्बन्धित प्रमुख रोग
- हृदय रोगों की यौगिक चिकित्सा

bdkbZ ¼;wfuV½ & 7 ikpu ,oa e=&iztuu lEcU/kh jksx ,oa ;kSfxd fpfdRlk

- पाचन तंत्र के प्रमुख रोग
- पाचन तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा
- मूत्रवह तंत्र से सम्बन्धित प्रमुख रोग
- मूत्ररोगों की यौगिक चिकित्सा
- प्रजनन रोगों की यौगिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 8 eLdqyk&LdqyVy lc/kh jkx ,o ;kfxd fpfdRlk

- पेशीय तंत्र के प्रमुख रोग
- मांसपेशियों में दर्द और जकड़न की यौगिक चिकित्सा
- अस्थि तंत्र से सम्बन्धित प्रमुख रोग
- अस्थि रोगों की यौगिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 9 rf=dk rU= lEcU/kh jkx ,o ;kfxd fpfdRlk

- तंत्रिका तंत्र के प्रमुख रोग
- तंत्रिका तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 10 ;kx ,o LokLF;

- स्वास्थ्य की अवधारणा
- स्वस्थवृत, दिनचर्या एवं रात्रिचर्या
- ऋतुचर्या

bdkbl ¼;fuV½ & 11 O;kogkfjd euksfoKku

- व्यावहारिक मनोविज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएँ
- व्यावहारिक मनोविज्ञान की परिभाषाएँ
- व्यावहारिक मनोविज्ञान का इतिहास एवं विकास
- व्यावहारिक मनोविज्ञान के क्षेत्र

bdkbl ¼;fuV½ & 12 O;fDrRo dh vo/kkj.kk

- व्यक्तित्व की अवधारणा
- व्यक्तित्व के निर्धारक (Determinants of Personality)

bdkbl ¼;fuV½ & 13 euksoKkfud leL;k,¡ ,o ;kfxd icU/ku

- स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ
- चिंता एवं अवसाद, लक्षण, कारण एवं यौगिक प्रबंधन

bdkbl ¼;fuV½ & 14 O;lu ,o eknd inkFkk dk diHkko vkj efDr

- व्यसन
- मादक पदार्थों का दुष्प्रभाव
- व्यसन मुक्ति के लिए यौगिक प्रबंधन

bdkbl ¼;fuV½ & 15 thou'kyh lEcf/kr jkx ,o mudh ;kfxd fpfdRlk

- जीवनशैली जनित रोगों का सामान्य परिचय
- हृदय रोग
- मानसिक तनाव (Stress) का सामान्य परिचय एवं लक्षण
- मधुमेह रोग (Diabetes)
- मोटापा रोग (Obesity) का सामान्य परिचय एवं लक्षण
- थायरॉयड सम्बन्धी रोगों का सामान्य परिचय एवं लक्षण
- जीवनशैली जनित रोगों की यौगिक चिकित्सा
- महत्वपूर्ण सुझाव

l:)kfUrd fo"k; & 2 % ikÑfrd fpfdRlk & 818

bdkbZ ¼;fuV½ & 1 LokLF; vkj jksx

- स्वास्थ्य की अवधारणा
- रोग
- रोग उत्पन्न होने के मुख्य कारण
- प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तानुसार, रोग का वर्गीकरण

bdkbZ ¼;fuV½ & 2 jksxh dh ijh{kk ¼tkp½

- रोगी का इतिवृत्त (Case History of Patient) लेने की विधि
- रोगी का इतिवृत्त लेना
- रोगी की परीक्षा (जांच) की विभिन्न विधियां

bdkbZ ¼;fuV½ & 3 fpfdRlk ,oa fofHkUu fpfdRlk i)fr;k

- चिकित्सा का अर्थ
- चिकित्सा का लक्ष्य
- चिकित्सा के विभिन्न भेद और विधियां
- चिकित्सा के परिपेक्ष्य में विभिन्न चिकित्सा पद्धतियाँ
- चिकित्सक के कर्त्तव्य
- सहायक चिकित्सक (परिचारक) के कर्त्तव्य
- रोगी एवं पारिवारिक सदस्यों के कर्त्तव्य

bdkbZ ¼;fuV½ & 4 vkdk'k rRo fpfdRlk fofHkUu fof/k;k¡ ,oa vuq;kx

- आकाश तत्व एवं इसकी महत्त्वता
- उपवास
- कल्प
- विश्राम
- प्रगाढ़ निद्रा
- प्रसन्नता

bdkbZ ¼;fuV½ & 5 ok;q rRo fpfdRlk] fofHkUu fofèk;k¡ ,oa vuq;kx

- वायु तत्व एवं इसकी महत्त्वता
- वायु तत्व चिकित्सा– परिचय, इतिहास तथा विभिन्न विधियां
- मर्दन या मालिश
- व्यायाम, अर्थ, उद्देश्य और आवश्यकता

bdkbZ ¼;fuV½ & 6 vfXu rRo fpfdRlk fofHkUu fof/k;k¡ ,oa vuqi;kx

- अग्नि तत्व चिकित्सा एवं महत्व
- प्रकाश विश्लेषण एवं रंग चिकित्सा
- सूर्य/धूप स्नान चिकित्सा
- सूर्य की सप्त रश्मियों द्वारा चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 7 ty rRo fpfdRlk fofHkUu fof/k;k ,o vuç;kx

- जल तत्व चिकित्सा एवं महत्त्व
- जल चिकित्सा का अर्थ, परिभाषा और इतिहास
- जल तत्व चिकित्सा की विभिन्न विधियां एवं अनुप्रयोग
- जल चिकित्सा में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार की पट्टियां एवं लपेट
- सम्पूर्ण गीली चादर लपेट
- ठन्डे जल के आतंरिक प्रयोग

bdkbl ¼;fuV½ & 8 iFoh rRo fpfdRlk fofHkUu fof/k;k ,o vuç;kx

- चिकित्सीय दृष्टि में पृथ्वी तत्व एवं इसकी महत्वता
- मिट्टी चिकित्सा का अर्थ एवं परिभाषा
- मिट्टी के विभिन्न प्रकार तथा चिकित्सा में उपयोगिता
- पृथ्वी तत्व चिकित्सा की विभिन्न विधियां और उनके अनुप्रयोग

bdkbl ¼;fuV½ & 9 L=h jkxk e çk—frd fpfdRlk icU/ku

- महिला स्वास्थ्य – परिचय
- महिलाओं में सामान्य रोग
- सामान्य स्त्री रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा
- महिलाओं की मासिक धर्म की प्रमुख समस्याएं
- गर्भावस्था एवं प्रसवोत्तर अवस्था की समस्याएं
- रजोनिवृत्ति अवस्था की समस्याएं

bdkbl ¼;fuV½ & 10 cky jkxk e ikÑfrd fpfdRlk

- बाल रोगों का परिचय एवं कारण
- बाल रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 11 'olu ,o ân; lcU/kh j¨x¨ dh ikÑfrd fpfdRlk

- श्वसन तंत्र संबंधी रोगों का सामान्य परिचय एवं कारण
- श्वसन तंत्र रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा
- हृदय सम्बन्धित प्रमुख रोगों के कारण
- हृदय रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 12 ikpu vkj mRltu o ituu r= lcU/kh jkxk dh ikÑfrd fpfdRlk

- पाचन तंत्र संबधी रोगों का सामान्य परिचय एवं कारण
- पाचन तंत्र के रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा
- उत्सर्जन व–प्रजनन से सम्बन्धित प्रमुख रोगों का परिचय
- मूत्र–जनन से सम्बन्धित रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 13 eLdyk&LdyVy flLVe lcU/kh jkxk dh ikÑfrd fpfdRlk

- मस्कुलो–स्केलेटल सिस्टम संबंधी रोगों का सामान्य परिचय एवं कारण
- मस्कुलोस्केलेटल तंत्र के रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 14 rf=dk rU= lEcU/kh jkxk ,o ikÑfrd fpfdRlk
- तंत्रिका तंत्र के प्रमुख रोगों का सामान्य परिचय एवं कारण
- तंत्रिका तंत्र के रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 15 thou'kyh lEcf/kr jkx ,o mudh çk—frd fpfdRlk
- जीवनशैली सम्बंधित रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

bdkbl ¼;fuV½ & 16 dkjkuk jkx ls cpko] jkdFkke ,o mipkj
- कोरोना रोग का सामान्य परिचय
- कोरोना रोग से बचाव, रोकथाम एवं उपचार
- महत्वपूर्ण सुझाव

l)kfUrd fo"k; & 3 ½ vU; ikphu ikÑfrd fpfdRlk i)fr;k & 819

bdkbl ¼;fuV½ & 1 çkphu çk—frd fpfdRlk i)fr;k dh voèkkj.kk ,o oKkfudrk
- प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियों की अवधारणा
- पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों के मूलभूत सिद्धांत
- पारंपरिक प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के वैज्ञानिक पहलू
- पूरक चिकित्सा एवं आधुनिक चिकित्सा का तुलनात्मक अध्ययन

bdkbl ¼;fuV½ & 2 fofHkUu çdkj dh ijd fpfdRlk i)fr;k
- पूरक चिकित्सा एवं वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति
- विभिन्न पारम्परिक प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियों का विवरण
- पारम्परिक प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियों के लाभ, महत्व एवं सीमाएं

bdkbl ¼;fuV½ & 3 ,D;ik'kj fpfdRlk i)fr
- एक्युप्रेशर चिकित्सा का परिचय
- एक्युप्रेशर का अर्थ एवं परिभाषा
- एक्युप्रेशर चिकित्सा का इतिहास
- एक्युप्रेशर चिकित्सा पद्धति के लाभ, सीमाएं एवं सावधानियां

bdkbl ¼;fuV½ & 4 ,D;çk'kj fpfdRlk ds fl)kr] fof/k o fofHkUu midj.k
- एक्युप्रेशर चिकित्सा के सिद्धांतों का परिचय
- एक्युप्रेशर चिकित्सा की विधि
- एक्युप्रेशर चिकित्सा से सबंधित उपकरण
- मानव शरीर के मुख्य एक्यु प्वाइंट्स एवं उनके कार्य

bdkbl ¼;fuV½ & 5 ,D;ik'kj fpfdRlk }kjk thou'kyh ls lcf/kr jkxk dk mipkj
- सर्वाइकल स्पोंडलाइटिस
- स्लिप डिस्क
- पीठ दर्द
- सिरदर्द
- मांसपेशियों में दर्द एवं जकड़न
- घुटनों में दर्द
- तनाव (स्ट्रैस)
- उच्च रक्तचाप (हाई बीपी)

- निम्न रक्तचाप – (लो ब्लड प्रेशर)
- मधुमेह
- थायरॉइड
- मोटापा
- नेत्र संबंधी सामान्य रोग
- मोतियाबिन्द

bdkb ¼;fuV½ & 6 ,D;i'kj fpfdRlk }kjk fofHkUu jkxk d mipkj
- पाचन संबंधी बीमारियों एवं एक्युप्रेशर चिकित्सा द्वारा उनका उपचार
- श्वसन संबंधी बीमारियां
- तंत्रिका तंत्र संबंधी बीमारियां
- मूत्रजनन विकार

bdkb ¼;fuV½ & 7 pEcd fpfdRlk i)fr ¼eXuV Fkjih½
- चुम्बक चिकित्सा की अवधारणा
- चुम्बक चिकित्सा का इतिहास
- चुम्बक चिकित्सा के लाभ एवं उपयोगिताएं
- चुम्बक चिकित्सा के दौरान सावधानियां एवं सीमाएं

bdkb ¼;fuV½ & 8 pEcd fpfdRlk d fl)kr
- चुम्बक चिकित्सा का सामान्य परिचय
- चुम्बकीय चिकित्सा करने की विधि एवं इसका प्रभाव
- चुम्बकीय चिकित्सा के सिद्धांत

bdkb ¼;fuV½ & 9 pEcd fpfdRlk vkj lcf/kr midj.k
- चुम्बक चिकित्सा का संक्षिप्त परिचय
- चुम्बक चिकित्सा में उपयोग किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के चुम्बक (मैग्नेट)
- चुम्बक चिकित्सा से संबंधित विभिन्न यंत्र उपकरण एवं अन्य साधन
- मैग्नेट थेरेपी का सही समय
- गुणों के आधार पर चुम्बक का परिचय

bdkb ¼;fuV½ & 10 fofHkUu jkx ,o pEcd fpfdRlk
- चुम्बक चिकित्सा का उपचारात्मक पहलू
- चुम्बक चिकित्सा पद्धति से रोगों का उपचार

bdkb ¼;fuV½ & 11 ;K fpfdRlk i)fr
- यज्ञ चिकित्सा का परिचय एवं अवधारणा
- मंत्र
- यज्ञ के प्रकार
- यज्ञ चिकित्सा की विधियां और विशेषताएं
- समिधाओं का चुनाव और उनका विशेष दहन

bdkb ¼;fuV½ & 12 ;K fpfdRLkk }kjk jkxkipkj
- यज्ञ चिकित्सा द्वारा रोगों का उपचार
- यज्ञ चिकित्सा का महत्त्व एवं लाभ

- यज्ञ चिकित्सा की सीमाएं एवं सावधानियां
- यज्ञ में आहुति देने के समय उपयोग की जाने वाली हस्त मुद्रायें

bdkbl ¼;fuV½ & 13 emk fpfdRlk i)fr

- मुद्रा चिकित्सा विज्ञान की अवधारणा
- मुद्रा का अर्थ एवं परिभाषा
- मुद्रा विज्ञान का इतिहास
- मुद्रा विज्ञान का महत्त्व एवं लाभ
- सीमाएं और सावधानियां

bdkbl ¼;fuV½ & 14 emk fpfdRlk foKku dk fl)kr

- मुद्रा चिकित्सा विज्ञान के सिद्धांतों का परिचय
- मुद्रा चिकित्सा विज्ञान के प्रमुख सिद्धांत

bdkbl ¼;fuV½ & 15 emk fpfdRlk dh fofHkUu emk,a ,o mudh fof/k;k

- विभिन्न प्रकार की मुद्राओं का परिचय
- विभिन्न मुद्राएं एवं उनकी विधियां

bdkbl ¼;fuV½ & 16 fpfdRlk e mi;kxh fofHkUu emk,a ,o mudk ykHk

- मुद्राएं एवं चिकित्सा
- विभिन्न प्रकार की मुद्राएं उनके लाभ एवं उपयोगिता
- विभिन्न मुद्राओं द्वारा रोगोपचार

fo"k; & 4 % ;kfxd fpfdRlk ¼ik;kfxd½ & 820

fo"k; & 5 % ikÑfrd fpfdRlk ¼ik;kfxd½ & 821

fo"k; & 6 % vU; ikphu ikÑfrd fpfdRlk i)fr;k ¼ik;kfxd½ & 822

---

funsZ'k dk ek/;e%

निर्देश का माध्यम हिंदी और अंग्रेजी

vuqn'k ;kstuk%

- स्व–निर्देशित मुद्रित सामग्री
- एवीआई/अध्ययन केन्द्रों पर सम्पर्क कक्षाओं एवं व्यावहारिक–प्रशिक्षण की सुविधा
- श्रव्य–दृश्य सामग्री

eY;kdu vkj çek.ku dh ;kstuk

पाठ्यक्रम के दोनों घटकों (सैद्धान्तिक और व्यावहारिक) का मूल्यांकन किया जाएगा। अंतिम परिणाम की गणना करते समय आंतरिक आंकलन और इंटर्नशिप को भी ध्यान में रखा जाएगा। आकलन, मूल्यांकन और प्रमाणन की योजना एनआईओएस द्वारा डिजाइन दिशा–निर्देशों के माध्यम से कार्यान्वित की जाएगी। एनआईओएस अपने नियमों और विनियमों के अनुसार अंतिम प्रमाणपत्र प्रदान करेगा।

Ø-l-	çkÑfrd fpfdRlk ,oa ;kx foKku esa fMIyksek ikB~;Øe	dkslZ dksM	vf/kd vad	le; ¼?kaVs esa½	l=h; dk;Z vf/kd vad	dqy vad
çFke o"kZ						
1	योग का आधारभूत ज्ञान (सैद्धान्तिक)	811	70	3	30	100
2	प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान (सैद्धान्तिक)	812	70	3	30	100
3	मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव (सैद्धान्तिक)	813	70	3	30	100
4	योग अभ्यास (प्रायोगिक)	814	70	3	30	100
5	प्राकृतिक चिकित्सा का व्यावहारिक प्रशिक्षण (प्रायोगिक)	815	70	3	30	100
6	मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान (प्रायोगिक)	816	70	3	30	100
	;ksx					**600**
f}rh; o"kZ						
1	यौगिक चिकित्सा (सैद्धान्तिक)	817	70	3	30	100
2	प्राकृतिक चिकित्सा (सैद्धान्तिक)	818	70	3	30	100
3	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (सैद्धान्तिक)	819	70	3	30	100
4	यौगिक चिकित्सा (प्रायोगिक)	820	70	3	30	100
5	प्राकृतिक चिकित्सा (प्रायोगिक)	821	70	3	30	100
6	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रायोगिक)	822	70	3	30	100
	;ksx					**600**
	इन्टर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य					200
	egk;ksx ¾					**1400**

उत्तीर्णता मापदंड : परीक्षार्थी को सैद्धान्तिक, व्यावहारिक प्रशिक्षण एवं सत्रीय कार्य तीनों में 50–50 प्रतिशत अंक प्राप्त करने होंगे।

ikB~;Øe 'kqYd

पाठ्यक्रम का कुल शुल्क 30,000 रुपये है, जिसमें पाठ्यसामग्री, प्रक्रिया शुल्क आदि सम्मिलित है। परीक्षा में बैठने के लिए परीक्षा शुल्क एनआईओएस के नियमानुसार अलग से देय होगा। प्रवेश के दौरान अभ्यार्थी, प्रथम वर्ष में निर्धारित पाठ्यक्रम शुल्क 15,000 रुपये और द्वितीय वर्ष में 15,000 रुपये जमा करेंगे।

uksV ½ जो अभ्यर्थी सीधे द्वितीय वर्ष में प्रवेश लेंगे, उनके लिए यह पाठ्यक्रम शुल्क 25,000 रुपये होगा।

विषय सूची

1. प्रसिद्ध योगियों का योग में योगदान 1
2. योग क्रिया विज्ञान (फिजियोलॉजी) एवं पंचकोश की अवधारणा 15
3. यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन 31
4. तनाव (स्ट्रैस) में यौगिक प्रबन्धन 47
5. महिलाओं के लिए यौगिक प्रबन्धन 65
6. श्वसन एवं हृदय (कॉर्डियोवेस्कुलर) सम्बन्धी रोग एवं यौगिक चिकित्सा 81
7. पाचन एवं मूत्र–प्रजनन सम्बन्धी रोग एवं यौगिक चिकित्सा 97
8. मस्कुलो–स्केलेटल संबंधी रोग एवं यौगिक चिकित्सा 117
9. तंत्रिका तन्त्र सम्बन्धी रोग एवं यौगिक चिकित्सा 131
10. योग एवं स्वास्थ्य 145
11. व्यावहारिक मनोविज्ञान 167
12. व्यक्तित्व की अवधारणा 179
13. मनोवैज्ञानिक समस्याएँ एवं यौगिक प्रबंधन 195
14. व्यसन एवं मादक पदार्थों का कुप्रभाव और मुक्ति 209
15. जीवनशैली सम्बंधित रोग एवं उनकी यौगिक चिकित्सा 219

1

प्रसिद्ध योगियों का योग में योगदान

प्रिय शिक्षार्थियों, भारतवर्ष का अत्यन्त गौरवमयी अतीत रहा है। हमारे पूर्वजों द्वारा मानव कल्याण के निमित्त अनेक बहुमूल्य निधियाँ दी गयी हैं। इन बहुमूल्य निधियों में योग का स्थान प्रमुख है। योग वह प्राचीन भारतीय दर्शन है, जो आध्यात्मिक अनुशासन के साथ अत्यन्त सूक्ष्म विज्ञान पर आधारित ज्ञान है। योग शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'युज' धातु से हुई है। इस शब्द का मूल अर्थ है- जुड़ना या संयुक्त होना। यहाँ पर शरीर, मन और इन्द्रियों को आत्मा में स्थापित करते हुए आत्मा को परमात्मा के साथ संयुक्त करने के अर्थ में योग शब्द को लिया गया है। आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़कर ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति करते हुये सभी प्रकार के दुखों से मुक्ति प्राप्त करने के अर्थ में योग शब्द को लिया जाता है।

योग सृष्टि के साथ उत्पन्न अत्यन्त प्राचीन ज्ञान है, जिसका मूल वेद है। वेदों में विभिन्न स्थानों पर योग विद्या का उपदेश किया गया है। आगे चलकर इस योगविद्या को सुव्यवस्थित एवं अनुशासित रुप में महर्षि पतंजलि ने योगसूत्रों के रुप में पिरोते हुए 'योगदर्शन' नामक ग्रन्थ की रचना की। इस प्रकार महर्षि पतंजलि ने 195 योगसूत्रों के द्वारा योग के स्वरुप की व्याख्या की। महर्षि पतंजलि द्वारा दिखलाए मार्ग का अनुसरण करते हुए आगे चलकर अन्य विद्वानों के द्वारा योग विद्या के स्वरुप की व्याख्या अलग-अलग दृष्टिकोण से की गयी। महर्षि पतंजलि के उपरान्त मध्यकाल में ऋषियों द्वारा हठयोग के साधनों का उपदेश किया गया और आधुनिक काल में भी विद्वानों द्वारा योग के स्वरुप की व्याख्या की गयी। इस प्रकार वेदों से उत्पन्न ज्ञानगंगा को महर्षि पतंजलि ने दिशा प्रदान की और आगे चलकर ऋषियों और विद्वानों द्वारा पोषित यह विद्या, वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व को लाभान्वित कर रही है।

इस प्रकार अब आपके मन में यह जिज्ञासा अवश्य ही उत्पन्न हुई होगी कि किन-किन योगियों द्वारा किस प्रकार योगविद्या के प्रचार-प्रसार में अपना योगदान दिया गया। अतः प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में हम महर्षि पतंजलि के जीवन दर्शन से प्रारम्भ करते हुए श्री धीरेन्द्र ब्रह्मचारी जी तक के योगियों का, योग के क्षेत्र

में योगदान का अध्ययन करेंगे। यह अध्ययन हमारे लिए एक पथ-प्रदर्शक का कार्य करेगा, जिसके अध्ययन के द्वारा महान योगियों एवं महापुरुषों के जीवन चरित्र एवं योग के क्षेत्र में उनके योगदान से प्रेरणा प्राप्त करते हुए हम सकारात्मक ऊर्जा को ग्रहण कर अपने जीवन को ज्ञानवान, सार्थक एवं आर्दश बना सकते हैं।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप -

- योग के क्षेत्र में महान योगियों के जीवनदर्शन, महत्त्वपूर्ण रचनाओं एवं कार्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे;
- योग के क्षेत्र में उनके योगदान का वर्णन कर सकेंगे और जीवन से अभिप्रेरित होकर अपने जीवन को सन्मार्ग की ओर ले जा सकेंगे।

1-1 ;kx d {k= e egku ;kfx;k d thoun'ku ,o ;kxnku

योग सृष्टि के साथ उत्पन्न अत्यन्त प्राचीन ज्ञान है, जिसका मूल वेद है। वेदों में विभिन्न स्थानों पर योग विद्या का उपदेश किया गया है। आगे चलकर इस योगविद्या को सुव्यवस्थित एवं अनुशासित रुप में महर्षि पतंजलि ने योगसूत्रों के रुप में पिरोते हुए 'योगदर्शन' नामक ग्रन्थ की रचना की। इस प्रकार महर्षि पतंजलि ने 195 योगसूत्रों के द्वारा योग के स्वरुप की व्याख्या की। महर्षि पतंजलि द्वारा दिखलाए मार्ग का अनुसरण करते हुए आगे चलकर अन्य विद्वानों के द्वारा योग विद्या के स्वरुप की व्याख्या अलग-अलग दृष्टिकोण से की गयी। महर्षि पतंजलि के उपरान्त मध्यकाल में ऋषियों द्वारा हठयोग के साधनों का उपदेश किया गया और आधुनिक काल में भी विद्वानों द्वारा योग के स्वरुप की व्याख्या की गयी। आइए हम उन महान योगियों के जीवनदर्शन समझें जिन्होंने योगविद्या के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है।

1-1-1 egf"k irtfy dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

प्रिय शिक्षार्थियों, महर्षि पतंजलि के जीवन परिचय अथवा माता-पिता के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रमाण या उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। महर्षि पतंजलि के विषय में निम्न लोकोक्ति बहुत प्रसिद्ध है–

^;kxu fpÙkL; inu okpk ey 'kjhjL; p o|duA
;k·ikdjkÙk ioj euhuk irtfy ik´tfyjkurk·fLeAA

अर्थात् जिसने चित्त की शुद्धि के लिए योगसूत्र, वाणी की शुद्धि के लिए व्याकरण के ग्रन्थ महाभाष्य तथा शरीर की शुद्धि के लिए चरक संहिता की रचना की। ऐसे मुनिवर पतंजलि को प्रणाम है। इस प्रकार इन तीन श्रेष्ठ ग्रन्थों के रचनाकार के रुप में इनका वर्णन आता है जिन्होंने शरीर, मन और वाणी की शुद्धि हेतु अलग-अलग नामों से तीन महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की है। ये तीनों ही ग्रन्थ अपने क्षेत्र के अद्वितीय ग्रन्थ हुए और इसके पश्चात् इन ग्रन्थों को मूलाधार बनाकर इन क्षेत्रों में बहुत कार्य विद्वानों द्वारा किया गया।

ifl) ;kfx;k dk ;kx e ;kxnku

एक मान्यता के अनुसार महर्षि पतंजलि को शेषनाग का अवतार माना गया है। जबकि, अन्य मान्यता के अनुसार अपने पिता की अंजलि से अर्घ्यदान करते समय उर्ध्वलोक से दिव्यरुप में अंजलि में गिरने के कारण इनका नाम पतंजलि हुआ। आगे चलकर यह योग के श्रेष्ठतम् आचार्य हुए और इन्होंने योगसूत्रों का संकलन करते हुए योगदर्शन नामक ग्रन्थ की रचना की। इस ग्रन्थ में कुल 195 योगसूत्र हैं और यह ग्रन्थ प्रश्नोत्तरात्मक शैली में रचित है अर्थात् पहले स्वयं प्रश्न करने के बाद आगे स्वयं ही उस प्रश्न का उत्तर दिया गया है। ग्रन्थ क्रमशः समाधि, साधन, विभूति और कैवल्य पाद के नाम से चार अध्यायों में विभक्त है।

fp= 1-1 % egf"k ir×tfy

महर्षि पतंजलि ने मनुष्य को संसार रूपी सागर को पार करने के लिए योगसूत्र में तीन प्रकार के साधकों हेतु (उच्च कोटि, मध्यम कोटि और निम्न कोटि) तीन प्रकार की साधनाओं का वर्णन किया। उच्चकोटि के साधकों में वह साधक हुए जिन्होंने पूर्वजन्म में योगसाधना करते हुए सिद्धियाँ प्राप्त कर ली थी किन्तु, वे मोक्ष को प्राप्त नहीं हुए थे अतः उस कोटि के साधकों के लिए महर्षि पतंजलि उपदेश करते हैं-

b'ojif.k/kkuk}kAA

(पा0 योगसूत्र 1/23½

अर्थात् उत्तम कोटि के साधकों को केवल ईश्वर के प्रति समर्पण भाव से ही योगसिद्धि हो जाती है। योगदर्शन ग्रन्थ में मध्यम कोटि के साधकों के लिए महर्षि पतंजलि क्रियायोग का उपदेश करते हुए कहते हैं-

ri% Lokè;k;'ojif.k/kkukfu fØ;k;kx%AA

(पा0 योगसूत्र 2/01½

अर्थात् तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान क्रियायोग है। मध्यम कोटि के योग साधक क्रियायोग के अभ्यास से अपने लक्ष्य (मुक्ति) को प्राप्त कर सकते हैं।

fVIi.kh

इनके साथ-साथ निम्न कोटि के योग साधकों के लिए महर्षि पतंजलि अष्टांग योग की साधना का उपदेश करते हुए कहते हैं-

;efu;ekluizk.kk;keizR;kgkj/kkj.kk/;kulek/k;ks"Vko³xkfuAA

(पा० योगसूत्र 2/29½

अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्टांग योग के आठ अंग हैं। महर्षि पतंजलि योगदर्शन ग्रन्थ में अष्टांग योग के स्वरुप की सविस्तार व्याख्या योगसूत्रों के माध्यम से की है। महर्षि पतंजलिकृत अष्टांग योग को 'राजयोग' की संज्ञा दी जाती है जो सम्पूर्ण विश्व में प्रचलित योग का सबसे प्रमुख प्रकार है। इस प्रकार महर्षि पतंजलि ने योगसूत्रों के रुप सम्पूर्ण विश्व को योगविद्या का ज्ञान प्रदान किया।

1-1-2 vkfn x# 'kdjkpk;Z dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

भारत के महान दार्शनिकों में आदि गुरू शंकराचार्य का विशिष्ट स्थान है। इन्होनें अद्वैत वेदान्त के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए भारतीय संस्कृति को दृढ़ता प्रदान की। इसके साथ उपनिषद्रों और वेदान्त सूत्रों पर सुन्दर टीकाएँ लिखीं। आपने सम्पूर्ण भारतवर्ष में ज्योति पीठ बदरिकाश्रम, श्रृंगेरी पीठ, द्वारिका शारदापीठ और पुरी गोवर्धन पीठ नामक चार मठों की स्थापना की। आपके द्वारा ब्रह्मसूत्रों पर अत्यन्त विशद् और रोचक व्याख्या की गयी है। जब भारतीय संस्कृति और साहित्य का विदेशियों द्वारा हनन किया जा रहा था और कोई रक्षक दिखलाई नहीं पड़ रहा था, ऐसे प्रतिकूल समय में मात्र बत्तीस वर्ष की आयु में आपके द्वारा किये गये कार्य सम्पूर्ण विश्व को चकित करने वाले और भारतीयों के लिए आदर्श के स्रोत हैं।

चित्र 1.2 : आदि गुरू शंकराचार्य

ज्ञान और विद्वता की प्रतिमूर्ति आदि गुरू शंकाराचार्य का जन्म केरल में 788 ई० में कपाली नामक ग्राम में हुआ। इनके पिता शिवगुरु भट्ट और माता का नाम सुभद्रा था। इनके बचपन में ही पिता का देहान्त हो गया। बचपन से ही आदि शंकाराचार्य विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न थे। मात्र छः वर्ष की आयु में प्रकाण्ड पंडित और आठ वर्ष की आयु में संन्यास ग्रहण किया। पूर्वजन्म साधना से प्राप्त ज्ञान के प्रकाश से उपनिषद्रों और वेदान्तसूत्रों पर सुन्दर टीकाओं की रचना करते हुए अद्वैत वेदान्त के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया और

ब्रह्मसूत्रों पर रोचक व्याख्या की। मात्र 32 वर्ष की अल्पायु में सन् 820 में केदारनाथ के समीप आप स्वर्गवासी हो गये किन्तु, आपके महान कार्य सदैव आपको अमर बनाते हैं।

1-1-3 x# xkj{kukFk dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

चित्र 1.3: गुरु गोरक्षनाथ

महायोगी गोरक्षनाथ के जन्म के संबन्ध में विभिन्न विद्वानों द्वारा अलौकिक वृत्तान्तों का संग्रहण मिलता है। इनके जन्म के सम्बन्ध में धारणा है कि अवधूत गुरु मत्स्येन्द्रनाथ भिक्षा के लिए एक गाँव में ब्राह्मण परिवार में जाते हैं। उस घर में ब्राह्मणी सरस्वती देवी को दुःख से व्याकुल देखकर गुरु मत्स्येन्द्रनाथ उसे एक सुन्दर बालक की माता बनने के लिए भस्म देकर उसका सेवन करने के लिए कहकर चले जाते हैं। अवधूत गुरु के जाने पर लोकव्यवहार में शंका से प्रेरित होकर ब्राह्मणी भस्म को गोबर के ढेर में डाल देती है।

बारह वर्ष के पश्चात् जब पुनः एक दिन अकस्मात् वही अवधूत वेषधारी मत्स्येन्द्रनाथ पुनः इसी घर में आते हैं और उस ब्राह्मणी से मिलने पर उसको पूर्ववर्ती घटना का स्मरण कराते हैं तब ब्राह्मणी अवधूत वेशधारी को उसी स्थान पर ले जाती है, जहाँ उसने बारह वर्ष पूर्व वह भस्म फेंक दी थी। योगी की दिव्य साधना से अभिप्रेरित वह भस्म "अलखनिरञ्जन" के शब्द संघात मात्र से ही 12 वर्ष की आयु के सुन्दर गौर वर्ण बालक के रूप में परिणत हो जाता है। तदोपरान्त योगी मत्स्येन्द्रनाथ बालक का नामकरण गोबर से उत्पन्न होने के कारण गोरक्षनाथ रखते हैं और इस बालक को अपने साथ ले जाते हैं। आगे चलकर यही बालक गोरक्षनाथ महायोगी हुए जिन्होंने नाथ सम्प्रदाय द्वारा प्रेरित हठयोग की साधना पद्धति का प्रचार-प्रसार किया तथा 'सिद्धि सिद्धान्त पद्धति' और 'योगबीज' नामक श्रेष्ठ यौगिक ग्रन्थों की रचना की। योग साधना के तपोबल से महायोगी गोरक्षनाथ ने अनेक योगसिद्धियों को प्राप्त किया और सम्पूर्ण विश्व को योगविद्या का अमरज्ञान प्रदान किया।

1-1-4 ;kxh LokRekjkEk dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

गुरु गोरक्षनाथ के प्रसिद्ध शिष्य योगी स्वात्माराम जी हुए। इनके माता-पिता एवं जन्म स्थान के विषय में कोई स्पष्ट प्रमाण अथवा उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। विद्वानों की मान्यता यह है कि योगी स्वात्माराम का काल

14वीं शताब्दी के मध्य से लेकर 16वीं शताब्दी के मध्य का काल है। वास्तव में इस काल में ऋषियों द्वारा हठयोग की विद्या का प्रचार-प्रसार किया गया और इस काल में हठयोग अपने चरम पर रहा। इसी काल में योगी स्वात्माराम ने हठयोग के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हठप्रदीपिका की रचना की।

हठप्रदीपिका ग्रन्थ में योगी स्वात्माराम जी ने योग के चार अंगों-आसन, प्राणायाम, मुद्रा-बन्ध और नादानुसंधान का उल्लेख किया है। इस ग्रन्थ में चार उपदेशों में क्रमानुसार इन चारों अंगों का वर्णन किया गया है। सामान्यतया हठप्रदीपिका में चार उपदेशों के रुप में चार अध्याय माने जाते हैं किन्तु, गलत विधि से योगाभ्यास करने पर शरीर में उत्पन्न आधि-व्याधियों के उपचार के लिए पाँचवें अध्याय यौगिक चिकित्सा का वर्णन भी हठप्रदीपिका ग्रन्थ में प्राप्त होता है। इस ग्रन्थ में योगी स्वात्माराम जी ने सर्वप्रथम आसनों का अभ्यास, तदोपरान्त अष्ठकुम्भकों (प्राणायाम) का अभ्यास और मुद्रा-बन्धों का अभ्यास करते हुए नादानुसंधान की अवस्था को प्राप्त करने का उपदेश किया है। योगी स्वात्माराम जी द्वारा रचित हठप्रदीपिका ग्रन्थ श्रेष्ठतम यौगिक ग्रन्थों में आता है, जिसमें योग के स्वरुप एवं यौगिक क्रियाओं का सविस्तार वर्णन किया गया है। इस प्रकार योगी स्वात्माराम जी द्वारा हठप्रदीपिका ग्रन्थ की रचना करते हुए योग विद्या के प्रचार-प्रसार का कार्य किया गया।

1.1.5 Lokeh n;kuUn ljLorh thou ifjp; ,oa ;ksx dk {ks= esa ;ksxnku

आधुनिक भारत के महान चिन्तक-विचारक, समाज सुधारक, राष्ट्रभक्त क्रान्तिकारी और आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती उन महापुरुषों में हैं जिन्होंने समाज सुधार और राष्ट्रसेवा में अपना सर्वत्र न्यौछावर कर दिया। महर्षि दयानन्द का जन्म गुजरात प्रान्त के 'टंकारा' नामक ग्राम में भाद्र मास की कृष्ण नवमी के दिन सन् 1824 ई. को हुआ। आपके बचपन का नाम मूलशंकर था। इनके पिता श्री कृष्णजी तिवारी और माता का नाम अमृताबाई था। बचपन से ही वैराग्य की भावना से युक्त बालक मूलशंकर सच्चे शिव की तलाश में घर छोड़कर निकल गये और स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से सन्यास की दीक्षा तथा यमुना किनारे मथुरा के गुरुकुल में प्रज्ञानचक्षु (अन्धे) गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती से वेदों के गूढ़ ज्ञान का साक्षात्कार किया।

चित्र 1.4 : स्वामी दयानन्द सरस्वती

इसके उपरान्त स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन वैदिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार एवं समाज सुधार में लगाया। इन्होंने सन् 1875 में मुम्बई में 'आर्य समाज' की स्थापना की। इन्होंने श्रेष्ठ कर्म करने वाले जनों को आर्य विशेषण दिया जो जातिवाचक ना होकर कर्मसूचक शब्द था और व्यक्ति के श्रेष्ठ गुणों का परिचायक था। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश, गौकरुणानिधि, व्यवहारभानू और आर्यअभिनव आदि श्रेष्ठ ग्रन्थों की रचना की। आपने वेदों के गूढ़ मंत्रों का सरल भाष्य करते हुए 'वेदों की ओर लौट चलो' का नारा दिया और सामाजिक कुप्रथाओं का घोर विरोध किया। आपने समाज में फैले अज्ञानता के अंधकार

को मिटाने के लिए शिक्षा पर बल दिया और समाज में लड़के-लड़कियों दोनों के लिए समान रूप से गुरुकुलों की स्थापना करवाई। वर्तमान समय में डी0ए0वी0 के नाम से संचालित हो रही संस्थाओं की मूल स्थापना स्वामी दयाननद सरस्वती जी द्वारा की गयी। आप ईश्वर को समर्पित होकर नित्य यौगिक क्रियाओं का अभ्यास (योगाभ्यास) करते थे। इनके रसोईये द्वारा धोखे से दूध में जहर देने के प्रभाव से सन् 1883 में कार्तिक मास की अमावस्या को स्वामी दयानन्द जी ने संध्या के समय ध्यानावस्था में बैठकर वेदमन्त्रों के उच्चारण के साथ 'प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो' यह कहकर इस नश्वर शरीर को त्याग दिया परन्तु, आपका महान व्यक्तित्व और प्रेरणाप्रद जीवन दर्शन सदैव युवाओं के लिए आदर्श प्रस्तुत करता रहेगा।

1-1-6 Lokeh foodkuUn thou ifjp; ,oa ;kx d{k= e ;kxnku

चित्र 1.5 : स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द जी भारतीय नवजागरण के आन्दोलनों के सूत्रधार रहे। आपने भारत के साथ-साथ सम्पूर्ण विश्व धरातल पर भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता का प्रचार-प्रसार किया। स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी 1863 ई. को कलकत्ता शहर के मुखर्जी परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री विश्वनाथ और माता का नाम श्रीमती भुवनेश्वरी देवी था। आपका बचपन का नाम नरेन्द्र नाथ था।

नरेन्द्र नाथ बचपन से ही विलक्षण प्रतिभाओं से सम्पन्न थे और बाल्यावस्था में ही साधु-संन्यासियों की ओर आकृष्ट होकर इनसे काफी प्रभावित होते थे। बालक नरेन्द्र में पूर्व जन्म के ध्यान और योगसाधना के संस्कार विद्यमान थे। इसका पता उनके बाल्य जीवन की विभिन्न घटनाओं से प्राप्त होता है। ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने की प्रगाढ़ जिज्ञासा में उनकी भेंट सन् 1880 में स्वामी रामकृष्ण परमहंस से हुई। पहली ही भेंट में स्वामी रामकृष्ण परमहंस समझ चुके थे कि यह कोई साधारण मनुष्य नहीं है। नरेन्द्र भी स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी से मिलकर अति प्रसन्न थे क्योंकि, वे जानते थे कि उन्हें अब सद्गुरु मिल गया है। गुरु परमहंस जी की कृपा से स्वामी विवेकानन्द जी का अभ्यास और वैराग्य दृढ़ होता चला गया जिससे ये निर्विकल्प समाधि तक पहुँच गए।

गुरु ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु स्वामी विवेकानन्द जी श्रीलंका, सिंगापुर, हांगकांग, नागासाकी, ओसाका और टोकियो आदि देशों में होते हुए कनाड़ा गये और वहाँ से शिकागो पहुँचे। जहाँ विश्व धर्म सम्मेलन में स्वामी जी ने भारतवर्ष का प्रतिनिधित्व किया। 11 सितम्बर 1893 ई. के ऐतिहासिक दिन भारत के इस महान् सन्त ने सभी धर्म प्रतिनिधियों को अमेरिका की धरती पर हिलाकर रख दिया। इस सभा में अपने अलिखित ओजस्वी भाषण में स्वामी विवेकानन्द जी ने सम्पूर्ण विश्व पर भारतीय संस्कृति की अमिट छाप छोड़ी। इसके उपरान्त स्वामी विवेकानन्द जी ने वापिस भारत में आकर अपने गुरु के नाम से 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना की, जिसका मुख्य उद्देश्य वेदान्त प्रचार व लोक सेवा करना है। अत्यधिक परिश्रम के कारण स्वामी जी का स्वास्थ्य गिरने लगा। इन दिनों में वे अक्सर समाधि में लीन रहते थे और अन्ततः मात्र 39 वर्ष की अल्पायु में 04 जुलाई 1902 को यह महान सन्त सदैव के लिए समाधि में लीन हो गया। आपकी स्मृति और प्रेरणा से आपके जन्मदिवस (12 जनवरी) को सम्पूर्ण विश्व में 'विश्वयुवादिवस' के रूप में मनाया जाता है।

1-1-7 Lokeh f'kokuUn ljLorh dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

स्वामी शिवानन्द सरस्वती वेदान्त दर्शन के महान आचार्य हुए। कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग और राजयोग की साधना में आपकी दृढ़ आस्था थी और आपने सम्पूर्ण विश्व को इनका दर्शन कराते हुए इनका प्रचार-प्रसार किया। स्वामी शिवानन्द सरस्वती का जन्म दक्षिणी भारत के तमिलनाडु राज्य में 8 सितम्बर 1887 में हुआ। आपका बचपन का नाम कूप्पू स्वामी था और आप बचपन से ही बहुत कुशाग्र बुद्धि थे। आपने एम0 बी.बी.एस. की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त मलाया देश में जाकर रोगियों की सेवा की।

चित्र 1.6 : स्वामी शिवानन्द सरस्वती

इसके उपरान्त स्वामी शिवानन्द सरस्वती सन् 1924 में ऋषिकेश आ गये। यहाँ पर कठोर आध्यात्मिक साधना का तप करने के उपरान्त ऋषिकेश में सन् 1932 में शिवानन्द आश्रम और सन् 1936 में दिव्य जीवन संघ की स्थापना की। इसके साथ-साथ स्वामी जी ने 'बिहार स्कूल ऑफ योगा' की मुंगेर में स्थापना की। इनका मूल उद्देश्य दीन-दुखियों की सेवा करना और योग विद्या का प्रचार-प्रसार करना है। स्वामी शिवानन्द ने अध्यात्म, दर्शन और योग पर लगभग 300 पुस्तकों की रचना की। जो भी आपके सम्पर्क में आता, आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व से अवश्य ही प्रभावित हो जाता था। साधकों के लिए निशुल्क योग शिक्षा, अखण्ड जप, निशुल्क आवास और भोजन की व्यवस्था आपने करवाई। इस प्रकार स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी ने योग के प्रचार–प्रसार में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत वर्ष के साथ-साथ विदेशों में भी स्वामी जी ने योग विद्या का प्रचार-प्रसार किया और इनके अनेक शिष्यों ने सम्पूर्ण विश्व में योगविद्या के ज्ञान की अलख जगाई। सन् 1963 में आप इस नश्वर देह का त्यागकर ईश्वरीय सत्ता में विलीन हो गये।

1-1-8 Lokeh lR;kuUn dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी के शिष्य स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म 23 दिसम्बर सन् 1923 को उत्तराखण्ड के अल्मोड़ा शहर में पूर्णिमा के दिन हुआ था। आप भारतवर्ष के प्रसिद्ध सन्यासी, योगगुरु और

आध्यात्मिक गुरु हुए। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी के द्वारा सन् 1956 में 'अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल' (फेलोशिप) और सन् 1963 में 'बिहार योग विद्यालय' की स्थापना की गयी। स्वामी जी ने योग के सम्बन्ध में 80 से भी अधिक पुस्तकों की रचना की।

चित्र 1.7 : स्वामी सत्यानन्द

वर्तमान समय में विश्व प्रसिद्ध पुस्तक 'आसन प्राणायाम मुद्राबन्ध' के रचयिता हैं। इस पुस्तक का संसार की अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है और इसमें यौगिक क्रियाओं को बहुत सरलता से एवं विस्तारपूर्वक समझाया गया है। अपने साहित्य लेखन एवं प्रवचनों के द्वारा स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी ने योगविद्या का सम्पूर्ण विश्व में प्रचार-प्रसार किया।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी ने मात्र 18 वर्ष की आयु में गृह त्याग कर दिया और 19 वर्ष की आयु में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी के सम्पर्क में आ गये। परिवाज्रक की दीक्षा लेकर इन्होनें अनेक देशों का भ्रमण करते हुए योग विद्या का प्रचार-प्रसार किया। आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व और ओजस्वी प्रवचनों ने जनसामान्य पर बहुत गहरी छाप डाली और आपके भारत से लेकर विदेशों तक बहुत अनुयायी और शिष्य बनें। सन् 1988 में सब कुछ त्यागकर सन्यास ग्रहण कर लिया और रिखिया (झारखंड) नामक स्थान पर आकर उच्च यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करते हुए एकान्तवास किया। 05 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में आप नश्वर शरीर का त्याग करते हुए महासमाधि में लीन हो गये परन्तु, आपके द्वारा दिया ज्ञान और किया कार्य सदैव आपको अमरता प्रदान करता है।

1-1-9 Lokeh dqoY;kuUn dk thou ifjp; ,oa ;kx d {k= e ;kxnku

योग पर वैज्ञानिक अनुसंधान के जनक रुप में स्वामी कुवल्यानन्द जी का नाम सदैव स्मरण होता है। आपने यौगिक क्रियाओं के वैज्ञानिक प्रयोग की परम्परा को जन्म दिया। स्वामी कुवल्यानन्द जी का जन्म 13 अगस्त सन् 1883 को बड़ौदा जिले के मराठी परिवार में हुआ। आप बचपन मे एक मेधावी छात्र थे और संस्कृत में अग्रीण रहते थे। विद्यार्थी जीवन में आप लोकमान्य तिलक और श्री अरविन्द जी के विचारों से बहुत प्रभावित थे। आपने सन् 1919 में अपने गुरु परमहंस माधवदास जी के सम्पर्क में आने के पश्चात् योग क्रियाओं के गुप्त रहस्यों को गहराई से जाना और यौगिक क्रियाओं को जन-मानस तक पहुँचानें का अपना ध्येय बनाया।

चित्र 1.8 : स्वामी कुवल्यानन्द

स्वामी कुवल्यानन्द जी ने यौगिक क्रियाओं के शरीर पर प्रभाव का वैज्ञानिक प्रयोगात्मक अध्ययन प्रारम्भ किया। स्वामी जी ने

fVIi.kh

एक्स रे तथा अन्य शरीर की क्रियाओं का अध्ययन करने वाली मशीनों की सहायता से आसनों, प्राणायामों, बन्धों एवं यौगिक मुद्राओं के प्रभावों का प्रयोगात्मक अध्ययन प्रारम्भ किया। इसके लिए स्वामी जी ने सन् 1924 में महाराष्ट्र में लोनावला नामक स्थान पर 'कैवल्यधाम' नामक संस्था की स्थापना की। यहीं से स्वामी कुवल्यानन्द जी ने प्राप्त परिणामों को जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए 'योग मीमांसा' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इसका काफी प्रचार-प्रसार हुआ और इसके उपरान्त सन् 1943 में गुजरात के राजकोट शहर में कैवल्यधाम संस्था की शाखा स्थापित की गयी। इस प्रकार स्वामी कुवल्यानन्द जी ने यौगिक क्रियाओं के मानव शरीर पर प्रभाव का वैज्ञानिक अध्ययन किया, जिससे योग विद्या के वैज्ञानिक प्रचार-प्रसार में सहायता मिलने के साथ योग को एक नई दिशा प्राप्त हुई। इस महान कार्य के लिए स्वामी कुवल्यानन्द जी द्वारा किये प्रयास सदैव स्मरणीय रहेंगे। 18 अप्रैल 1966 को स्वामी कुवल्यानन्द जी ने पचंभौतिक शरीर का त्याग करते हुए इस संसार से महापरायण किया परन्तु, आपके द्वारा स्थापित संस्थाएं आज भी योग चिकित्सा एवं यौगिक प्रशिक्षण का कार्य सुचारु रुप से कर रहीं हैं।

1-1-10 egf"k vjfoUnk dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

विश्वविख्यात योगी और दार्शनिक महर्षि अरविन्द घोष का जन्म 15 अगस्त सन् 1872 में कलकत्ता में हुआ। इनकी माता का नाम श्रीमती स्वर्णलता और पिता का नाम श्री कृष्णघन घोष था। महर्षि अरविन्द घोष की बौद्धिक क्षमता अद्वितीय थी और इन्होंने इंग्लैण्ड में जाकर शिक्षा ग्रहण की और अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। इन्होंने इण्डियन सिविल सर्विस (आई.सी.एस.) की परीक्षा उत्तीर्ण की। परन्तु, भारत में आकर क्रान्तिकारी विचारधारा के प्रभाव में आने के उपरान्त महर्षि अरविन्द ने राजनैतिक क्रियाकलापों में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया और भारतमाता की स्वाधीनता के लिए प्रयास करने लगे। भारत के स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने के लिए इन्हें अंग्रेज़ों द्वारा एक वर्ष अलीपुर जेल में डाल दिया गया। परन्तु, जेल में रहते हुए भी महर्षि अरविन्दों ने गीता और उपनिषदों आदि आध्यात्मिक ग्रन्थों का अध्ययन, मनन-चिन्तन किया और ध्यान आदि यौगिक क्रियाओं का अभ्यास किया। जिससे इन्हें आत्मज्ञान की प्राप्ति हुई और ईश्वर के दिव्य स्वरुप का साक्षात्कार प्राप्त हआ। यहीं से महर्षि अरविन्दो को महान आध्यात्मिक लक्ष्य को पूरा करने की अन्तःप्रेरणा प्राप्त हुई। इसके उपरान्त इन्होंने अपना पूरा ध्यान योग के आध्यात्मिक क्षेत्र में लगाया।

चित्र 1.9 : महर्षि अरविन्दो

महर्षि अरविन्दो ने पोण्डिचेरी में विशाल 'अरविन्दो आश्रम' की स्थापना की। महर्षि अरविन्दो ने यौगिक और आध्यात्मिक ग्रन्थों की रचना की। इनकी रचनाओं में लाईफ डिवाईन, सावित्री, योगसमन्वय नामक प्रमुख हैं। महर्षि अरविन्दो जी ने अपने आश्रम में अनेक योग साधकों को योगविद्या का ज्ञान प्रदान किया। 05 दिसम्बर सन् 1950 को महर्षि अरविन्द घोष का स्वर्गवास हो गया परन्तु, आपके द्वारा स्थापित आश्रम में योगविद्या का प्रचार-प्रसार सम्पूर्ण विश्व में अविरल रूप से प्रवाहित हो रहा है।

1-1-11 ch-d-,l- v;xj dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

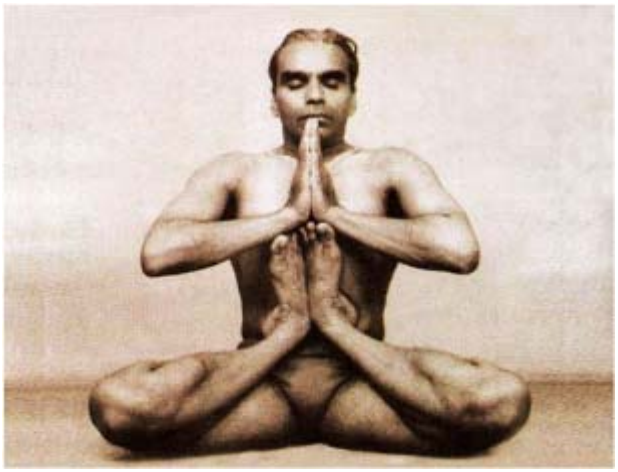

fVIi.kh

चित्र 1.10 : बी.के.एस. अयंगर

बी.के.एस. अयंगर का पूरा नाम बेल्लूर कृष्णमचारी सुन्दरराज अयंगर है। यह आधुनिक भारत के विश्वप्रसिद्ध योगाचार्य हुए, जिन्हें कुछ विद्वान 'आधुनिक योग के जनक' के रूप में मानते हैं। इनके द्वारा स्थापित 'अयंगर योग' सम्पूर्ण विश्व में बहुत प्रसिद्ध हुआ। इनके साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में किए योगदान को देखते हुए भारत सरकार द्वारा सन् 2002 में पद्म भूषण और वर्ष 2014 में पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया। विश्व की मशहूर 'टाइम्स पत्रिका' में वर्ष 2004 में सम्पूर्ण विश्व के सबसे प्रभावशली 100 व्यक्तियों की सूची में बी.के.एस. अयंगर को शामिल किया गया था।

बी.के.एस. अयंगर का जन्म 14 दिसम्बर सन् 1918 को कर्नाटक राज्य के वेल्लूर नामक स्थान पर एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। आप बाल्यावस्था में मलेरिया, टॉयफाइड और टी.बी. जैसे गंभीर रोगों से पीड़ित हो गये थे, परन्तु, मात्र 16 वर्ष की आयु में इन्होंने अपने गुरु टी. कृष्णमाचार्य से योग की शिक्षा ग्रहण करते हुए इन गंभीर रोगों से मुक्ति प्राप्त की और इसके उपरान्त योग को अपना जीवन लक्ष्य बनाया। इन्होंने हठयोग की कठिन क्रियाओं पर सिद्धि स्थापित करने का प्रयास किया। बी0 के0 एस0 अयंगर स्वयं कठिन योगाभ्यास करते और अपने शिष्यों को इनके लिए अभिप्रेरित करते थे। इन्होंने भारत के साथ-साथ यूरोप के देशों में भी योग विद्या का प्रचार-प्रसार किया। इन्होंने सम्पूर्ण विश्व में 'अयंगर योग' की स्थापना की। इनके अभ्यास क्रम से प्रभावित होकर सम्पूर्ण विश्व में इनके शिष्यों की संख्या दिनों-दिन बहुत तेज़ी से बढ़ती चली गयी। इन्होंने यौगिक क्रियाओं के अभ्यास के साथ लेखन कार्य भी किया। इनके द्वारा रचित पुस्तक 'लाइट ऑन योगा' सम्पूर्ण विश्व में बहुत प्रसिद्ध हुई जिसका विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद किया गया। वर्तमान समय में भी यह पुस्तक अनेक योग साधकों का मार्गदर्शन करती है। इसके साथ-साथ बी0 के0 एस0 अयंगर ने योगा प्रैक्टिसेज, लाइट ऑन प्राणायाम, लाइट ऑन दा योगसूत्र ऑफ पतंजलि आदि प्रमुख पुस्तकों की भी रचना की।

यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से गंभीर रोगों से मुक्त होकर दीर्घ और स्वस्थ आयु को प्राप्त करते हुए 20 अगस्त सन् 2014 में पुने (महाराष्ट्र) में बी0 के0 एस0 अयंगर जी ने नश्वर देह का त्याग करते हुए महासमाधि प्राप्त की।

fVIi.kh

1-1-12 egf"k eg'k ;kxh dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

चित्र 1.11 : महर्षि महेश योगी

सम्पूर्ण विश्व में योगविद्या का प्रचार-प्रसार करने वाले महान योगियों में महर्षि महेश योगी का बहुत विशिष्ट स्थान है। महर्षि महेश योगी जी का जन्म 12 जनवरी 1918 में छत्तीसगढ़ राज्य के पांडुका गाँव में हुआ था। आपका बचपन का नाम महेश प्रसाद वर्मा था और बचपन से ही आपका आध्यात्मिकता की ओर विशेष झुकाव रहता था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त महर्षि महेश योगी ने अपना जीवन पूर्ण रुप से आध्यत्मिकता के साथ जोड़ लिया। ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती जी आपके आध्यात्मिक गुरु रहे।

महर्षि महेश योगी ने दो वर्ष हिमालय पर्वत पर जाकर मौन साधना का तप किया और इसके उपरान्त 'भावातीत ध्यान' का प्रतिपादन किया। महर्षि महेश योगी ने सन् 1959 में विश्व यात्रा प्रारम्भ की जिससे भावातीत ध्यान सम्पूर्ण विश्व में एक आन्दोलन के रुप में फैल गया। महर्षि महेश योगी ने भारत वर्ष में शिक्षा के लिए अनेक विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों की स्थापना की। वर्तमान समय में 'महर्षि विद्या मन्दिर' और 'महर्षि विश्वविद्यालय' के नाम से शिक्षण कार्य कर रही संस्था की स्थापना महर्षि महेश योगी द्वारा ही की गयी थी। महर्षि महेश योगी ने भारतवर्ष के साथ-साथ विदेशों में भी योग विद्या का प्रचार-प्रसार किया। इन्होंने वर्ष 1990 में हॉलैण्ड में अपनी संस्था का मुख्यालय बनाकर वहाँ की नागरिकता ग्रहण कर ली और सम्पूर्ण विश्व में ऑन लाइन शिक्षा के माध्यम से योग विद्या का प्रचार-प्रसार किया। योगाभ्यास के द्वारा 90 वर्षों की स्वस्थ दीर्घायु को प्राप्त करने के उपरान्त महर्षि महेश योगी ने 5 फरवरी 2008 में पंचभौतिक शरीर का त्याग कर दिया और आप सदैव के लिए महासमाधि के परमानन्द में लीन हो गये। परन्तु, आपके द्वारा दी गयी शिक्षाएं और आपके द्वारा स्थापित संस्थाओं के द्वारा योग विद्या का प्रचार-प्रसार सम्पूर्ण विश्व में लगातार किया जा रहा है।

1-1-13 /khjsUnz czãpkjh dk thou ifjp; ,o ;kx d {k= e ;kxnku

चित्र 1.12 : धीरेन्द्र ब्रह्मचारी

योगविद्या के प्रचार-प्रसार करने वाले महान योगियों में धीरेन्द्र ब्रह्मचारी का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म 12 फरवरी सन् 1924 में बिहार राज्य के बस्ती नामक गाँव में हुआ था। मात्र 13 वर्ष की आयु में भगवत गीता के अध्ययन से इनके मन में वैराग्य के भाव प्रबल हुए और इन्होंने गृह त्याग कर दिया। तत्पश्चात् इन्होंने यौगिक क्रियाओं का अभ्यास किया। इन्होंने 60 के दशक में सोवियत रुस के अन्तरिक्ष यात्रियों को योग की शिक्षा प्रदान की और आप पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के योगगुरु रहे।

धीरेन्द्र ब्रह्मचारी जी ने सन् 1977 से 1985 तक दूरदर्शन पर योग

शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया। इन्होंने दिल्ली में योगाश्रम की स्थापना की जो अब मोरारजी देसाई योग संस्थान के रुप में संचालित हो रहा है। इसके साथ-साथ भारत के अन्य भागों जैसे जम्मू, कटरा और मंतलाई आदि स्थानों पर भी आश्रमों की स्थापना की। आपने योग से सम्बन्धित पुस्तकों की रचना की। यौगिक सूक्ष्म व्यायाम और योगासन विजयन इनके द्वारा रचित प्रमुख पुस्तकें हैं। 09 जून सन् 1994 में प्लेन क्रेश हादसे में धीरेन्द्र ब्रह्मचारी जी का देहान्त हो गया किन्तु, योगविद्या के प्रचार-प्रसार में आपका योगदान सदैव अविस्मरणीय रहेगा।

bdkbxr i'u&1-1

सही / गलत बताइए –

1) एक मान्यता के अनुसार महर्षि पतंजलि को शेषनाग का अवतार माना गया है। ( )

2) तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान क्रिया योग है। ( )

3) योग के क्षेत्र में बी0 के0 एस0 अयंगर आधुनिक योग के जनक के रूप में जाने जाते हैं ( )

4) स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म ऋषिकेश में हुआ था। ( )

5) स्वामी विवेकानन्द ने बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। ( )

6) स्वामी कुवल्यानन्द ने सन् 1924 में लोनावला में कैवल्यधाम की स्थापना की। ( )

vkiu D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में योग विद्या के प्रचार प्रसार में योगदान देने वाले महत्त्वपूर्ण योगियों के जीवन परिचय और इनके योगदान पर प्रकाश डाला गया है। यहाँ पर महर्षि पतंजलि से प्रारम्भ करते हुए आधुनिक काल के प्रसिद्ध योगी श्री धीरेन्द्र ब्रह्मचारी तक के जीवन परिचय एवं योग के क्षेत्र में इनके योगदान को विस्तारपूर्वक समझाया गया है। यूनिट का प्रारम्भ योगसूत्रों के रचनाकार महर्षि पतंजलि से किया गया है। महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र रुपी मोतियों को मिलाकर योगदर्शन नामक माला की रचना की। महर्षि पतंजलि का नाम केवल योगशास्त्र के साथ ही नहीं अपितु, वाणी शुद्धि और शरीर शुद्धि के ग्रन्थों के रचनाकार के रूप में लिया जाता है। महर्षि पतंजलि के उपरान्त योगविद्या की ज्ञानगंगा को आदि शंकराचार्य जी ने दिशा प्रदान की और गुरु गोरक्षनाथ एवं योगी स्वात्माराम जी ने हठप्रदीपिका ग्रन्थ की रचना करते हुए हठयोग विद्या का प्रतिपादन किया। यह मध्यकाल हठयोग की उन्नति का का चरम काल रहा जिसमें हठयोगियों के द्वारा योगविद्या के इस रूप का प्रचार-प्रसार किया गया।

आधुनिक भारत में जागरण के प्रमुख सूत्राधारों में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और स्वामी विवेकानन्द जी ने सम्पूर्ण विश्व धरातल पर योगविद्या का प्रचार-प्रसार करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सामाजिक कुरीतियों को दूर करते हुए योग शिक्षा को वैदिक साहित्य के साथ जोड़ा और स्वामी विवेकानन्द जी ने अमेरिका की धरती पर भारतीय संस्कृति का परचम लहराया। स्वामी शिवानन्द

सरस्वती ने ऋषिकेश में दिव्य जीवन संघ की स्थापना करते हुए योगविद्या के प्रचार–प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इसी प्रकार स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी ने बिहार स्कूल ऑफ योगा की स्थापना करते हुए योगविद्या का प्रचार-प्रसार भारतवर्ष के साथ-साथ सम्पूर्ण विश्व में किया।

यौगिक क्रियाओं के प्रभाव का सर्वप्रथम प्रयोगात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन करने का श्रेय स्वामी कुवल्यानन्द जी को जाता है। महाराष्ट्र के लोनावला स्थान पर स्वामी कुवल्यानन्द जी द्वारा स्थापित कैवल्यधाम संस्थान को योग की प्रथम प्रयोगशाला के रूप में जाना जाता है। आधुनिक युग के योगियों में महर्षि अरविन्दो का नाम बहुत प्रसिद्ध है। इन्होंने पाण्डिचेरी में अरविन्दो आश्रम की स्थापना करते योग से सम्बन्धित साहित्य का लेखन किया। बी. के. एस. अयंगर को आधुनिक योग के जनक के रुप में जाना जाता है। इन्होंने 'अयंगर योग' का प्रतिपादन करते हुए योग विद्या का प्रचार-प्रसार सम्पूर्ण विश्व धरातल पर किया। इसी प्रकार महर्षि महेश योगी जी के द्वारा प्रतिपादित 'भावातीत ध्यान' सम्पूर्ण विश्व में एक आन्दोलन के रुप में प्रचलित हुआ। इन्होंने योग विद्या के प्रचार-प्रसार में आधुनिक तकनिकों का सहारा लेते हुए ऑनलाइन शिक्षा प्रारम्भ की। श्री धीरेन्द्र ब्रहमचारी जी ने दूरदर्शन के माध्यम से एवं पुस्तक लेखन के साथ आश्रमों की स्थापना करते हुए योगविद्या के प्रचार-प्रसार में अपनी भूमिका वहन की।

इस प्रकार साररुप में यह स्पष्ट होता है कि वेदों के मूल से उत्पन्न योगविद्या ज्ञानी, त्यागी और तपस्वी ऋषियों के द्वारा विभिन्न कालों में अलग-अलग रुपों में प्रस्तुत की गयी। भारतवर्ष की पुण्य भूमि के योगियों द्वारा सम्पूर्ण विश्व में मानव जाति के कल्याणार्थ इस विद्या का प्रचार-प्रसार अपने-अपने स्तरों से किया गया।

bdkbl d vUr e i'u

1) स्वामी कुवलयानन्द का जीवन परिचय देते हुए योग के क्षेत्र में इनके योगदान का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2) महर्षि महेश योगी का जीवन परिचय देते हुए योग के क्षेत्र में इनके योगदान का पर प्रकाश डालिए।
3) स्वामी दयानन्द सरस्वती का जीवन परिचय देते हुए योग के क्षेत्र में इनके योगदान का सविस्तार वर्णन कीजिए।
4) स्वामी शिवानन्द सरस्वती का जीवन परिचय देते हुए योग के क्षेत्र में इनके योगदान की चर्चा कीजिए।
5) आधुनिक युग के किन्ही दो प्रमुख योगियों का जीवन परिचय देते हुए योग के क्षेत्र में इनके योगदान का सविस्तार वर्णन कीजिए।

bdkbxr i'uk d mÙkj

1-1

1) सही, 2) सही, 3) सही, 4) गलत, 5) गलत, 6) सही

2

योग क्रिया विज्ञान (फिजियोलॉजी) एवं पंचकोश की अवधारणा

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली इकाई (यूनिट) में आपने, योग के क्षेत्र में प्रसिद्ध योगियों के योगदान की जानकारी प्राप्त की। आपने जाना कि सभी योगियों ने अपने-अपने तरीकों से योग को उत्कृष्ट एवं प्रभावी बनाने में अपना योगदान दिया है। योग के आदर्शों और नियमों का पालन करते हुए वे आनंदमय जीवन तथा दीर्घायु को प्राप्त हुए। आधुनिक समय के योगियों ने इसे सरल भाव से समझाते हुए जन मानस तक पहुँचाया तथा दिखाया कि योग क्रियाएं (सूक्ष्म क्रियाएं, सूर्यनमस्कार, आसन, प्राणायाम, योग निद्रा आदि) व्यक्ति को स्वस्थ रखती हैं और उसका सर्वांगीण विकास करती हैं।

प्रत्येक चिकित्सा विज्ञान की अपनी क्रिया विज्ञान अर्थात् फिजियोलॉजी है। योग की भी अपनी यौगिक फिजियोलॉजी है। इस इकाई (यूनिट) में हम आपके साथ योग क्रिया विज्ञान (यौगिक फिजियोलॉजी) और पंचकोश की अवधारणा पर चर्चा करेंगे।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- योग क्रिया विज्ञान (फिजियोलॉजी) का परिचय देने में सक्षम होंगे;
- पंचकोश का अर्थ समझा सकेंगे और वर्गीकरण कर सकेंगे;
- पांचों कोशों का वर्णन कर सकेंगे और उनके अनावरण की विधि वर्णन कर सकेंगे; और
- मानव जीवन में पंचकोश के महत्त्व पर प्रकाश डाल सकेंगे।

fVIi.kh

2-1 ;kx fØ;k foKku ¼;kSfxd fQft;ky,th½

शिक्षार्थियों, यौगिक क्रियाएं, इनके विभिन्न प्रकार और यौगिक अभ्यास से इनका हमारे शरीर पर प्रभाव आदि के विषय में आप पहले ही जान चुके हैं। जैसा कि हमने यूनिट के परिचय में बताया कि प्रत्येक चिकित्सा विज्ञान की अपनी फिजियोलॉजी होती है, जिसके आधार पर वह कार्य करती है, ठीक इसी प्रकार योग की भी अपनी फिजियोलॉजी अर्थात् क्रिया विज्ञान है, जिस पर वह कार्य करती है, इसे यौगिक फिजियोलॉजी कहते हैं। आइये इसे समझने का प्रयास करें;

योग क्रिया विज्ञान (यौगिक फिजियोलॉजी) अर्थात् योग से सम्बंधित शरीर की सामान्य कार्य–पद्धति का अध्ययन। इसका अर्थ यह हुआ कि, यौगिक फिजियोलॉजी से तात्पर्य उस कार्य–पद्धति से है, जिसमें योग अभ्यास का शरीर पर होने वाले प्रभावों को जानने व समझने का अध्ययन किया जाता है।

योग क्रिया विज्ञान को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं;

योग क्रिया विज्ञान, योग विज्ञान की वह शाखा है, जिसमें योग के विभिन्न अभ्यासों का मानव शरीर पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान और शरीर रचना विज्ञान के लिए यह अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

यौगिक फिजियोलॉजी मान्यता के अनुसार मानव शरीर, पांच आवरण या कोश से निर्मित माना जाता है। यह भी माना जाता है कि ये ऊर्जा के स्रोत धारण करती है, जिन्हें योग के अभ्यास से सक्रिय, उत्तेजित तथा प्रभावित किया जा सकता है।

वैदिक शास्त्रों में मानव शरीर को तीन शरीरों से निर्मित कहा जाता है, जो कि पंचकोशों से सम्बंधित हैं:

i) स्थूल शरीर

ii) सूक्ष्म शरीर

iii) कारण शरीर

इस तीसरे शरीर में होना ही वांछनीय माना गया है, जिससे स्थूल और सूक्ष्म शरीर प्रकट होते हैं। यौगिक फिजियोलॉजी के अनुसार सूक्ष्म शरीर में तीन मुख्य नाड़ी सात स्थान पर आपस में एक–दूसरे से मिलती हैं, जिन्हें सप्त चक्र कहते हैं।

सप्त चक्र निम्नांकित हैं, जिनके विषय में आप हठयोग के अंतर्गत अध्ययन कर चुके हैं:

1. मूलाधार चक्र
2. स्वाधिष्ठान चक्र
3. मणिपुर चक्र
4. अनाहत चक्र
5. विशुद्धि चक्र

6. आज्ञा चक्र

7. सहस्रार चक्र

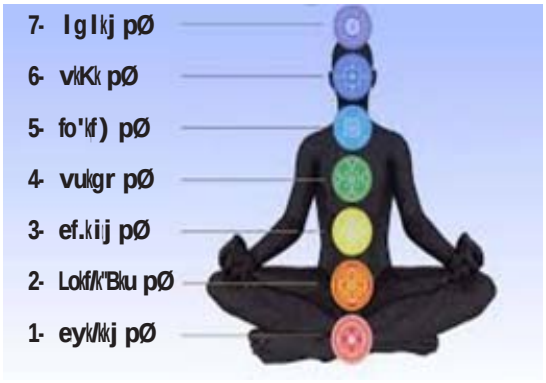

चित्र 2.1 योग एवं सप्त चक्र

bdkbZxr iz'u&2-1

रिक्त स्थान भरिए —

1. वैदिक शास्त्रों में मानव शरीर को तीन शरीरों से निर्मित कहा जाता है, जो कि .... सम्बंधित हैं।

2. यौगिक फिजियोलॉजी के अनुसार, सूक्ष्म शरीर में तीन मुख्य नाड़ी, सात स्थान पर आपस में एक–दूसरे से मिलती हैं, जिन्हें .... कहते हैं।

3. सप्त चक्र निम्नांकित हैं:

   मूलाधार चक्र, स्वादिष्ठान चक्र, मणि चक्र, अनाहत चक्र, विशुद्धि चक्र, ... और सहस्रार चक्र

2-2 iapdks'k dk vFkZ ,oa oxhZdj.k

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि, अभी आपने यौगिक फिजियोलॉजी में जाना कि योग में मानव शरीर को पांच आवरणों से निर्मित माना जाता है। इन पांच आवरणों को पंचकोश कहा जाता है। जिस प्रकार फूलों में रंग, आकृति, गंध, रस, नाम आदि समग्र रूप से समाहित होते हैं, उसी प्रकार काय अर्थात् शरीर में पंचकोशों का समग्र समावेश कहा जा सकता है।

पंचकोश आत्मा पर चढ़े हुए आवरण हैं। प्याज की, केले के तले की परतें जिस प्रकार एक के ऊपर एक होती हैं, उसी प्रकार आत्मा के प्रकाशवान स्वरूप को अज्ञान आवरण से ढके रहने वाले यह पाँच कोश हैं। उन्हें उतारते चलने पर कष्ट नष्ट होते हैं और आत्म साक्षात्कार का ईश्वर प्राप्ति का परम लक्ष्य प्राप्त होता है।

ये कोश एक साथ विद्यमान अस्तित्व के विभिन्न तल समान होते हैं। विभिन्न कोशों में चेतन, अवचेतन तथा अचेतन मन की अनुभूति होती है। प्रत्येक कोश का एक दूसरे से घनिष्ठ संबंध होता है। वे एक दूसरे को प्रभावित करते और होते हैं।

oxhZdj.k

जैसा कि नाम से ही पता चलता है पंच कोश अर्थात् ये पांच कोश हैं –

1. अन्नमय कोश – अन्न तथा भोजन से निर्मित (शरीर और मस्तिष्क)
2. प्राणमय कोश – प्राणों से बना।
3. मनोमय कोश – मन से बना।
4. विज्ञानमय कोश – अन्तज्ञान या सहज ज्ञान से बना।
5. आनंदमय कोश – आनन्दानुभूति से बना।

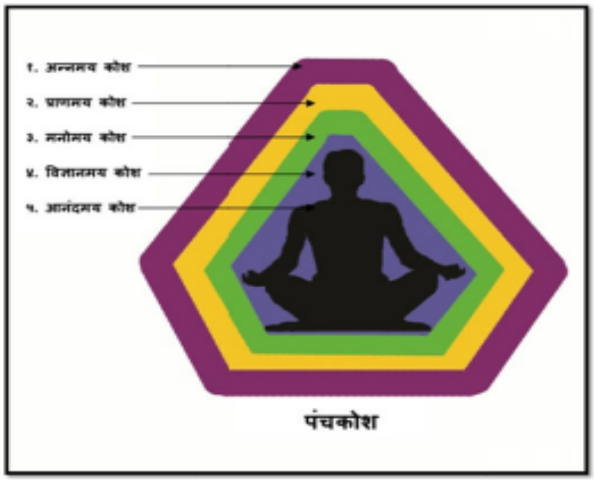

चित्र 2.2 पंचकोश

जैसाकि, अभी हमने ऊपर जाना कि, शरीर को तीन शरीरों से निर्मित माना जाता है और ये तीनों शरीर भी पंचकोशों से सम्बंधित होते हैं। आइये, शरीर के साथ पंचकोश का संबंध समझें:

'kjhj	dks'k
स्थूल शरीर	– अन्नमय कोश (Physical Body)
सूक्ष्म शरीर	– प्राणमय कोश (Etheric Body), – मनोमय कोश (Astral Body) और – विज्ञानमय कोश (Mental Body)
कारण शरीर	– आनंदमय कोश (Causal Body)

bdkbxr i'u&2-2

रिक्त स्थान भरिए –

1. योग में मानव शरीर को पांच आवरणों से निर्मित माना जाता है। इन पांच आवरणों को .... कहा जाता है।
2. पंचकोश आत्मा पर चढ़े हुए .... हैं।
3. पंच कोश हैं –
   - i) अन्नमय कोश,
   - ii) प्राणमय कोश,
   - iii) मनोमय कोश,
   - iv) विज्ञानमय कोश,
   - v) ....

2-3 Hkkjrh; vk/;kfRed vkj nk'kfud ijijk e ipdk'k dk o.ku

ipdk'k dh vo/kkj.kk

भारतीय आध्यात्मिक और दार्शनिक परम्परा को मुख्यतया तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है। प्रथम–यह संसार जड़ तत्वों – मिट्टी, पानी, अग्नि, वायु तथा आकाश का संयोग है। दूसरा–इस सम्पूर्ण संसार में केवल चेतन तत्व की सत्ता है। जो कुछ दृश्यमान जगत है वह सब चेतन की छाया या अभ्यास है। तीसरा– इस संसार में दो मूल तत्व हैं– प्रकृति और पुरुष। दोनों ही स्वतन्त्र एवं नित्य हैं। योग और सांख्य इसी तीसरी मान्यता के वाहक हैं। योग विधा विवेकवादी है, जिसके अनुसार जीवन, पुरुष और प्रकृति का संयोग है। यद्यपि, हमारा मूल स्वरूप चेतन है, किन्तु शरीर, इन्द्रिय, मन तथा बुद्धि आदि प्रकृति के भाग हैं।

संसार के सभी प्राणी, दुखों से मुक्त होना चाहते हैं। उपर्युक्त वर्णित प्रथम मान्यता, भौतिकता वादी है, जिसमें क्षणिक सुख को ही प्रिय माना जाता है। जिसके अनुसार –

^;koTthor lq[k thor _.k —Rok ?kre ihcr^

अर्थात् जब तक जियो,सुख से जियो, यदि अपने पास धन न हो तो उधार लेकर मौज करो।

किन्तु बाद की दोनों दार्शनिक मान्यता, दुखों से स्थायी निदान की बात करती हैं। इनके अनुसार, लौकिक सुख क्षणिक होता है और यह सुख अंततः महादुःख की ओर ही ले जाता है। स्थायी और अविचल सुख

fVIi.kh

है अपने मूल स्वरूप ज्ञान और उसमें स्थिति, इन दोनों मान्यताओं के अनुसार, मनुष्य के दुख का मूल कारण अविद्या है। अविद्या है अपने मूल स्वरूप की विस्मृति, जिसे माया, अध्यास या विपर्यय भी कहते हैं। योग दर्शन के अनुसार अविद्या हैं–

vfuR;k'kfpn%[kkukRel fuR;'kfp l[kkRe[;kfrjfo|kAA

अर्थात् अनित्य को नित्य समझना, अशुचि या अपवित्र को पवित्र मानना, दुख को सुख समझना तया अनात्म को चेतन या आत्मा समझना अविद्या है। कहने का अभिप्राय, यह है कि जो जैसा है उसे वैसा ना समझना अविद्या है। हमारा मूल स्वरूप, चेतन आत्मा है किन्तु अविधा के कारण हम अपने आपको, शरीर, इन्द्रिय, मन तथा बुद्धि समझने लगते हैं। हम अपने आप को प्रकृति से जोड़ लेते हैं। यही पुरुष का बंधन है। महर्षि पतंजलि पुरुष के प्रकृति से संयोग को ही, दुख का मूल कारण मानते हैं–

n"Í–';;k% l;kxk g; gr%A

अर्थात् द्रष्टा (पुरुष) का दृश्य (प्रकृति) से संयोग ही दुख का मूल कारण है। और इस संयोग की ग्रन्थि की तोड़ देने पर ही कैवल्य या दुखों से मुक्ति प्राप्त होती है

þrnHkkok· l;kxkHkkok gku rnn'k% doY;EkßAA 2-25AA

अर्थात् अविद्या (जो प्रकृति और पुरुष के संयोग का मूल है) का अभाव कर देने पर, इनके संयोग का अभाव हो जाता है, यही दुखों से मुक्ति है और वही द्रष्टा का कैवल्य है। पुरुष अज्ञानता वश प्रकृति से आसक्त हो जाता है। यह अज्ञानता ही, हमारी आत्मा का आवरण है। हमारे उपनिषद् बंधन के पाँच आवरणों का उल्लेख करते हैं, जिन्हें पंच कोश कहा जाता है।

ipdk'k dk vFk

पंच कोश, दो शब्दों का संयोग है, जिसमें पंच का अर्थ–पांच तथा संस्कृत साहित्य में कोश का अर्थ कटोरा, पीपा, बाल्टी, म्यान, संदूक, ढक्कन, खोल तथा आवरण आदि से होता है। यहाँ इसका अर्थ – आवरण या ढक्कन ही है। पंचकोश = पंच + कोश अर्थात् पांच आवरण ईशावास्योपनिषद् के ऋषि कहते हैं –

^fgj.e;u ik=.k lR;L;kfifgr e[keA
rr Ro i"kUuiko.k lR;/kek; n"V;AA b'kk m-15

अर्थात् सत्य या ब्रह्म या आत्मा का मुख चमकीले (सांसारिक आकर्षण) पात्र से ढका हुआ है। हे पूषन् मुझे सत्यधर्मा या आत्मधर्मा या अपने स्वरूप की उपलब्धि कराने के लिए तू इसे उघाड़ दे। सरल अर्थों में आत्मा के ऊपर प्रकृति के आवरण चढ़े हैं। आत्मा तक पहुंचने के लिए, इन आवरणों को तोड़ना चाहिए। इस प्रकार पंच कोश में कोश शब्द का अर्थ, आवरण या ढक्कन के अर्थ में ही लिया जाने योग्य है। हमारी आत्मा के ऊपर के पांच आवरणों को ही पंच कोश कहते हैं। प्याज या केले के तने की परतें जिस प्रकार एक के ऊपर एक गुथी होती हैं, उसी प्रकार आत्मा को अविद्या के ये पांच आवरण ढके रहते हैं। ये क्रमशः स्थूल से सूक्ष्म

की ओर गति करते हैं। इन्हें एक–एक कर अनावृत करते चलने पर ही अन्त में आत्मा साक्षात्कार संभव हो पाता है। उपनिषद् के ऋषि इसे निम्न पांच प्रकार में विभक्त करते हैं–

^vUue;çk.ke; euke; foKkue;kuUne;k% ipdk'kk%^

अर्थात् अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश, और आनन्दमय कोश है।

पंचकोश की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोग तैत्तिरीय उपनिषद् में किया गया है। इसमें तीन वल्ली या अध्याय हैं शिक्षावल्ली, भृगुवल्ली और ब्रह्मानंदवल्ली। ब्रह्मानंदवल्ली के प्रथम अनुभाग में अन्नमय कोश, आत्मा के उपर प्रकृति के पांच आवरण चढ़े रहते हैं, इन पांच आवरणों को पंच कोश कहते हैं।

द्वितीय अनुभाग में प्राणमय कोश, तृतीय अनुभाग में मनोमय कोश, चतुर्थ अनुभाग में विज्ञानमय कोश और पंचम अनुभाग में आनन्दमय कोश का वर्णन किया गया है। इन पांचों कोशों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

2-3-1 vUue; dk'k

अन्न और जल से सुरक्षित रहने वाला, इन्द्रियों का समूह शरीर अन्नमय कोश कहलाता है। उपनिषद् के ऋषि अन्नमय कोश को इस प्रकार परिभाषित करते हैं–

tk viu vUu dj jI lmRiUu gkrk g tk vUu jI l gh c<rk g vkj tk vUu#i iFoh e gh yhu gk tkrk g mlI gh vUUe; dk'k ,o LFky 'kjhj dgr g A

अनन्मय कोश हमारी आत्मा का सबसे पहला और स्थूलतम आवरण है। जब पुरुष अज्ञानवश अपने मूलचेतन स्वरूप को भूल जाता है, तब वह बाह्य विषयों में आसक्त रहने के कारण **ipHkrUek=kvk** से उत्पन्न हुए बाह्य **fijfPNu vUu;** कोशादि में आत्मभाव करने लगता है। उसका शरीर आत्मभाव करना ही अन्नमयकोश है। जबकि, वास्तव में अन्नमयकोश युक्त शरीर अनात्म या जड़ है। व्यक्ति ऐसा सोचने लगता है कि मैं अन्न से युक्त इस अज्ञात शरीर से भिन्न नहीं हूँ। वह ऐसा अभिमान करने लगता है । इस प्रकार, आत्मा होने पर भी वह अविद्यावश अपनी आत्मा से दूर रह जाता है। अधिकांश लोग अपने आपको शरीर मात्र मानते हैं' और इसी कें सुख–दुख या संयोग–वियोग, सफलता या असफलता का अनुभव करते रहते हैं। यही उनका भवबंधन है। इनकी समझ अत्यन्त स्थूल होती है। आहार, **folu** तथा मैथुन ही इनका जीवन होता है। पेट तथा इन्द्रियों का समाधान हो जाने पर वे संतुष्ट रहते है। इनमें आलस्य, तंद्रा एवं तमोगुण की अधिकता पाई जाती है। वस्तुतः इनमें पशु प्रवृत्ति ही अधिक पाई जाती है।

vUue; dk'k dk vukoj.k & अपने सूक्ष्मतम चेतन स्वरूप की ओर प्रवृत्ति तभी हो पाती है जब इसके प्रथम आवरण अन्नमय कोश को अनावृत्त किया जाता है। अन्नमय कोश की विकृतियों को दूर करने के लिए शौच या शुद्धि, तप, आसन, व्यायाम एवं कर्मयोग की साधना की आवश्यकता होती है। शारीरिक शौच के अभ्यास में शरीर की गंदगी दूर होती है। योगद्शर्न कहता है –

^'kkpkRLokx txIkijjlIx% अर्थात् शौच के अभ्यास से स्वयं के अंगों से जुगुप्सा या घृणा उत्पन्न

fVIi.kh

होती है और दूसरे के संसर्ग की इच्छा नहीं होती है। इसके अतिरिक्त आसन के अभ्यास से भी शरीरगत विकृतियां दूर होती हैं और साधक की स्थूल मनोवृत्ति का शमन होता है और वह अन्नमय आवरण को भेदकर अंदर की ओर प्रवृत्त होता है।

2-3-2 çk.ke; dks'k

हमारी चेतना के ऊपर दूसरा आवरण प्राणमय कोश है। यह आवरण अन्नमय कोश से सूक्ष्म है, किन्तु मनोमय कोश से स्थूल है। उपनिषद् के ऋषि प्राणमय कोश को इस प्रकार परिभाषित करते है।

^desfUæ;S%lg çk.kfn;a pda çk.ke;dks'k%^A अर्थात् कर्मेन्द्रियों के साथ प्राण के समूह को प्राणमय कोश कहते हैं। संक्षेप में यही क्रियाशक्ति है। प्राणमय कोश की क्षमता जीवनी शक्ति के रूप में प्रकट होती है। संकल्प, बल साहस आदि स्थिरता और दृढ़ता बोधक गुणों से जाना जा सकता है। तीव्र जीजिविषा वाले लोग, ऐसी प्राणशक्ति का सहारा लेकर अभावों और कठिनाइयों से जूझते हुए जीवित रहते है, जबकि अन्य छोटी योनि के जीव प्रतिकूलताओं से प्रभावित होकर बिना संघर्ष किए हुए ही प्राण त्याग देते हैं। यद्यपि, प्राण शक्ति अन्य योनि के जीवों में भी पाई जाती है, किन्तु मनुष्य में इस प्राणशक्ति को विकसित और सर्वाधित करने की शक्ति होती है। मनुष्येतर प्राणी तो प्रकृति या अपने प्रारब्ध की कठपुतली मात्र होते हैं, किंतु मनुष्य मननशील और स्वतत्र इच्छा शक्ति विकसित कर अपने को उच्च चेतना शक्ति की ओर उन्मुख कर सकता है।

अन्नमयकोश को शक्ति प्राण से मिलती है। जिस प्रकार वायु से धौकनी भरी रहती है। उसी प्रकार उस प्राणमय से यह अन्नमय शरीर भरा हुआ है। जिस प्रकार, धान को तुशारहित कर चावल निकाल लिया जाता है। उसी प्रकार अन्नमय कोश से लेकर आनन्दमय कोश पर्यन्त संपूर्ण आवरणों को अनावृत्त कर आत्मा का साक्षात्कार होता है।

प्राणमयकोश में प्राण के पांच भाग होते हैं। 'प्राणेऽपानः समानश्चोदानव्यानौ तथैव च' अर्थात् प्राण, अपान, समान, उदान तथा व्यान आदि पंच प्राण है। प्राण की पहली अभिव्यक्ति अपान है जो नाभि से मूलाधार चक्र के बीच श्रोणिप्रदेश में अवस्थित होता है। यह गुर्दा, मूत्राषय, उत्सर्जक तथा जननागों के कार्यों का नियंत्रण और नियमन करता है। वायु, गैस मल–मूत्र, निष्कासन तथा प्रसव के समय भ्रूण को बाहर धकेलने आदि जैसे कार्य अपान की ही सहायता से संभव होते हैं।

प्राण की दूसरी अभिव्यक्ति समानवायु है। समान का अर्थ है संतुलित या बराबर। यह नाभि और असली पिजंर के बीच प्राण और अपान के परस्पर विपरीत बलों के बीच अवस्थित होता है। अस्तु, यह प्राण और अपान को संतुलित और समान बनाता है। यह पाचन संस्थान को सक्रिय और नियंत्रित करता है तथा उनके विभिन्न स्रावों को संतुलित रखता है। भोजन के पाचन और स्वांगीकरण का कार्य समान वायु द्वारा ही होता है। प्राण की तीसरी अभिव्यक्ति उपप्राण प्राणवायु के रूप में होती है। इसका संबंध स्वरयंत्र से मध्यपट के शीर्ष तक शरीर के एक विशिष्ट भाग से होता है। यह हृदय तथा फेफड़ों को और वक्ष प्रदेश में होने वाली क्रियाओं जैसे–श्वसन–निगलने की क्रिया तथा रक्त संचरण आदि का नियमन करता है।

pkFkk çk.k mnku gSA उसकी स्थिति स्वरयंत्र से ऊपर तथा छोरों पर होती है, जिसके अन्तर्गत हाथ, पैर

तथा सिर आते हैं। उदान पांचों ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के कार्यों का नियमन करता है। यह अनुकंपी तथा परानुकंपी तंत्रिका तंत्र को नियमित करता है। प्राण की पांचवी और अंतिम अभिव्यक्ति' व्यान' है। यह प्राण शक्ति समूचे शरीर के कण – कण में व्याप्त रहती है, तथा ऊर्जा के सुरक्षित भंडार के रूप में रहती है। यह अन्य चार प्राणों में से जिस प्राण को अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता होती है, उसे ऊर्जा की आपूर्ति करती है।

उपर्युक्त पांच प्रमुख प्राणों के अतिरिक्त पांच उप प्राण भी हैं –

^ukx%de'p —dyk nonÙrk /kuat;% अर्थात् नाग, कूर्म, कृकल, देवदन्त तथा धनंजय पांच उपप्राण हैं।

उद्गारे नाग आख्यातः 'अर्थात् डकार लेने की क्रिया में नाग वायु कार्य करती है।

^deLrUehyuLer% अर्थात् आंखों को खोलने और बंद करने का कार्य कर्म वायु के माध्यम से होता है।

^—dy% {kR—r% K;k%^ अर्थात् छींकने की क्रिया कृकल वायु से होती है।

'देवदन्तों विजृम्भनणे' अर्थात् जम्भाई की क्रिया देवदत्त द्वारा होती है।

^u tkgfrerDokfir lo0;kih /kut;^ अर्थात् धनजंय वायु मृत्यु के उपरान्त भी शरीर की गरमाहट के लिए विद्यमान रहती है।

चित्र 2.3 प्राण का शरीर में प्रवेश

çk.ke; dk'k dk vukoj.k & इस कोश के आवरण को हटाने हेतु प्राणायाम, बंध तथा मुद्रा आदि क्रियाएं बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्राणायाम के अभ्यास से इस प्राण शक्ति को नियंत्रित किया जा सकता है।

fVIi.kh

2-3-3 euke; dk'k

सभी स्मृतियों का केन्द्र ही मन है जो प्राणमय कोश को सत्ता देता है। यह कोश मननशील तथा विचारशील प्रणियों की होती है। ''मननात मनुष्यः' अर्थात् मनन करने की शक्ति के कारण ही हम मनुष्य हैं। मनन और चिंतन की शक्ति प्राणियों में श्रेष्ठ योनि है। कल्पना, तर्क, विवेचना तथा दूरदर्शिता जैसी चिन्तनात्मक विषेशताओं के सहारे औचित्य–अनौचित्य का अन्तर करना संभव होता है। मनन करने की शक्ति के कारण मनुष्य सभी पुरुषार्थो' को सिद्ध कर सकता है। ऋषियों ने मनोमय कोश को इस प्रकार परिभाषित किया है

'ज्ञानेन्द्रियैः सह मनो मनोमयः कोशः अर्थात् मन सहित ज्ञानेन्द्रियों के समूह को मनोमय कोश कहते हैं।

मन को तीन भागों में बांटा गया है – चेतन मन, अर्धचेतन मन तथा अचेतन मन। चेतन मन हमारे मन का वह हिस्सा है जो किसी ज्ञातव्य को ग्रहण करने, सोचने और समझने का कार्य करता रहा है। दैनिक कार्य में व्यक्ति, मन के इसी भाग का उपयोग करता है।

अर्धचेतन मन हमारे मन का वह हिस्सा है, जो हमारी स्मृतियों को बनाता है। स्वप्न जगत इसी मन से काम करता है। अचेतन मन हमारे सबसे अन्दर के मन का वह हिस्सा है जिसके बारे में व्यक्ति को जानकारी नहीं रहती है। यह मन हमारी आदत, सोच, स्वभाव को प्रभावित करता है। इसमें व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति जैसे कि भूख,प्यास तथा यौन से संबंधित इच्छायें दबी रहती है। यदि इस भाग में दबी इच्छायें नियंत्रण शक्ति से बाहर होती है जो कई मनोरोग के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। मनोमय कोश का अनावरण मनन करने की शक्ति मनुष्य की सबसे बड़ी विशेषता है। यह शक्ति हमारे अस्तित्व का सबसे आधारभूत तत्व है। हमारे शास्त्रों में मन को बंधन और मोक्ष दोनों का कारण कहा गया है। संतुलित मन हमें स्वतंत्र करता है और सुख तथा आनंद देता है। जबकि, दूसरी ओर असंतुलित मन हमारे सभी दुखों का कारण बन जाता है। मन से मुक्त होने के लिए योग विद्या का जन्म हुआ है। **;kx n'ku d vuqlkj ;kx dh ifjHkk"kk gh ;gh g &;kxf'pÙkofÙk fujk/k% vFkkr~ fpUr ;k eu dh ofÙk;k ;k mldh pp;rk dk :d tkuk gh ;kx gA eu dh pp;rk gh n[k g vkj eu dh ,dkxrk vkj mldk i.k fu;=.k gh lHkh n[kk l efä gA**

मन से मुक्ति हेतु योग में क्रिया योग. हठयोग, अष्टांग योग, भक्ति योग, कर्मयोग् आदि विधाओं का आविष्कार किया। इनमें से किसी एक का नियमित अभ्यास करने से अभ्यासी सांसारिक बन्धन से मुक्त हो जाता है।

2-3-4 foKkue; dk'k

सत्य और असत्य के निर्णय करने का साधन बुद्धि है, वही विज्ञान कोश है। यही विज्ञानमयकोश मनोमय कोश को सत्ता देता है। ऋषियों ने इसे इसी अर्थ में परिभाषित किया है ज्ञानेन्द्रियः सह बुद्धिविर्ज्ञानमयकोश; अर्थात् बुद्धि और ज्ञानेन्द्रियों का समन्वय विज्ञानमय कोश है। स्वामी शंकराचार्य ने तैत्तिरीय उपनिषद के भाष्य में कहा है, कि वेदों के अर्थ के विषय में जो निश्चयतिमिका बुद्धि है उसी का नाम विज्ञान है और वह अन्तः करण का अध्यवसाय रूपी धर्म है ! निश्चयत्मिका बुद्धि सम्पन्न पुरुष को सबसे पहले कर्त्तव्य कर्म में श्रद्धा उत्पन्न होती है। यह बुद्धि ही सम्पूर्ण विज्ञानों का कारण है इसलिए इसे विज्ञानमय कोश कहा गया

है। अन्नमय से लेकर मनोमय तक तीनों कोश निम्न स्तर के हैं। किन्तु विज्ञानमय कोश इन सबसे उच्चतर है। विज्ञान भी इस तथ्य को स्वीकार करता है कि मनोमय कोश तक के सभी लक्षण अर्थात् भोजन, पानी, श्वास–प्रशवास और मन के भावों में सुरसा आदि का भाव तो पशुजगत मे भी मानव के समान होता है किन्तु अनुसंधान और ज्ञान विज्ञान का बोधिक स्तर मात्र मानव में ही होता है ! यह विज्ञानमय के कारण ही होता है।

विज्ञानमय कोश को जाग्रत कर ही विवेकशक्ति प्राप्त की जा सकती है । इस कोश के द्वारा ही सांसारिक एवं परमात्मा संबंध ज्ञान प्राप्त होता है। तैत्तिरीयउपनिषद के ब्रहमवल्ली के पंचम अनुभाग में आया है यदि साधक विज्ञान ब्रहम है (ऐसा ज्ञान जाए) और फिर उससे प्रमाद न करें तो अपने शरीर के सारे पापों को त्यागकर वह समस्त कामनाओं को पूर्णतयाः प्राप्त कर लेता है। यह जो विज्ञानमय है वही उस अपने पूर्ववती मनोमाय शरीर का आत्मा है। इस विज्ञानमय से दूसरा इसका अंतर्वर्ती आत्मा आनंदमय है। इस आनंदमय के द्वारा यह पूर्ण है।

foKkue; dks'k dk vuqoj.k% हमारी बुद्धि ही हमारे ज्ञान–विज्ञान का केंद्र है। सामान्य बुद्धि का कार्य निर्णय लेना है। जब यह बुद्धि सत्य और असत्य के मध्य अंतर करने की कला सीख जाती है, तब इसे विवेक कहते हैं। विवेक ही मोक्ष का आधार है। मन की एकाग्रता का स्तर जब तक बहुत ऊंचाई पर नहीं पहुंच जाता, तब तक विवेक जाग्रत नहीं हो सकता है। विवेकख्याति द्वारा ही मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता है। मन कि ये रजोगुण तथा तमोगुण वृतियों का शमन कर ही विवेक वृति को जाग्रत किया जा सकता है। इसे ही योग की भाषा में संप्रज्ञात समाधि कहते हैं। अपर वैराग्या का अभ्यास कर, मन से क्लिश्ट वृतियों का शमन किया जाता है और अतः सात्विक वृतियाँ ही चित में बनी रहती हैं। अंततः सात्विक वृतियों का शमन हो जाने पर ही अंसप्रज्ञात समाधि या कैवल्य की स्थिति होती है। ध्यान तथा समाधि ही विकार या रजोगुण – तमोगुण वृति से मुक्ति का समाधान है।

2-3-5 vkuane; dks'k

अहंकार जनित आनंद का समूह, जो बुद्धि को सत्ता देता है, आनंदमय कोश कहलाता है। उपरोक्त सभी कोशों की अपेक्षा आनंदमय कोश, आत्मा के सबसे अंतरतम है, इसीलिए कहीं–कहीं इसे आत्मा का स्वरूप ही मान लिया गया है, किन्तु वस्तुतः यह आत्मा या ब्रहम नहीं है। यह तो अनात्म है।

अहंकार हमारे व्यक्तित्व का सबसे सूक्ष्मतम आवरण है। योग दर्शन में इसे अस्मिता ही कहा गया है। अस्मिता को परिभाषित करते हुए महर्षि पतंजलि कहते हैं–दृग्दर्शिनिशाक्त्योरे कत्म्टेवरीयता अर्थार्थ द्रश्टाशक्ति का दर्शनशक्ति से ऐकात्मक ही अस्मिता है। अर्थात् द्रष्टा (पुरुष) का दृश्य (प्रकृति) में एकात्म हो जाना ही अस्मिता या अहंकार है ! अस्मिता की ग्रंथि बहत मजबूत ग्रंथि होती है इस ग्रंथि को तोड़ देने पर साधक अपने ब्रह्मस्वरूप में स्थित हो जाता है ! इस ग्रंथि को तोड़ना ही साधक का मुख्य पुरुषार्थ होता है।

'आनंद' यह उपासना और कर्म का फल है। उसका विकार आनंदमय कहलाता है। आनंद फल होने के कारण जड़ है। यह संप्रज्ञात समाधि या विवेकख्याति का फल है। जब साधक इस स्थिति मे रुक कर आनंद का अनुभव करता है तब वह इसमे आसमत हो जाता है। यह आसक्ति ही अध्यात्म की सबसे बड़ी बाधा है!

fVIi.kh

आनंदमय कोश का अनावरण – आनंदमय कोश की बाधा को हटाने हेतु वैराग्य का अभ्यास आवश्यक है। महर्षि पंतजली पर–वैराग्य को इस प्रकार परिभाषित करते हैं–

^rRijei#"k[;krxr^ ..k;e अर्थात् पर–वैराग्य के अभ्यास से पुरुष (आत्मा) का ज्ञान होता है और तीनों गुणों के प्रति वितृष्णा हो जाती है ! साप्रजाति समाधि के अभ्यास से साधक तम और रज कि अशुद्धियों को दूर कर देता है और सात्विक बुद्धि में स्थित हो जाता है। इस सात्विक बुद्धि से परे उठ जाना ही असम्प्रज्ञात समाधि है।

bdkbZxr iz'u&2-3

रिक्त स्थान भरिए –

1. अन्नमय कोश सबसे पहला और स्थूलतम .... है।
2. कर्मेन्द्रियों के साथ प्राण के समूह को .... कहते हैं।
3. मन सहित ज्ञानेन्द्रियों के समूह को ....कहते हैं।
4. सत्य और असत्य के निर्णय करने का साधन बुद्धि है वही .... है।
5. प्राणमयकोश में प्राण के .... भाग होते हैं।

2-4 ekuo thou esa iapdks'k dk egÙo

भारतीय आध्यात्मिक और दार्शनिक परंपरा के अंतर्गत अभी तक हमने पंचकोश और उनका अनावरण करने की विधियों को जाना। आइये अब मानव जीवन में पंचकोश के महत्त्व को समझें।

1) मानवीय चेतना को पंचकोशों की दृष्टि से निम्न प्रकार से विभाजित किया जा सकता है:

- अन्नमय कोश का अर्थ है–– इन्द्रिय चेतना।
- प्राणमय कोश का अर्थ है–– जीवनी शक्ति।
- मनोमय कोश का अर्थ है–– विचार बुद्धि।
- विज्ञानमय कोश का अर्थ है– अचेतन सत्ता एवं भाव प्रवाह।
- आनंदमय कोश का अर्थ है– आत्मबोध जागृति।

2) पंचकोशों की पांच सिद्धियाँ हैं, जो मानव जीवन में बहुत महत्व रखती है, जैसे;

- अन्नमय कोश की सिद्धि से निरोगता, दीर्घ जीवन एवं चिर यौवन का लाभ है।
- प्राणमय कोश साहस, शौर्य, पराक्रम प्रभाव, प्रतिभा जैसी विशेषताएँ उभरती है।
- मनोमय कोश की सिद्धि से दूरदर्शिता तथा बुद्धिमत्ता बढ़ती है और उतार–चढ़ाव में धैर्य संतुलन बना रहता है।
- विज्ञानमय कोश की सिद्धि से सज्जनता और उदार सभ्यता का विकास होता है। देवत्व की विशेषताएँ उभरती है। अतीन्द्रिय ज्ञान, अपरोक्षानुभूति, दिव्य दृष्टि जैसी उपलब्धियां विज्ञानमय कोश की हैं।
- आनंदमय कोश के विकास से चिंतन तथा कर्त्तत्व दोनों ही इस स्तर के बन जाते हैं कि हर घड़ी आनंद छाया रहे, संकटों का सामना ही ना करना पड़े। ईश्वर दर्शन, आत्म साक्षात्कार, स्वर्ग, मुक्ति जैसी महान विशेषताएँ आनंदमय कोश की ही देन है।

पंचकोश का सम्बन्ध समूची जीवन चेतना से है। इनका स्थान षट्चक्रों की तरह मेरुदंड और मूलाधार–सहस्रार चक्र की परिधि तक सीमित नहीं है। वस्तुतः ये पाँचों कोश दिव्य शक्तियों के भण्डारागार हैं। जिस प्रकार पञ्च रत्न, पञ्च देव, पञ्च गव्य, पंचांग एवं ब्रह्माण्डीय सूक्ष्म पंचकणों आदि की गणना होती है, उसी प्रकार पंचकोशों की महत्वता को समझा जा सकता है।

इन्हें जागृत करने के लिए साधक को, उच्च स्तरीय तप करना होता है। तप करने से मनुष्य उसी प्रकार दमक जाता है, जिस प्रकार सोने आग में तप कर और अधिक निखर जाता है, उसी प्रकार मनुष्य भी सोने की भांति निखर जाता है।

bdkbxr iz'u&2-4

सही / गलत बताइये –

1. अन्नमय कोश का अर्थ है – इन्द्रिय चेतना। ( )
2. प्राणमय कोश का अर्थ है–– जीवनी शक्ति। ( )
3. मनोमय कोश का अर्थ है– अचेतन सत्ता । ( )
4. आनंदमय कोश का अर्थ है– आत्मबोध जागृति। ( )
5. अन्नमय कोश की सिद्धि से निरोगता, दीर्घ जीवन एवं चिर यौवन का लाभ है। ( )

vkiu D;k lh[kk

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आपने सीखा कि

1. यौगिक फिजियोलॉजी से तात्पर्य उस कार्य–पद्धति से है।

2. योग क्रिया विज्ञान, योग विज्ञान की वह शाखा है, जिसमें योग के विभिन्न अभ्यासों का मानव शरीर पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

3. यौगिक फिजियोलॉजी मान्यता के अनुसार मानव शरीर, पांच आवरण या कोश से निर्मित माना जाता है। यह भी माना जाता है कि ये ऊर्जा के स्रोत धारण करती है, जिन्हें योग के अभ्यास से सक्रिय, उत्तेजित तथा प्रभावित किया जा सकता है।

4. वैदिक शास्त्रों में मानव शरीर को तीन शरीरों से निर्मित कहा जाता है, जो कि पंचकोशों से सम्बंधित हैं:

   - स्थूल शरीर
   - सूक्ष्म शरीर
   - कारण शरीर

5. यौगिक फिजियोलॉजी के अनुसार सूक्ष्म शरीर में तीन मुख्य नाड़ी सात स्थान पर आपस में एक–दूसरे से मिलती हैं, जिन्हें सप्त चक्र कहते हैं।

6. सप्त चक्र निम्नांकित हैं,:

   i) मूलाधार चक्र

   ii) स्वाधिष्ठान चक्र

   iii) मणिपुर चक्र

   iv) अनाहत चक्र

   v) विशुद्धि चक्र

   vi) ज्ञान चक्र

   vii) सहस्रार चक्र

7. हमारे उपनिषद् बंधन के पाँच आवरणों का उल्लेख करते है जिन्हे पंच कोश कहा जाता है।

8. पंच कोश दो शब्दों का संयोग है जिसमें पंच का अर्थ पांच तथा संस्कृत साहित्व में कोश का प्रयोग – कटोरा, पीपा, बाल्टी, म्यान, संदूक, ढक्कन, खोल तथा आवरण आदि के अर्थ में होता है। यहाँ इसका अर्थ – आवरण या ढक्कन से ही है।

9. पंचकोश पाँच हैं–

   i) अन्नमय कोश

   ii) प्राणमय कोश

   iii) मनोमय कोश

   iv) विज्ञानमय कोश

   v) आनंदमय कोश

10. मानवीय चेतना को पंचकोशों की दृष्टि से निम्न प्रकार से विभाजित किया जा सकता है:

- अन्नमय कोश का अर्थ है–– इन्द्रिय चेतना।
- प्राणमय कोश का अर्थ है–– जीवनी शक्ति।
- मनोमय कोश का अर्थ है–– विचार बुद्धि।
- विज्ञानमय कोश का अर्थ है– अचेतन सत्ता एवं भाव प्रवाह।
- आनंदमय कोश का अर्थ है– आत्मबोध जागृति।

11. पंचकोशों की पांचसिद्धियाँ हैं, जो मानव जीवन में बहुत महत्व रखती है, जैसे–

- अन्नमय कोश की सिद्धि से निरोगता, दीर्घ जीवन एवं चिर यौवन का लाभ है।
- प्राणमय कोश साहस, शौर्य, पराक्रम प्रभाव, प्रतिभा जैसी विशेषताएँ उभरती है।
- मनोमय कोश की सिद्धि से दूरदर्शिता तथा बुद्धिमत्ता बढ़ती है और उतार–चढ़ाव में धैर्य संतुलन बना रहता है।
- विज्ञानमय कोश की सिद्धि से सज्जनता और उदार सभ्यता का विकास होता है। देवत्व की विशेषताएँ उभरती है। अतीन्द्रिय ज्ञान, अपरोक्षानुभूति, दिव्य दृष्टि जैसी उपलब्धियां विज्ञानमय कोश की हैं।
- आनंदमय कोश के विकास से चिंतन तथा कृर्त्तत्व दोनों ही इस स्तर के बन जाते हैं कि हर घड़ी आनंद छाया रहे, संकटों का सामना ही ना करना पड़े। ईश्वर दर्शन, आत्म साक्षात्कार, स्वर्ग, मुक्ति जैसी महान विशेषताएँ आनंदमय कोश की ही देन है।

fVIi.kh

bdkb d vUr e i’u

1. योग क्रिया विज्ञान (फिजियोलॉजी) से आप क्या समझते हैं? विस्तार से समझाइए।
2. उपनिषदों के अनुसार पंचकोश का अर्थ स्पष्ट कीजिए और इसके वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए।
3. पांचों कोशों का विस्तार से वर्णन कीजिए और उनके अनावरण की विधि को समझाइए।
4. मानव जीवन में पंचकोश के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

bdkbxr i'uk d mÙkj

2-1

1. पंचकोशों से
2. सप्त चक्र
3. आनंदमय कोश

2-2

1. पंचकोश
2. आवरण
3. आनंदमय कोश

2-3

1. आवरण
2. प्राणमय कोश
3. मनोमय कोश
4. विज्ञान कोश
5. पांच

2-4

1. सही 2. सही 3. गलत 4. सही 5. सही

3

यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व इकाई (यूनिट) में आपने यौगिक फिज़ियोलॉजी को जाना और आपने यह ज्ञान प्राप्त किया कि मानव शरीर में ऊर्जा, पाँच आवरण कोश के रूप में विद्यमान रहती हैं। इन पाँच कोशों के सन्तुलित रहने पर, विभिन्न शारीरिक और मानसिक क्रियाएँ सुव्यवस्थित रूप से होती रहती हैं और शरीर एवं मन स्वस्थ बना रहता है। इसके साथ-साथ आपने शरीर में स्थित नाड़ियों और ऊर्जा के केन्द्रों अर्थात् चक्रों के विषय में भी ज्ञान प्राप्त किया। अब यहाँ पर यह प्रश्न उत्पन्न होता है, कि किस प्रकार शरीर में ऊर्जा के प्रवाह को सन्तुलित बनाया जा सकता है और किस प्रकार शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाते हुए समग्र स्वास्थ्य की अवस्था को प्राप्त किया जा सकता है। विशेष रूप से मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं जैसे बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था में जब शरीर में ऊर्जा का स्तर भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में रहता है और अलग-अलग प्रकार की समस्याओं और चुनौतियों का सामना मनुष्य को करना होता है। जीवन की इन अलग-अलग अवस्थाओं में किस प्रकार यौगिक प्रबन्धन को अपनाकर मनुष्य अपने समग्र स्वास्थ्य को उन्नत बना सकता है।

वर्तमान काल में, मनुष्य की अव्यवस्थित दिनचर्या, विकृत आहार-विहार, बढ़ता वातावरणीय प्रदूषण, विलासितापूर्ण जीवनशैली और मानसिक तनाव आदि ऐसे प्रमुख कारक हैं जिन्होनें वर्तमान समय में मनुष्य के स्वास्थ्य के स्तर पर बहुत नकारात्मक प्रभाव डाला है। इन कारकों के परिणामस्वरूप मनुष्य की शारीरिक और मानसिक ऊर्जा का स्तर असन्तुलित हो रहा है और समग्र स्वास्थ्य की प्राप्ति नहीं हो पाती है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) के अन्तर्गत मनुष्य के समग्र स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में यौगिक प्रबन्धन की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में यह स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार यौगिक प्रबन्धन को अपनाकर जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में समग्र स्वास्थ्य को उन्नत बना सकते हैं। इसके साथ–साथ विभिन्न क्षेत्र जैसे सुरक्षाबल, पर्यटन और सामान्य जन भी अपनी फिटनेस को यौगिक प्रबन्धन के माध्यम से उन्नत अवस्था में बनाए रख सकते हैं।

fVIi.kh

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन के सामान्य परिचय पर प्रकाश डाल सकेगें;
- बाल्यावस्था का यौगिक प्रबन्धन कर सकेंगे;
- किशोरावस्था का यौगिक प्रबन्धन करने में सक्षम हो सकेंगे;
- युवावस्था का यौगिक प्रबन्धन करने में सक्षम हो सकेंगे;
- वृद्धावस्था का यौगिक प्रबन्धन समझ सकेंगे;
- खिलाड़ियों के जीवन का यौगिक प्रबन्धन समझ सकेंगे;
- सुरक्षाबलों का यौगिक प्रबन्धन व्यवहार में ला सकेंगे;
- सामान्य शारीरिक फिटनेस का यौगिक प्रबन्धन समझा सकेंगे;
- पर्यटकों का यौगिक प्रबन्धन कर सकेंगे।

3-1 ;kSfxd LokLF; izcU/ku dk lkekU; ifjp;

प्रिय शिक्षार्थियों, यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन में तीन शब्दों को लिया गया है। योग, स्वास्थ्य और प्रबंन्धन के मिलने से इस शब्द की उत्पत्ति होती है। इन तीनों शब्दों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि योग के द्वारा स्वास्थ्य का प्रबन्धन करना ही 'यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन' कहलाता है। योग शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा की 'युज' धातु से हुई है। जिसका अर्थ होता है मिलना या जुड़ना। यहाँ पर आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ने के अर्थ में योग शब्द को लिया गया है। आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ने के लिए योगाभ्यास का उपदेश किया गया है। इस हेतु महर्षि पतंजलि के द्वारा अष्टांग योग का उपदेश किया गया है। इसमें यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि योग के आठ अंगों का उपदेश किया गया है। इसी प्रकार हठयोग के ग्रन्थों में योग के सप्त साधनों का वर्णन किया गया है। इन सप्त साधनों में षट्कर्म, आसन, मुद्रा-बन्ध, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि का वर्णन किया गया है। इन योगांगों का पालन करने से शरीर, मन और आत्मा में निर्मलता उत्पन्न होने के साथ समन्वय स्थापित होता है और आत्मसाक्षात्कार होते हुए साधक को मुक्ति की अवस्था प्राप्त होती है। इस अवस्था पर प्रकाश डालते हुए महर्षि पतंजलि उपदेश करते हैं-

rnk n"V% Lo:is·oLFkkueA

(पा. योगसूत्र 1/3)

अर्थात् चित्तवृत्ति निरोध की इस अवस्था में दृष्टा (आत्मा) अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है।

उपरोक्त यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक और निरन्तर अभ्यास करने से आत्मा पूर्ण रूप से निर्मल होकर

fVIi.kh

परमात्मा के साथ आनन्दमय हो जाती है। इसके साथ-साथ उपरोक्त योगाभ्यास मनुष्य को समग्र रूप से स्वस्थ बनाने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। नियमित योगाभ्यास करने से मनुष्य का स्वास्थ्य उन्नत अवस्था को प्राप्त होता है। स्वास्थ्य शब्द की उत्पत्ति स्व और स्थ के मिलने से होती है। स्व का अर्थ स्वयं अर्थात् शरीर, मन और आत्मा से होता है और स्थ का अर्थ होता है-स्थित होना। अर्थात् स्वास्थ्य एक सकारात्मक अवस्था है जिसमें शरीर, मन और आत्मा अपने-अपने स्वरूप में स्थित होते हैं। स्वास्थ्य को परिभाषित करते हुए आयुर्वेद शास्त्र के विद्वान आचार्य सुश्रुत कहते हैं-

lenks"k% lekfXu'p le/kkrq eyfd;A
izlUukRefUnz; eu% LoLFk bR;fHk/kh;rsAA

(सु.सं. 15/41)

अर्थात् जिसके त्रिदोष सम अवस्था में हैं, जिसके शरीर में अग्नियों का व्यापार सम है, जिसके शरीर में धातुएं सम मात्रा में उपस्थित हैं तथा शरीर में मलों की सम स्थिति है। इसके साथ साथ जिसकी इन्द्रियां, मन व आत्मा में प्रसन्नता के भाव हैं, वही व्यक्ति स्वस्थ है।

इसी प्रकार विश्व स्वास्थ्य संगठन स्वास्थ्य द्वारा स्वास्थ्य की व्याख्या करते हुए कहा गया है-

Health is a state of complete Physical , Mental and Social well being and not merely the absence of disease or infirmity.

अर्थात् केवल रोगों की अनुपस्थिति मात्र को ही स्वास्थ्य नहीं कहा जा सकता है अपितु स्वास्थ्य तो वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्तर पर पूर्ण रूप से स्वस्थ हो।

इस प्रकार स्वास्थ्य का अर्थ केवल शरीर का रोग मुक्त होना ही नहीं होता है अपितु, शरीर के साथ मन का प्रसन्न और इन्द्रियों का क्रियाशील होना और इसके साथ-साथ आत्मा का सकारात्मक ऊर्जा (आत्मबल) से परिपूर्ण होना ही स्वास्थ्य कहलाता है। इसे ही समग्र स्वास्थ्य (Holistic Health) की संज्ञा दी जाती है।

प्रबन्धन का अर्थ होता है सुव्यवस्थित एवं योजनाबद्ध रूप से समुचित उपयोग करना। वास्तव में प्रबन्धन शब्द का प्रयोग अधिकांशतया व्यवसाय के क्षेत्र में किया जाता है। जहाँ पर एक व्यवसायी अपने पास उपलब्ध संसाधनों का योजनाबद्ध और अनुशासित रूप से प्रयोग करता हुआ अधिक सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने का प्रयास करता है। प्रबन्धन की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि इसमें बाहर से कुछ नहीं लिया जाता है, अपितु, जो संसाधन, शक्ति या उपकरण उस समय पर उपलब्ध होते हैं, उनका ही सही योजनाबद्ध रूप से प्रयोग किया जाता है, और उनसे ही पहले की तुलना में अधिक सकारात्मक और अच्छे परिणाम प्राप्त किये जाते हैं। इस व्यवस्थाक्रम को प्रबन्धन (Management) की संज्ञा दी जाती है।

इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यौगिक क्रियाओं का सुनियोजित ढंग से अभ्यास करते हुए शरीर, मन और आत्मा को स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान एवं निरोगी बनाने की कला ही यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन कहलाता है। जैसा कि हमें ज्ञात होता है कि मनुष्य के शरीर में प्रतिक्षण परिवर्तन होता रहता है। इन शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप एक शिशु पहले बालक और फिर युवा का रूप ग्रहण कर लेता है। युवावस्था के उपरान्त मध्यावस्था और इसके उपरान्त प्रौढ़ावस्था के उपरान्त वृद्धावस्था

fVIi.kh

को प्राप्त करना प्रत्येक शरीर का धर्म होता है। जीवन की इन अवस्थाओं से प्रत्येक मनुष्य गुजरता है और जीवन की इन अलग-अलग अवस्थाओं में स्वास्थ्य को उन्नत बनाए रखना प्रत्येक मनुष्य के समक्ष बहुत महत्त्वपूर्ण चुनौती होती है। इस चुनौती का सामना यौगिक प्रबन्धन के द्वारा किया जा सकता है। अतः अब जीवन की विभिन्न अवस्थाओं के यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन पर विचार करते हैं।

3-2 ckY;koLFkk dk ;kfxd izcU/ku

यह मानव जीवन की सबसे मधुर और कोमल अवस्था होती है जिसका समय 6 से 12 वर्ष की आयु होती है। इस अवस्था में मानव शैशवास्था से बाहर आकर संसार से आत्मसात करता है। जीवन की अवस्था की तुलना मनोवैज्ञानिक युंग उस उगते हुए सूर्य के साथ करते हैं जिसमें चमकीलापन का स्तर कम किन्तु, ऊर्जा (क्षमता) बहुत अधिक होती है। ठीक इसी प्रकार बाल्यावस्था ऊर्जाओं का वह संगठित रूप होता है जिसे सही दिशा देने की बहुत अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि, इस अवस्था में सही और गलत का निर्णय करने की विवेक शक्ति अधिक विकसित नहीं होती है। इस अवस्था की प्रमुख विशेषताएं एवं समस्याएँ निम्न होती हैं –

3-2-1 ckY;koLFkk dh izeq[k fo'ks"krk,¡

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य में बाल्यावस्था का जीवन निम्न विशेषताओं और समस्याओं से युक्त होता है-

1) बाल्यावस्था शारीरिक क्षमताओं और मानसिक योग्यताओं के सर्वाधिक विकास की अवस्था होती है। इस अवस्था में बालक का सर्वाधिक विकास होता है जिसमें शारीरिक क्षमताओं और मानसिक योग्यताओं का समावेश रहता है।

2) इस अवस्था में बालक वास्तविक संसार से अपना सम्बन्ध स्थापित करता है। इससे पूर्व वह केवल अपने परिवार तक सीमित होता है, किन्तु, इस अवस्था में वह परिवार के साथ-साथ बाहरी संसार से भी अपना सम्बन्ध स्थापित करने लगता है।

3) इस अवस्था में बालक में प्रबल जिज्ञासाओं की प्रवृत्ति होती है। बालक के मन में नित्य और प्रतिक्षण नए-नए प्रश्न उत्पन्न होते रहते हैं और वह उन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करता रहता है।

4) इस अवस्था में बालक के अन्दर आत्मनिर्भरता की भावना प्रबल होने लगती है। यद्यपि इस अवस्था में बालक पूर्णतया अनुभवहीन होता है परन्तु फिर भी वह प्रत्येक कार्य को स्वत्रंतरूप से करने का प्रयास करता है।

5) इस अवस्था में बालक में रचनात्मक कार्यों को करने की रुचि होती है। वह अपना अधिकांश समय रचनात्मक कार्य करने में व्यतीत करना चाहता है।

6) जीवन की इस आरम्भिक अवस्था में बालक अपने संवेगों पर नियंत्रण प्राप्त करने का प्रयास करता है। इससे पूर्व अवस्था में संवेगों पर नियंत्रण नहीं होता है, किन्तु, इस अवस्था में वह संवेग जैसे भय, क्रोध, हँसना, रोना आदि पर नियंत्रण प्राप्त करने का प्रयास करता है।

7) इस अवस्था में बालक में बर्हिमुखी व्यक्तित्व का विकास होता है। वह अधिक से अधिक बाह्य संसार के साथ जुडकर ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करता है।

8) इस अवस्था में बालक में प्रायः संग्रहात्मक प्रवृत्ति का विकास होता है। इसके साथ-साथ बालक अपने समान विचार और गुण-कर्म स्वभाव से युक्त मनुष्यों को अपना मित्र बनाते हुए अपने सामाजिक दायरे का विस्तार करने का प्रयास करता है।

इस प्रकार मनुष्य की बाल्यावस्था उपरोक्त विशेषताओं से युक्त होती है। वास्तव में यह अवस्था मनुष्य के जीवन का आधार तैयार करती है जिसका यौगिक प्रबन्धन आवश्यक होता है। अतः अब इस अवस्था के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते हैं -

3-2-2 ;kfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, बाल्यावस्था में शरीर, मन और बुद्धि का बहुत तेज़ी से विकास होता है अतः यह मानव जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण अवस्था होती है। इस अवस्था में योग के द्वारा सकारात्मकता का विस्तार करना बहुत आवश्यक होता है। वास्तव में यह अवस्था मिटटी के उस कच्चे घड़े के समान होती है, जिसमें हम जितना और जैसा चाहे परिवर्तन कर सकते हैं किन्तु जिस प्रकार घड़े के परिपक्व हो जाने के उपरान्त उसमें परिवर्तन करना संभव नहीं होता है, ठीक उसी प्रकार मानव जीवन की इस अवस्था को योगाभ्यास के सकारात्मक संस्कारों द्वारा पोषित करने से मानव जीवन को सकारात्मक दिशा प्राप्त हो जाती है। बाल्यावस्था में निम्न योगाभ्यास करने से इस अवस्था का यौगिक प्रबन्धन होता है-

1½ **;e-fu;e ikyu dh f'k{kk-** बच्चों को बाल्यावस्था में यौगिक पाँच यम- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और पाँच नियम- शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधन की शिक्षा अनिवार्य रूप से प्रदान करनी चाहिए। यद्यपि बालक की बुद्धि इन्हें सीधे रूप से समझने में सक्षम नहीं होती है अतः महापुरुषों के उदाहरणों एवं प्रेरणाप्रद प्रसंगों के द्वारा बालकों को बाल्यावस्था में ही यम-नियम की शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। ऐसा करने से बालकों में सूक्ष्म एवं स्थूल स्तर पर श्रेष्ठ संस्कार उत्पन्न होते हैं और उन्हें आत्मबल की प्राप्ति होती है। इसके साथ-साथ बालकों में उत्तम समायोजन शक्ति के साथ जीवन की सभी परिस्थितियों में धैर्यपूर्वक रहने की क्षमता विकसित होती है। यम-नियम का उपदेश करने से बालकों में सकारात्मक मनन-चिन्तन एवं श्रेष्ठ विवेकबुद्धि का उदय होता है।

2½ **"kVdeZ dh 'kf)fØ;kvksa dk vH;kl** - यद्यपि बाल्यावस्था में शरीर स्वच्छ और निर्मल रहता है अतः षट्कर्म की शुद्धि क्रियाओं के अभ्यास की विशेष आवश्यकता नहीं होती है किन्तु, जैसे-जैसे इस अवस्था में बालक की समझ विकसित होती है उन्हें इन शुद्धिक्रियाओं का सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करना चाहिए। बालकों में रुचि उत्पन्न करने के लिए बालकों के समक्ष इन क्रियाओं का प्रदर्शन और लाभों की व्याख्या करनी चाहिए। इसके साथ समय-समय पर बालकों को त्राटक क्रिया का अभ्यास मानसिक स्थिरता और एकाग्रता को प्रदान करने के लिये अवश्य कराना चाहिए।

3½ **vklukssa dk vH;kl }kjk-** बालकों का शरीर बहुत लचीला और हल्का होता है। अतः आठ वर्ष की आयु के उपरान्त बालकों को आसनों के अभ्यास के साथ जोड़ना चाहिए। बालकों को आसनों का लाभ समझाते हुए उन्हें प्रतिदिन योगासनों को अपनी दिनचर्या का अंग बनाने हेतु प्रेरित करना चाहिए और उनकी क्षमता व रुचि के अनुसार आसनों का अभ्यास करवाना चाहिए। बच्चों को ताड़ासन, त्रिकोणासन, वृक्षासन, तितलीआसन, पद्मासन, सिद्धासन आदि योगासनों के साथ प्रातःकाल सूर्यनमस्कार का

fVIi.kh

अभ्यास नियमित रूप से करवाना चाहिए। बच्चों को इन आसनों का अभ्यास अपने सम्मुख और दिशा निर्देश के अनुसार करवाना चाहिए। इन आसनों का अभ्यास करने से बाल्यावस्था से ही शरीर लचीला, क्रियाशील, हल्का, सन्तुलित और निरोगी बना रहता है और बालकों की रोग प्रतिरोधक क्षमता का स्तर उन्नत बना रहता है। इससे बालकों में मानसिक प्रसन्नता और बौद्धिक क्रियाशीलता बनी रहती है।

4½ **enk vkj cU/kksa dk vH;kl** - यद्यपि बाल्यावस्था में मुद्राओं और बन्धों का विशेष ज्ञान नहीं होता है किन्तु फिर भी बाल्यावस्था में यौगिक मुद्राओं जैसे योगमुद्रा, ब्रह्ममुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, महामुद्रा आदि का सैद्धान्तिक ज्ञान एवं लाभों का वर्णन बालकों के सम्मुख करना चाहिए।

5½ **izR;kgkj dk ikyu** - बाल्यावस्था में प्रत्याहार पालन का बहुत विशेष महत्त्व होता है। जैसा कि हमें पूर्व में अध्ययन किया है कि जीवन की इस आरम्भिक अवस्था में इन्द्रियां बाहरी संसार की ओर बहुत तेज़ी से दौड़ती रहती हैं और बालकों के मन को स्थिर नहीं होने देती हैं। अतः इस अवस्था में प्रत्याहार पालन अर्थात् इन्द्रियों पर संयम की शिक्षा बालकों को अवश्य प्रदान करनी चाहिए। इसके साथ-साथ बालकों की दिनचर्या को सुव्यवस्थित और आहार-विहार को शुद्ध सात्विक बनाना चाहिए।

6½ **izk.kk;ke dk vH;kl**- जहाँ तक हो सके बाल्यावस्था (आठ वर्ष की आयु के उपरान्त) बालकों को प्राणायाम का हल्का अभ्यास करवाना चाहिए। इस अवस्था में बच्चों को बन्धों का अभ्यास नहीं करवाना चाहिए अपितु, अनुलोम-विलोम के साथ भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप नियमित रूप से करवाना चाहिए।

7½ **/;ku dk vH;kl**- बालकों को ध्यान के अभ्यास के साथ जोड़ना चाहिए। बच्चों में ध्यान के प्रति जागरुकता और रुचि को उत्पन्न करते हुए स्थूल ध्यान एवं ज्योतिर्ध्यान का समय-समय पर अभ्यास करवाना चाहिए।

8½ **lekf/k dh ldkjkRed vuHkfr;k** - बाल्यावस्था से ही बालकों को सकारात्मक अनुभूतियों की शिक्षा देनी चाहिए। बालकों के मनःस्थिति को समझकर उन्हें अच्छे प्रेरणाप्रद प्रसंग सुनाने चाहिए। बालकों को सकारात्मक अनुभूतियाँ कराने से उनमें बाल्यावस्था से ही आत्मबल विकसित होने लगता है।

इस प्रकार उपरोक्त योगांगों की शिक्षा एवं अभ्यास से मानव जीवन की बाल्यावस्था का यौगिक प्रबन्धन करना चाहिए। अब मानव जीवन की बाल्यावस्था से अगली किशोरावस्था के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते हैं-

bdkbZxr i'u&3-1

रिक्त स्थान भरिए –

क) बाल्यावस्था में बालक का ..... विकास होता है। (सर्वाधिक/कम)

ख) बाल्यावस्था में बालक में ..... कार्यों को करने की रुचि होती है। (रचनात्मक/क्रियात्मक)

ग) बालकों का शरीर बहुत ..... और हल्का होता है। (कठोर/लचीला)

3-3 fd'kksjkoLFkk dk ;kfxd izcU/ku

यह मानव जीवन की बाल्यावस्था से अगली अवस्था होती है जिसका समय 12 से 18 वर्ष की आयु होती है। यह अवस्था व्यक्तित्व निर्माण की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अवस्था होती है जिसमें बाल्यावस्था से प्राप्त संस्कारों को स्थाई रूप से धारण करते हुए बालक किशोर का रूप ग्रहण कर लेता है। जीवन की यह अवस्था बहुत महत्त्वपूर्ण होती है क्योंकि इस अवस्था में ज्ञान और ऊर्जा का विकास बहुत तेज़ी से होता है किन्तु अनुभवहीनता के कारण अच्छे-बुरे की पहचान अथवा सही-गलत का निर्णय करने की विवेक शक्ति अधिक विकसित नहीं होती है। इस अवस्था की प्रमुख विशेषताएं एवं समस्याएँ निम्न होती हैं-

3-3-1 fd'kksjkoLFkk dh izeq[k fo'ks"krk,a

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य की किशोरावस्था का जीवन निम्न विशेषताओं और समस्याओं से युक्त होता है-

1) बाल्यावस्था में शारीरिक क्षमताओं, मानसिक योग्यताओं एवं बौद्धिक ज्ञान शक्ति का विकास बहुत तेज़ी से होता है और किशोरावस्था में क्षमताएं व योग्यताएं स्थाई रूप ग्रहण करने लगती हैं।

2) इस अवस्था में संवेगात्मक विकास बहुत तेज़ी से होता है और किशोरावस्था में संवेगात्मक स्थिरता उत्पन्न होने लगती है।

3) यह अवस्था बुद्धि के सर्वाधिक विकास की अवस्था होती है जिसमें अधिकतम ज्ञान प्राप्त करने के साथ मानसिक परिपक्वता और स्वतंत्रता आना प्रारम्भ हो जाती हैं।

4) मानव जीवन की इस अवस्था में संज्ञानात्मक विकास बहुत तेज़ी से होता है और किशोरावस्था में धारणाएं परिपक्व रूप ग्रहण करने लगती है।

5) किशोरावस्था व्यक्तित्व विकास की बहुत महत्त्वपूर्ण अवस्था होती है जिसमें शारीरिक संरचना और मानसिक गुणों में परिपक्वता आने लगती है जिसके परिणामस्वरूप उसके व्यक्तित्व की पहचान होने लगती है।

इस प्रकार मनुष्य की किशोरावस्था उपरोक्त विशेषताओं से युक्त होती है। जिसका यौगिक प्रबन्धन आवश्यक होता है। अतः अब इस अवस्था के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते हैं-

3-3-2 ;kfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, किशोरावस्था में स्वयं की अधिक समझ विकसित नहीं होती है। अतः इस अवस्था में हमें किशोरों को अपने निर्देशन या योग्य अनुभवी गुरु के निर्देशन में ही यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करवाना चाहिए। किशोरावस्था में निम्न यौगिक प्रबन्धन करते हुए किशोरों के अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहिए-

1½ **;e-fu;e ikyu dh f'k{kk-** किशोरावस्था में किशोरों को यम-नियम का उपदेश करते हुए इनको दृढ़ता के साथ पालन करने की शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

2½ **"kV~de dh 'kf)fØ;kvksa dk vH;kl** - किशोरावस्था में षट्कर्म की छः शुद्धि क्रियाओं का सैद्धान्तिक ज्ञान दृढ़ करवाते हुए किशोरों की आवश्यकता और क्षमता के अनुसार इनका नियमित अभ्यास करवाना चाहिए।

3½ **vklukas dk vH;kl }kjk-** किशोरावस्था में किशोरों को नियमित आसनों का अभ्यास करवाना चाहिए। इस अवस्था में किशोरों की दिनचर्या में योगासनों को सम्मिलित करना चाहिए। सामान्य आसनों से प्रारम्भ करवाते हुए कठिन आसनों का नियमित अभ्यास किशोरावस्था में करवाना चाहिए। किशोरावस्था में शरीर की लम्बाई में वृद्धि करवाने हेतु ताड़ासन, वजन को नियंत्रित करने हेतु सूर्यनमस्कार और रीढ़ को लचीला बनाने हेतु चक्रासन व धनुरासन का नियमित रूप से अभ्यास करवाना चाहिए।

4½ **eqnzk vkSj cU/kksa dk vH;kl** - इस अवस्था में शरीरोपयोगी यौगिक मुद्राओं जैसे योगमुद्रा, ब्रह्ममुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, महामुद्रा आदि का सैद्धान्तिक ज्ञान एवं अभ्यास किशोरों को करवाना चाहिए।

5½ **izR;kgkj dk ikyu** - इन्द्रियों पर संयम की शिक्षा किशोरों को प्रदान करने के साथ इनकी दिनचर्या को अनुशासित, सुव्यवस्थित और आहार-विहार को शुद्ध सात्विक बनाना चाहिए।

6½ **izk.kk;ke dk vH;kl-** किशोरावस्था में विधिपूर्वक प्राणायामों को अभ्यास करवाना चाहिए। इस अवस्था में शरीर में वात-पित्त और कफ की अवस्था के अनुसार नाड़ीशोधन, सूर्यभेदी, उज्जायी, भस्त्रिका और भ्रामरी प्राणायाम को करना चाहिए।

7½ **/;ku dk vH;kl-** किशोरावस्था में मन को स्थिर और एकाग्र करने हेतु ध्यान के अभ्यास की बहुत आवश्यकता होती है अतः किशोरों को नियमित रूप से ध्यान का अभ्यास करवाना चाहिए।

8½ **lekf/k dh ldkjkRed vuqHkwfr;k** - किशोरावस्था में किशोरों का ध्यान सकारात्मक अनुभूतियों की ओर आकृष्ट करवाना चाहिए। इससे उनका जीवन तनाव से मुक्त बना रहता है। सकारात्मक अनुभूतियाँ करते हुए निरन्तर अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर होने का उपदेश किशोरों को करना चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त योगाभ्यास के द्वारा किशोरावस्था का यौगिक प्रबन्धन करना चाहिए। अब मानव जीवन की युवावस्था के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते हैं-

3-4 ;qokoLFkk dk ;kSfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव जीवन में किशोरावस्था से अगला चरण युवावस्था होती है। यह अवस्था 18 वर्ष की आयु से प्रारम्भ हो जाती है, जिसमें बालक शारीरिक क्षमताओं और मानसिक योग्यताओं से परिपूर्ण माना जाता है। इस अवस्था की तुलना मनोवैज्ञानिक युग दोपहर के सूर्य के साथ करते हैं और इस काल को जीवन का दोपहर कहते हैं। इस अवस्था में मनुष्य अपनी योग्यताओं और क्षमताओं का सर्वाधिक उपयोग करते हुए जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर होता है। जीवन की इस महत्त्वपूर्ण अवस्था की प्रमुख विशेषताएं एवं समस्याएँ निम्न होती हैं-

fVIi.kh

3-4-1 ;okoLFkk dh ie[k fo'k"krk,

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य में युवावस्था का काल उत्साह, उमंग और जोश से परिपूर्ण होता है इस काल की विशेषताएँ और समस्याएँ निम्न होती हैं-

1) शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहते हुए अपनी क्षमताओं और योग्यताओं का अधिकतम सदुपयोग करना।

2) स्वयं को उपयुक्त रोज़गार के साथ जोड़कर उसे आगे बढ़ाने का प्रयास करना।

3) अपने पारिवारिक और सामाजिक दायित्त्वों को पूरा करने का प्रयास करना।

4) अपने व्यक्तित्व को परिष्कृत करते हुए उन्नत बनाने का प्रयास करना।

5) अपनी पूर्ण सामर्थ्य से जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करना।

इस प्रकार युवावस्था में मनुष्य के सामने उपरोक्त लक्ष्य और चुनौतियाँ विद्यमान रहती हैं। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए युवावस्था में युवा अधिकतम परिश्रम करता है अतः इस अवस्था में यौगिक प्रबन्धन बहुत आवश्यक होता है, क्योंकि यौगिक प्रबन्धन से वह शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहता हुए अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता रहे। इस अवस्था में मनुष्य को निम्न यौगिक प्रबन्धन अपनाना चाहिए-

3-4-2 ;kfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, युवावस्था में मनुष्य को निम्न योगांगों का पालन करते हुए यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक और नियमित रूप से अभ्यास करना चाहिए-

1½ **;e-fu;e dk ikyu djuk-** युवावस्था में अष्टांग योग में वर्णित यम-नियम का व्रत के रूप में दृढ़ता के साथ पालन करना चाहिए। ऐसा करने से नकारात्मक विचारों से मुक्ति प्राप्त होने के साथ सकारात्मक ऊर्जा की प्राप्ति होती है। सकारात्मक ऊर्जा से आत्मबल की प्राप्ति होती है जो इस अवस्था में बहुत आवश्यक होता है।

2½ **"kVde dh 'kf)fØ;kvk dk vH;kl djuk-** युवावस्था में शरीर को रोगों से मुक्त बनाने एवं स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बनाने के लिए शरीर की आवश्यकता (शरीर में वात-पित्त और कफ दोष की अवस्थानुसार) और क्षमता के अनुसार षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास बहुत करना चाहिए।

3½ **vkluk dk vH;kl djuk-** युवावस्था में प्रतिदिन योगासनों को अपनी दिनचर्या का अंग बनाना चाहिए। योगासनों में प्रातःकाल सूर्यनमस्कार, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए।

4½ **ik.kk;ke dk vH;kl djuk-** युवावस्था में प्रतिदिन विधिपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

इससे प्राणशक्ति का विस्तार एवं रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर और मन के मध्य सन्तुलन स्थापित होता है और नाड़ियों का मल दूर होने के साथ चित्त निर्मल और मन प्रसन्न होता है। अतः युवावस्था में विधिपूर्वक उज्जायी, शीतली, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए।

5½ **iR;kgkj dk ikyu djuk-** युवावस्था में प्रत्याहार का पालन करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्विक आहार-विहार करना चाहिए। अपनी इन्द्रियों पर संयम करते हुए मन को स्थिर और एकाग्र बनाने का प्रयास करना चाहिए।

6½ **ldkjkRed /kkj.kk cukuk -** युवावस्था में सकारात्मक धारणा बनाते हुए युवाओं द्वारा जीवन की सभी समस्याओं का सामना धैर्यपूर्वक करना चाहिए।

7½ **/;ku dk vH;kl djuk-** युवावस्था में प्रतिदिन विधिपूर्वक ध्यान का अभ्यास करना चाहिए।

8½ **lekf/k dh ldkjkRed vuqHkwfr;ksa }kjk -** युवावस्था में युवाओं को सकारात्मक विषयों का ध्यान करते हुए अपने चारों ओर सकारात्मक वातावरण का निर्माण करना चाहिए। युवाओं को अपनी योग्यताओं और क्षमताओं का सकारात्मक दिशा में प्रयोग करना चाहिए।

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान समय में युवाओं द्वारा नियमित योगाभ्यास करते हुए अपनी युवावस्था का यौगिक प्रबन्धन करना चाहिए। इससे युवाओं का जीवन दुंर्गुण और दुर्व्यसनों से मुक्त रहता हुआ स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बना रहता है। अब इस विषय में आगे बढ़ते हुए प्रौढ़ावस्था के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते हैं-

bdkbZxr iz'u&3-2

सही/गलत बताइए–

क) किशोरावस्था में क्षमताएँ व योग्यताएं स्थाई रूप ग्रहण करने लगती हैं। ( )

ख) किशोरों को मन को स्थिर एवं एकाग्र करने हेतु ध्यान की आवश्यकता नहीं होती। ( )

ग) युवावस्था में प्रतिदिन विधिपूर्वक प्राणायाम करने से प्राणशक्ति का विस्तार एवं रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। ( )

3-5 izkS<koLFkk dk ;kSfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव जीवन में युवावस्था का अगला चरण प्रौढ़ावस्था होती है। इस अवस्था को मध्यावस्था भी कहा जाता है। यह अवस्था लगभग 40-45 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होती है, जिसमें युवा अपनी शारीरिक क्षमताओं और मानसिक योग्यताओं का उपयोग करता हुआ अपने मुकाम पर पहुंच गया होता है और अब उसे जो प्राप्त करना था, वह उसे प्राप्त कर चुका होता है। मनोवैज्ञानिक युंग जीवन की इस अवस्था की तुलना अपराहन के तीसरे पहर के साथ करते हैं, जिसमें सूर्य ढलना प्रारम्भ होने लगता है। इस अवस्था

में मनुष्य के भीतर नकारात्मक भाव आने प्रारम्भ होने लगते हैं। इसके साथ शरीरिक स्वास्थ्य में भी समस्याएँ प्रारम्भ हो जाती है। अतः इस अवस्था का यौगिक प्रबन्धन बहुत अनिवार्य हो जाता है। प्रौढ़ावस्था में निम्न यौगिक प्रबन्धन अपनाना चाहिए-

प्रौढ़ावस्था में सर्वप्रथम यौगिक यम-नियम का पालन अधिक दृढ़ता के साथ करना चाहिए। इस अवस्था में मनुष्य को सर्वत्र और सभी परिस्थितियों में अहिंसा और सत्य आदि यम-नियम का पालन व्रत के रूप में करना चाहिए। इससे नकारात्मकता का नाश और सकारात्मकता का उदय होता है। इसके साथ-साथ योगसूत्र में वर्णित अनुशासन को अपनी दिनचर्या का महत्त्वपूर्ण अंग बनाना चाहिए। यहाँ पर अनुशासन से अभिप्राय है स्वयं का स्वय पर संयम करने से है। अर्थात् इस अवस्था में स्वतः ही स्वयं के विचारों, भाषा, आदतों, खान-पान एवं व्यवहार को नियम संयम के साथ जोड़ना चाहिए। जीवन की इस अवस्था में विचारों की पवित्रता, सभ्य-सुशील भाषाशैली, अच्छी आदतें, सात्विक आहार और सकारात्मक-मधुर व्यवहार बहुत अनिवार्य एवं अपेक्षीय हो जाता है। प्रातःकाल सूर्योदयपूर्व निश्चित समय पर उठने की दिनचर्या बनाते हुए निश्चित समय पर अपनी क्षमता और शरीर की आवश्यकता के अनुसार षट्कर्म की शुद्धि क्रियाओं, योगासनों, प्राणायाम और ध्यान की क्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए। इस अवस्था में अपने सभी कार्य पूर्ण जिम्मेदारी और कर्तव्यनिष्ठा के साथ पूर्ण मनोयोग से करने चाहिए।

इस अवस्था में जीवन के अनुभवों से प्राप्त ज्ञान से धैर्य के स्तर को उन्नत बनाना चाहिए। प्रतिदिन स्वाध्याय के साथ ध्यान के द्वारा स्वयं का साक्षात्कार करना चाहिए और सकारात्मक दृष्टिकोण को विकसित करते हुए अपने व्यक्तित्व को प्रतिक्षण परिष्कृत करने का प्रयास निरन्तर करते रहना चाहिए।

3-6 o`)koLFkk dk ;kSfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव जीवन के अन्तिम चरण के रूप में वृद्धावस्था का वर्णन आता है। प्रसिद्ध पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक युंग इस अवस्था को जीवन की शाम की संज्ञा देते हुए कहते हैं कि इस अवस्था में मनुष्य मृत्यु के भय, पश्चाताप और नकारात्मकता से घिरा हुआ रहता है और यह सोचता रहता है कि, कौन सी रात उसके लिए अन्तिम होगी। परन्तु, इस दर्शन के विपरीत भारतीय संस्कृति में यह मानव जीवन की सबसे अधिक ज्ञान, सम्मान और आनन्दमयी अवस्था मानी गयी है, जिसमें व्यक्ति को अपनी जीवनयात्रा के कार्यों से पूर्ण सन्तोष रहता है और वह उस सन्तोष की अन्तः अनुभूति के साथ सांसारिक कर्तव्यों से मुक्त होकर ईश्वर की आध्यात्मिक दुनिया के साथ अपना दृढ़ सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। इस अवस्था में मनुष्य सर्वत्र ईश्वरीय आनन्द को अनुभव करता हुआ उसमें लीन रहता है और नियमित योगाभ्यास करते हुए मृत्यु के भय अर्थात् अभिनिवेश क्लेश से मुक्त होकर संसार सागर से तर जाता है। इस अवस्था में निम्न यौगिक प्रबन्धन करना चाहिए।

वृद्धावस्था में मनुष्य यम-नियम का पालन आदर्श रूप में करता है। इसके साथ-साथ शरीर की आवश्यकता और क्षमतानुसार नेति, धौति, शंखप्रक्षालन, नौली, त्राटक और कपालभाति आदि का विधिपूर्वक अभ्यास करना चाहिए। चूंकि इस अवस्था में शरीर की क्षमता कम हो जाती है, अतः कठिन आसनों का अभ्यास संभव नहीं हो पाता है किन्तु, इस अवस्था में नियमित रूप से सूक्ष्म अभ्यास, हल्के आसन और सूर्यनमस्कार का अभ्यास अपनी दिनचर्या का अंग बनाकर करना चाहिए। इस अवस्था में इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित करते हुए

आचार-विचार और व्यवहार में संयम करना चाहिए। इस अवस्था में प्राण तत्व का विस्तार करने के उद्देश्य से नियमित रूप से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

वृद्धावस्था में शरीर और मन को स्थिर व एकाग्र बनाते हुए नियमित ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। निरन्तर ध्यान और प्रार्थना के अभ्यास से आत्मसाक्षात्मकार करते हुए ईश्वर से प्रगाढ़ सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। इस अवस्था में ईश्वर के साथ संयुक्त होकर समाधि की अवस्था में लीन होने का प्रयास करना चाहिए। वृद्धावस्था में नित्यप्रति श्रेष्ठ मोक्ष प्रदत्त ग्रन्थों का अध्ययन एवं मनन-चिन्तन करना चाहिए और महर्षि पतंजलि द्वारा प्रेणित योगसूत्र के अनुसार सुखी मनुष्यों से मित्रता के भाव, दुखी प्राणियों से करुणा, पुण्यात्माओं से प्रसन्नता और पापात्माओं के प्रति उपेक्षा के भाव रखते हुए सदैव अपने चित्त को निर्मल रखते हुए ईश्वरीय आनन्द में लीन रहना चाहिए।

इस प्रकार वृद्धावस्था में उपरोक्त योगाभ्यास द्वारा जीवन प्रबन्धन करते हुए इस महत्त्वपूर्ण अवस्था को आनन्दमय, क्रियाशील, रोगमुक्त, स्वस्थ और सार्थक बनाए रखना चाहिए।

3.7 खिलाड़ियों के लिए यौगिक प्रबन्धन

प्रिय शिक्षार्थियों, खेल का क्षेत्र प्रत्येक मानव जीवन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। खेल के द्वारा एक ओर जहाँ मनुष्य स्वयं का शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास करता है तो वहीं दूसरी ओर खेल को अपना केरियर बनाकर खिलाड़ी के रूप में अपने परिवार, समाज और राष्ट्र का नाम रोशन करता है। परन्तु, एक खिलाड़ी का जीवन बहुत चुनौतियों और समस्याओं से भरा हुआ रहता है। अतः खिलाड़ियों के लिए यौगिक प्रबन्धन करना बहुत आवश्यक होता है।

एक खिलाड़ी को अपने जीवन में सबसे अधिक उत्तम और मजबूत आत्मबल की आवश्यकता पड़ती है जिसके आधार पर वह अपने खेल में सर्वश्रेष्ठ प्रर्दशन करने में सक्षम बन सके। इसे प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम यौगिक अनुशासन को अपनी दिनचर्या का अंग बनाना चाहिए। इसके साथ-साथ यम-नियम का पालन करने से आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। खिलाड़ियों द्वारा शरीर को हल्का, लचीला और निरोगी बनाने के लिए नियमित रूप से योगासनों का अभ्यास करना चाहिए। योगासनों के क्रम में सूक्ष्म अभ्यास से प्रारम्भ करते हुए क्षमतानुसार सूर्यनमस्कार, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। योगासनों के साथ प्राण ऊर्जा में वृद्धि करने के उद्देश्य से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम के क्रम में दीर्घ श्वास-प्रश्वास से प्रारम्भ करते हुए सूर्यभेदी, उज्जायी, शीतली, शीत्कारी, भस्त्रिका, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए।

आसन और प्राणायाम के अभ्यास के उपरान्त खिलाड़ियों को शारीरिक और मानसिक ऊर्जा को संगठित करने के लिए ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। अपने मन में सकारात्मक धारणा बनाकर सकारात्मक और ऊर्जावान लक्ष्यों का ध्यान करना चाहिए। इससे शरीर और मन का तनाव दूर होता है और सकारात्मक ऊर्जा की प्राप्ति होती है। इन योगाभ्यास के साथ खिलाड़ियों को सकारात्मक अनुभूतियाँ करते हुए अपनी क्षमताओं में वृद्धि करना चाहिए। इस प्रकार उपरोक्त योगांगों का पालन एवं यौगिक क्रियाओं के द्वारा

खिलाड़ी अपनी क्षमताओं और योग्यताओं का समुचित उपयोग करते हुए, अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर होता है।

3-8 lj{kkcyk d fy, ;kfxd i:cU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है समाज में प्रत्येक मनुष्य की भूमिका बहुत विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण होती है। परन्तु, समाज को सही प्रकार से चलाने में कुछ व्यक्ति उस कड़ी के रूप में क्रियाशील रहते हैं जो पूरे समाज को व्यवस्थित रूप से जोड़ने का कार्य करती हुई समाज को सदैव सुरक्षित बनाए रखती है। इस कड़ी के रूप में हमारे सुरक्षाबल के जवान सदैव चौबीसों घन्टे राष्ट्र सेवा में तत्पर रहते है जिनके ऊपर सम्पूर्ण राष्ट्र की सुरक्षा की जिम्मेदारी होती है। सुरक्षाबल राष्ट्र की वह महत्त्वपूर्ण कड़ी होती हैं जो समाज और राष्ट्र की बाहरी और आन्तरिक दोनों ओर से सुरक्षा का महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। सुरक्षाबल परिवारों से दूर रहकर अपना राष्ट्र सुरक्षा कर्त्तव्यपालन को निभाने का कार्य करते हैं। इनका जीवन बहुत चुनौतीपूर्ण होता है, अतः इनका शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ होना बहुत आवश्यक होता है। इस सम्बन्ध में नियमित योगाभ्यास करते हुए अपने जीवन का यौगिक प्रबन्धन करना बहुत आवश्यक होता है। यौगिक प्रबन्धन से सुरक्षाबल स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त रहते हुए, अपने कर्त्तव्यपालन का निर्वाह सभी प्रकार करने में सक्षम होते हैं।

सुरक्षा बलों को शरीर शोधनार्थ और वात-पित्त, कफ दोषों को शरीर में सम बनाए रखने हेतु षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का अभ्यास करने की आवश्यकता होती है। अतः इन्हें कुशल निर्देशन में शरीर की आवश्यकता और क्षमतानुसार नेति, धौति, शंखप्रक्षालन, नौली, त्राटक और कपालभाति आदि शोधन क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करना चाहिए। शुद्धिक्रियाओं के साथ-साथ आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करने से सुरक्षाबलों का शरीर हल्का, लचीला, स्वस्थ एवं रोगों से मुक्त बना रहता है। इसके साथ-साथ शरीर का वजन सन्तुलित रहता है। आसनों के क्रम में सूर्यनमस्कार से प्रारम्भ करते हुए शरीर को लचीला और दृढ़ बनाने वाले आसन जैसे- पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तनासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। योगासनों के साथ-साथ प्राणतत्व को उन्नत बनाने प्रातःकाल सुरक्षाबलों को सामूहिक एवं व्यक्तिगत रूप से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम के क्रम में दीर्घ श्वास-प्रश्वास से प्रारम्भ करते हुए सूर्यभेदी, उज्जायी, शीतली, शीत्कारी, भस्त्रिका, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए। इससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता उन्नत बनने के साथ जीवनी शक्ति को प्रबल बनाने का कार्य करती है।

चूंकि सुरक्षाबलों का कार्य बहुत जिम्मेदारी और एकाग्रता से भरा होता है, अतः इस कार्य को भली-भांति सम्पन्न करने के लिए इन्हें नियमित रूप से ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। ध्यान के द्वारा तनाव का निवारण करते हुए, सकारात्मक ऊर्जा को ग्रहण करना चाहिए और सम-विषम दोनों परिस्थितियों में धैर्य पूर्वक एकसमान रहना चाहिए। सुरक्षाबलों को सदैव अनुशासित रहते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या का पालन करना चाहिए।

fVIi.kh

3-9 fQVul d fy, ;kfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, वर्तमान समय में अव्यवस्थित दिनचर्या, रसायनों से युक्त विकृत आहार-विहार और मानसिक तनाव के परिणामस्वरूप शरीर की फिटनेस को सन्तुलित बनाए रखना बहुत जटिल होता जा रहा है। दिनचर्या के अभाव में आहार का क्रम अव्यवस्थित होता है और पाचन क्रिया अव्यवस्थित हो जाती है। इनके साथ-साथ मानसिक तनाव के परिणाम स्वरूप शरीर में हार्मोन्स का स्तर असन्तुलित हो जाता है जिससे थायरॉयड और मधुमेह जैसे रोगों की चपेट में आने से शरीर की फिटनेस विकृत हो जाती है। इन सभी अवस्थाओं से मुक्ति प्राप्ति का श्रेष्ठतम विकल्प यौगिक प्रबन्धन है। यौगिक प्रबन्धन के द्वारा मनुष्य बहुत सरलता, सहजता और प्राकृतिक रूप से फिटनेस को उन्नत बना सकता है।

फिटनेस को उन्नत बनाने के लिए, शरीर में वात-पित्त, कफ दोषों का सम होना बहुत आवश्यक होता है। अतः इन दोषों को शरीर में सम बनाए रखने हेतु षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। शरीर की आवश्यकता और अपनी क्षमतानुसार नेति, धौति, शंखप्रक्षालन, नौली, त्राटक और कपालभाति आदि शोधन क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करने से फिटनेस उन्नत बनती है। शुद्धिक्रियाओं के साथ-साथ आसनों का अभ्यास शरीर की फिटनेस पर सीधा प्रभाव रखता है। अतः नियमित रूप से प्रातःकाल सूक्ष्म अभ्यासों एवं वार्म अप एक्सरसाईज से प्रारम्भ करते हुए सूर्यनमस्कार से प्रारम्भ करते हुए शरीर को लचीला और दृढ़ बनाने वाले आसन जैसे- पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, नौकासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, वक्रासन, मण्डूकासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों का अभ्यास कुशल निर्देशन में करना चाहिए।

योगासनों के उपरान्त, प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास शरीर की फिटनेस सन्तुलित करने के लिए बहुत आवश्यक होता है। इसके लिए ध्यानात्मक आसन में स्थित होकर दीर्घ श्वास-प्रश्वास से प्रारम्भ करते हुए सूर्यभेदी, उज्जायी, शीतली, शीत्कारी, भस्त्रिका, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए। इससे शरीर की फिटनेस का स्तर उन्नत होने के साथ शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं जीवन शक्ति में भी सुधार होता है।

शरीर की फिटनेस का स्तर उन्नत बनाने हेतु, इन्द्रियों पर संयम, सुव्यवस्थित दिनचर्या के अनुसार प्रत्येक कार्य, तनावमुक्त सकारात्मक सोच-विचार और यौगिक पथ्य आहार का सेवन करना बहुत अनिवार्य होता है। इन सभी कारकों को मिलाकर यौगिक प्रबन्धन की संज्ञा दी जाती है, जिनका पालन करने से फिटनेस का स्तर उन्नत एवं शरीर स्वस्थ बनता है।

3-10 i;Vdk d fy, ;kfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, वर्तमान समय की भागदौड़ भरी जिन्दगी में मनुष्य कुछ समय स्वयं के लिए निकालता है, जिसमें वह कुछ समय के लिए अपनी सामान्य दिनचर्या का त्याग करते हुए, तनाव से मुक्त होकर शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक सुख और शान्ति प्राप्त करने का प्रयास करता है। जीवन के इस काल में उसे पर्यटक कहा जाता है। किसी भी पर्यटक का उद्देश्य शारीरिक और मानसिक सुख और शान्ति को प्राप्त करना होता है जिससे वह आगामी समय के लिए और अधिक ऊर्जा, उत्साह और उमंग को प्राप्त कर सके। पर्यटकों के इन उद्देश्यों को पूर्ण करने का श्रेष्ठ विकल्प यौगिक प्रबन्धन होता है।

;kfxd LokLF; izcU/ku

पर्यटकों को उनकी आवश्यकता, क्षमता और रुचि के अनुसार नेति, धौति, शंखप्रक्षालन, नौली, त्राटक और कपालभाति आदि शोधन क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करवाने से शरीर हल्का और ऊर्जावान बनता है। इन शुद्धिक्रियाओं के साथ-साथ योगासनों का सरल अभ्यासक्रम पर्यटकों को करवाना चाहिए। विशेष रूप से सूक्ष्म अभ्यासों पर केन्द्रित करते हुए सूर्यनमस्कार का अभ्यास पर्यटकों को करवाना चाहिए। इसके उपरान्त, कुछ सरल आसन जैसे ताड़ासन, त्रिकोणासन, वज्रासन, वक्रासन, मण्डूकासन, शशांकासन, सिंहासन, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, मरकटासन, नौकासन और भुजंगासन आदि का अभ्यास उनकी क्षमतानुसार करवाना चाहिए। योगासनों के उपरान्त अनुलोम-विलोम, नाड़ीशोधन, उज्जायी, भस्त्रिका और भ्रामरी आदि प्राणायामों एवं इसके उपरान्त प्रणव उच्चारण के साथ ध्यान का अभ्यास पर्यटकों को करवाना चाहिए। पर्यटकों को प्राणायाम, प्रार्थना और ध्यान के अभ्यास पर अधिक केन्द्रित करना चाहिए। ध्यान के अभ्यास में स्थूल ध्यान से प्रारम्भ करते हुए ज्योति ध्यान का अभ्यास करवाना चाहिए। पर्यटकों को योगनिद्रा का अभ्यास भी बहुत लाभकारी प्रभाव प्रदान करता है। पर्यटकों को सर्वत्र सुख की मंगलकामना मंत्रोचारण के साथ करवानी चाहिए। इससे पर्यटकों को शारीरिक सुख, मानसिक स्थिरता और आत्मिक शान्ति की प्राप्ति होती है।

fVIi.kh

bdkbZxr iz'u&3-3

सही / गलत बताइए–

1) प्रौढ़ावस्था में यौगिक यम नियम का पालन दृढ़ता से करना चाहिए। ( )
2) वृद्धावस्था में नियमित रूप से सूक्ष्म अभ्यास हल्के आसन और सूर्यनमस्कार को अपनी दिनचर्या का अंग बनाकर करना चाहिए। ( )
3) खिलाड़ियों और सुरक्षाबलों के लिए यौगिक प्रबंधन की आवश्यकता नहीं है। ( )
4) फिटनेस के लिए यौगिक प्रबंधन आवश्यक है। ( )

vkius D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में सर्वप्रथम यौगिक स्वस्थ्य प्रबन्धन के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। इकाई (यूनिट) के प्रारम्भ में योग, स्वास्थ्य और प्रबन्धन के अर्थ को समझाते हुए, मानव जीवन में इसके महत्त्व को समझाया गया है। तत्पश्चात् मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं जैसे बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था के यौगिक प्रबन्धन को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) में मानव जीवन की इन भिन्न-भिन्न अवस्थाओं की प्रमुख विशेषताओं, समस्याओं और चुनौतियों को स्पष्ट करते हुए इन अवस्थाओं के यौगिक प्रबन्धन पर प्रकाश डाला गया है।

वर्तमान काल में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यौगिक प्रबन्धन की आवश्यकता है। वास्तव में आधुनिक समय में मनुष्य की अव्यवस्थित दिनचर्या, विकृत आहार-विहार, बढ़ता वातावरणीय प्रदूषण, विलासितापूर्ण जीवनशैली

fVIi.kh

और मानसिक तनाव आदि कारकों के परिणामस्वरूप खिलाड़ी, सुरक्षाबल, जन सामान्य और पर्यटक आदि सभी के स्वास्थ्य का स्तर क्षीण होता जा रहा है। स्वास्थ्य की समस्या का सीधा प्रभाव मनुष्य के जीवन उद्देश्य पर पड़ता है और इसी कारण इन सभी क्षेत्रों में मनुष्य अपने उद्देश्यों को सही प्रकार प्राप्त नहीं कर पा रहे है। इस हेतु प्रस्तुत इकाई (यूनिट) (यूनिट) में इन सभी क्षेत्रों में यौगिक स्वस्थ्य प्रबन्धन के स्वरूप एवं महत्त्व को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) (यूनिट) में यौगिक क्रियाओं के साथ अन्य योगाभ्यास के द्वारा यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन करते हुए जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने का सविस्तार वर्णन किया गया है।

bdkbZ d vUr e iz'u

1) यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन के स्वरूप एवं महत्त्व का सविस्तार वर्णन कीजिए।

2) फिटनेस के यौगिक प्रबन्धन की सविस्तार व्याख्या कीजिए।

3) युवावस्था की प्रमुख विशेषताओं एवं यौगिक प्रबन्धन की सविस्तार चर्चा कीजिए।

4) मनुष्य में बाल्यावस्था की प्रमुख विशेषताओं एवं यौगिक प्रबन्धन की व्याख्या कीजिए।

5) टिप्पणियां लिखिए-

   क) वृद्धावस्था का यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन

   ख) पर्यटकों का यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन

bdkbZxr iz'uks d mÙkj

3-1

क) सर्वाधिक, ख) रचनात्मक ग) लचीला

3-2

(क) सही ख) गलत ग) सही

3-3

1) सही 2) सही 3) गलत 4) सही

4

तनाव (स्ट्रैस) में यौगिक प्रबन्धन

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व इकाई (यूनिट) में आपने यौगिक स्वास्थ्य प्रबन्धन के विषय में जाना और ज्ञान प्राप्त किया कि, किस प्रकार मनुष्य के जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में स्वास्थ्य का यौगिक प्रबन्धन करते हुए जीवन को सुखमय और सार्थक बनाया जा सकता है। परन्तु, वर्तमान काल में, मानसिक तनाव अत्यन्त व्यावहारिक शब्द बना हुआ है। प्रातः काल उठने से प्रारम्भ होकर रात्रिकाल तक की दिनचर्या के दौरान अनेक बार इस तनाव के साथ मनुष्य का सामना होता है। यह तनाव जीवन की सभी अवस्थाओं से लेकर सभी क्षेत्र जैसे शिक्षा, व्यापार, कृषि आदि के साथ जुड़ा हुआ है। विशेषरूप से छात्रों को अध्ययनकाल में, परिवारजनों को परिवार में एवं कार्मिकों को कॉरपोरेट सेक्टर में इस तनाव का अधिक सामना करना पड़ता है। मनुष्य की बढ़ती महत्त्वकांक्षाएँ, कम समय में अधिक प्राप्त करने की इच्छा तथा प्रतिस्पर्धात्मक सोच आदि ऐसे प्रमुख कारक हैं जिनसे मनुष्य तनाव की चपेट में आ जाता है। वर्तमान समय में मनुष्य ने अपने जीवन को बहुत अधिक व्यस्त कर लिया है। इतना अधिक व्यस्त कर लिया है कि वह स्वयं के लिए एवं आराम के लिए समय नहीं बचा पाता है। इस प्रकार जीवन में समय प्रबन्धन का अभाव और अव्यवस्थित दिनचर्या से भी मनुष्य तनाव रूपी जंजाल में फंसता जा रहा है। आज मानसिक तनाव सम्पूर्ण विश्व में मानव जाति को अपनी चपेट में ले रहा है।

मानसिक तनाव की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि, इससे ग्रस्त होने का पता ही नहीं चल पाता है। अपितु, जब मनुष्य की शारीरिक क्रियाओं और व्यवहार में अस्वाभाविक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं, उस अवस्था में दूसरे व्यक्तियों को यह पता चलता है, वह मनुष्य मानसिक तनाव से ग्रस्त हो चुका है और इसके उपरान्त यह तनाव उस मनुष्य की दिनचर्या का अंग बन जाता है और चाह कर भी, मनुष्य इससे मुक्त नहीं होने में स्वयं को असक्षम अनुभव करने लगता है। वहीं दूसरी ओर, तनाव से ग्रस्त होने पर भूख-प्यास और

निद्रा जैसी मूलभूत जैविक क्रियाएँ असन्तुलित एवं अव्यवस्थित होने लगती हैं। इसके परिणामस्वरूप, शरीर की चयापचय दर (Metabolism) भी असन्तुलित हो जाती है जिसके फलस्वरूप विभिन्न शारीरिक और मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न होने लगती हैं और धीरे-धीरे यह समस्या गंभीर रूप धारण करने लगती हैं। इस गंभीर अवस्था में मनुष्य का स्वयं पर (शारीरिक और मानसिक स्तर) नियंत्रण कम होने लगता है और मनुष्य दुर्व्यसनों की चपेट में आने लगता है। विभिन्न शोध इस तथ्य को स्पष्ट करते हैं कि, वर्तमान सभ्य और शिक्षित समाज में तेज़ी से बढ़ते दुर्व्यसनों में मानसिक तनाव एक महत्त्वपूर्ण कारक की भूमिका वहन करता है। मानसिक तनाव की गंभीर अवस्था में योग एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास अत्यन्त लाभकारी प्रभाव रखता है। दैनिक जीवन में योगाभ्यास को अपनाकर तनाव का यौगिक प्रबन्धन करते हुए इससे मुक्त हुआ जा सकता है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) के अन्तर्गत छात्रों, परिवार के सामान्य जनों और कॉरपोरेट एवं सेवा सेक्टर में होने वाले मानसिक तनाव के यौगिक प्रबन्धन की सविस्तार व्याख्या की गयी है।

mís';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन के पश्चात् आप –

- मानसिक तनाव का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
- मानसिक तनाव के स्वरूप को जान सकेंगे;
- छात्रों में तनाव के प्रमुख कारकों एवं लक्षणों को समझ सकेंगे;
- छात्रों में तनाव के यौगिक प्रबन्धन की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- सामान्यजनों में मानसिक तनाव का यौगिक प्रबन्धन बता सकेंगे;
- कॉरपोरेट एवं सेवा सेक्टर में तनाव के यौगिक प्रबन्धन पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4-1 ruko dk lkekU; ifjp;

प्रिय शिक्षार्थियों, मानसिक तनाव सम्पूर्ण विश्व में एक जाल के रूप में फैली महामारी है, जिससे मुक्त होने के लिए अनेक प्रकार के उपचार किये जाते हैं। एलोपैथी चिकित्सा में रोग के लक्षणों को देखकर रासायनिक दवाइयों के प्रभाव से लक्षणों को दबाने का कार्य किया जाता है। परन्तु, जिस प्रकार यदि किसी वृक्ष की शाखाओं और पत्तों में रोग उत्पन्न होने पर उपचार वृक्ष के मूल भाग में किया जाना अधिक श्रेष्ठकर होता है, क्योंकि, वृक्ष के मूल का उपचार होने पर फल-फूल और शाखाएं आदि स्वतः ही स्वस्थ हो जाते हैं। ठीक उसी प्रकार, मानसिक तनाव की स्थिति में भी रोग के मूल को जानना अनिवार्य होता है। मानसिक तनाव के मूल स्वरूप को जानने के लिए इसका वैज्ञानिक स्तर पर अध्ययन करते हैं। अतः सर्वप्रथम मानसिक तनाव के अर्थ और परिभाषा पर विचार करते हैं।

4-2 ekufld ruko dk vFkZ ,oa ifjHkk"kk

प्रिय शिक्षार्थियों, वास्तव में मानसिक तनाव एक जटिल एवं गूढ़ शब्द है जिसको समझने हेतु इसकी वैज्ञानिक व्याख्या करना अनिवार्य हो जाता है। मानसिक तनाव के अर्थ एवं स्वरूप की व्याख्या करने के लिए भिन्न-भिन्न मनोवैज्ञनिकों ने अलग-अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं। इनमें से प्रमुख परिभाषाएं निम्नवत हैं-

1) कुछ मनोवैज्ञानिक तनाव को एक उद्दीपक कारक के रूप में परिभाषित करते हैं। इन मनोवैज्ञानिकों के अनुसार जीवन की कुछ ऐसी घटनाएं अथवा परिस्थिति जो किसी मनुष्य को सामान्य के स्थान पर असामान्य अनुक्रियाएँ करने के लिए बाध्य करती हैं, तनाव कहलाते हैं। मानव जीवन में अनेक घटनाएं जैसे नौकरी छूट जाना, भूकम्प आना, किसी प्रियजन की मृत्यु हो जाना ऐसे उदाहरण हैं, जो तनाव को उत्पन्न करते हैं। इन घटनाओं को मनोवैज्ञानिक तनाव के कारक कहते हैं।

2) कुछ मनोवैज्ञानिक तनाव को अनुक्रियाओं के रूप में परिभाषित करते हैं। इन मनोवैज्ञानिकों के अनुसार जब शरीर की कुछ विशेष अनुक्रियाओं जैसे चिन्ता, क्रोध, रक्तचाप, शरीर का तापक्रम या नींद आदि में असामान्य रूप से वृद्धि होती है, तब यह कहा जाता है कि, यह मनुष्य तनाव से ग्रस्त है। इस प्रकार इन मनोवैज्ञानिकों के अनुसार शरीर की कुछ विशेष अनुक्रियाओं में असामान्य रूप से वृद्धि होना ही तनाव कहलाता है।

3) कुछ मनोवैज्ञानिक उपरोक्त दोनों परिभाषाओं को मिलाकर तनाव की व्याख्या करते हैं। इन मनोवैज्ञानिकों के अनुसार तनाव ना केवल घटनाओं का परिणाम होता है, और ना ही अनुक्रियाओं में वृद्धि को तनाव कहा जा सकता है, अपितु जब किसी भी मनुष्य के समक्ष कोई समस्या प्रकट होती है तब वह उसका सामना अपने पास उपलब्ध साधनों से करने का प्रयास करता है, किन्तु जब घटना या समस्या अधिक गंभीर होती है और व्यक्ति के अहं को ही खतरा उत्पन्न हो जाता है तब वह अवस्था तनाव कहलाती है। उदाहरण से समझे तो, सामान्य रोग होने पर व्यक्ति उसका उपचार उपलब्ध साधनों से आसानी से कर लेता है किन्तु, वही मनुष्य जब किसी गंभीर रोग से ग्रस्त हो जाता है, तब उसमें तनाव के लक्षण प्रकट होने लगते हैं अथवा वह तनाव से ग्रसित हो जाता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक बेरॉन तनाव को परिभाषित करते हुए कहते हैं-

"तनाव एक ऐसी बहुआयामी प्रक्रिया है जो हम लोगों में वैसी घटनाओं के प्रति अनुक्रिया के रूप में उत्पन्न होती है जो हमारे दैहिक एवं मनोवैज्ञानिक कार्यों को विघटित करता है या विघटित करने की धमकी देता है।"

मनोवैज्ञानिक बेरॉन की यह परिभाषा तनाव के सम्बन्ध में निम्न महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं एवं तथ्यों को स्पष्ट करती है-

1) तनाव एक बहुआयामी प्रक्रिया होती है, जिसमें तनाव को उत्पन्न करने वाली घटनाओं, परिस्थितियों अथवा कारकों का मूल्यांकन करते हुए मनुष्य उनके प्रति अनुक्रियाएँ करता है।

2) तनाव मनुष्य के जीवन की नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों प्रकार की घटनाओं से उत्पन्न होता है। इसलिए, तनाव नकारात्मक और सकारात्मक दोनों प्रकार का होता है। उदाहरण के लिए व्यापार में

घाटा होना या मनुष्य के रोगग्रस्त होने पर नकारात्मक तनाव उत्पन्न होता है, जबकि, अच्छे पद पर पदोन्नति या बड़े पुरस्कार की प्राप्ति होने से सकारात्मक तनाव उत्पन्न होता है।

3) जिन घटनाओं अथवा कारकों से तनाव उत्पन्न होता है वह व्यक्ति के नियंत्रण से बाहर होती हैं। जबकि, इन घटनाओं या कारकों पर नियंत्रण होने से तनाव का स्तर कम होने लगता है।

4) तनाव से ग्रसित होने पर मनुष्य शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की अनुक्रियाएँ करता है। अर्थात् तनाव से ग्रस्त होने पर व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक दोनों अनुक्रियाओं में परिवर्तन आते हैं।

5) तनाव की कोई निश्चित अवधि नहीं होती है, अर्थात् तनाव कम समय में भी समाप्त हो सकता है और लम्बे समय तक भी चल सकता है। तनाव की यह अवधि तनाव उत्पन्न करने वाली घटनाओं पर निर्भर करता है।

इस प्रकार, उपरोक्त बिन्दुओं से तनाव का स्वरूप स्पष्ट होता है। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि, तनाव छात्रों के जीवन को किस प्रकार प्रभावित करता है और छात्रों में उत्पन्न तनाव का यौगिक प्रबन्धन किस प्रकार किया जा सकता है, अतः अब छात्रों में तनाव प्रबन्धन पर विचार करते हैं-

4-3 Nk=ksa esa ruko izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, महर्षि मनु मानव जीवन को चार भागों में विभाजित करते हैं- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम। जीवन के इन चार भागों में ब्रह्मचर्य आश्रम का अपना विशिष्ट महत्त्व होता है, क्योंकि, इसमें एक बालक विद्या अध्ययन करता हुआ आपने भावी जीवन से परिवार, समाज और राष्ट्र के लिए भविष्य की पृष्ठभूमि तैयार करता है, वास्तव में विद्यार्थी जीवन ही किसी परिवार, समाज और राष्ट्र की आधारशिला होती है। विद्यार्थी ही एक परिवार, समाज और राष्ट्र का भविष्य होता है। जीवन की इस अवस्था को छात्र जीवन भी कहा जाता है, जिसमें स्वयं का स्वयं पर नियंत्रण करते हुए, आत्मनिर्भर बनने का प्रयास करता है। जीवन का यह काल त्याग, तपस्या और साधना के साथ जुड़ा होता है। इस अवस्था में एक बालक सांसारिक विषय भोगों का त्याग करता हुआ शांत-स्थिर और एकाग्र मन से विद्या अध्ययन में लगा रहता है। इस अवस्था में छात्र गुरू से प्राप्त श्रेष्ठ संस्कारों से संस्कारित होता हुआ चरित्र निर्माण और स्वयं का निर्माण करता है। यद्यपि, एक विद्यार्थी का यह जीवन काल बहुत चुनौतियों से भरा होता है, जिसमें उसके सम्मुख अनेक बाधाएँ, समस्याएँ और कष्ट उत्पन्न होते हैं, किन्तु विनम्रता, धैर्य और श्रद्धा भाव के साथ इन कठिनाइयों का सामना वह अपने जीवन यात्रा को सुखद एवं श्रेष्ठ बनाने के लिए करता है। विद्यार्थी जीवन के संदर्भ में यह कहा गया है कि 'विद्या चाहने वाले को सुख कहाँ और सुख चाहने वाले को विद्या कहाँ', अर्थात् विद्यार्थी जीवन त्याग और तपस्या से परिपूर्ण होता है किन्तु, विद्यार्थी जीवन की यह तपस्या और अनुशासन विद्यार्थी के जीवन को विद्यार्थी के भावी जीवन और राष्ट्र की उन्नति की राह प्रशस्त करती है।

इस प्रकार, उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य के जीवन का निर्माण उसकी प्रथम अवस्था छात्र जीवन से ही होता है। परन्तु, यह भी स्पष्ट तथ्य है कि वर्तमान समय में स्थितियाँ परिस्थितियाँ पूर्व काल से पूर्णतया भिन्न हो चुकी है और मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चारों ओर वातावरण में आधुनिकता का समावेश हो गया है, इस आधुनिकता का सीधा प्रभाव छात्र जीवन पर भी पड़ा है और वर्तमान समय में छात्र का जीवन अनेक प्रकार के तनाव से ग्रस्त हो गया। इस तनाव का सीधा प्रभाव विद्यार्थी के शारीरिक,

मानसिक, बौद्धिक, नैतिक और चारित्रिक विकास पर पड़ता है। तनाव के प्रभाव से विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास एवं व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया बाधित होती है। तनाव से ग्रसित होने पर छात्र का शारीरिक विकास यथावत नहीं हो पाता है और मानसिक प्रक्रियाओं में बाधाएँ उत्पन्न होने लगती हैं। तनाव से ग्रसित होने पर विद्यार्थी की बौद्धिक क्षमता पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है और वह अपनी पूर्ण क्षमता का सदुपयोग करने में असमर्थ हो जाता है। तनाव का दुष्प्रभाव विद्यार्थी की समायोजन क्षमता, अनुकूलन क्षमता और सकारात्मक सोच-विचार पर भी पड़ता है। अर्थ यह है कि, तनाव के परिणामस्वरूप विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास बाधित हो जाता है और वह विभिन्न प्रकार की समस्याओं से घिर जाता है। अब प्रश्न उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है कि छात्र जीवन में तनाव उत्पन्न करने वाले प्रमुख कारक कौन-कौन से होते हैं? अतः अब छात्र जीवन में तनाव उत्पन्न करने वाले महत्त्वपूर्ण कारकों पर विचार करते हैं-

1½ LokLF; dh leL;k

छात्र जीवन में तनाव का सबसे प्रमुख कारक छात्र का स्वास्थ्य संबंधित समस्याओं से ग्रसित होना होता है। जैसा कि सर्वविदित तथ्य है कि छात्र जीवन शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास का काल होता है। इस विकास यात्रा में समस्याएँ उत्पन्न होना बहुत स्वभाविक होती हैं। एक स्वस्थ छात्र ही विकास यात्रा या उन्नति में आने वाली इन समस्याओं का सामना एवं समाधान सरलता एवं बुद्धिमत्ता से करने की योग्यता रखता है। जबकि, रोगावस्था में जीवन की समस्याएँ छात्र के लिए तनाव का कारण बन जाती हैं। रोगी होने पर इन समस्याओं के समाधान में छात्र स्वयं को सक्षम मानता हुआ तनाव से ग्रसित होने लगता है। वर्तमान समय में विकृत आहार-विहार के परिणामस्वरूप बढ़ती स्वास्थ्य समस्याओं ने छात्र जीवन को तनाव से ग्रस्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन की है।

2½ fnup;kZ ,oa vuq'kklu dk vHkko

वर्तमान समय में मोबाइल फोन, इन्टरनेट, कम्प्यूटर, टेबलेट आदि की प्रयोग ने मनुष्य के दिनचर्या पर बहुत अधिक प्रभाव डाला है और छात्र जीवन भी इन इलेक्ट्रानिक उपकरणों की प्रयोग से अछूता नहीं रहा है। इन उपकरणों का प्रयोग करने से दिनचर्या पूर्णरूप से अव्यवस्थित हो चुकी है। जिसके परिणामस्वरूप शिक्षार्थियों का रात्रिकाल में देर से सोना और प्रातः काल देर से उठने का प्रचलन बहुत तेज़ी से बढ़ा है। प्रातः काल देर तक सोने से विद्यार्थी की सम्पूर्ण दिनचर्या अव्यवस्थित हो जाती है और कार्यों व पढाई का समय प्रबन्धन (Time Management) नहीं हो पाता है। इन सबका परिणाम अव्यवस्था और अनुशासनहीनता के रूप में प्रकट होता है। जबकि, 'अनुशासन को छात्र जीवन की रीढ़' माना जाता है। अतः इस रीढ़ के कमज़ोर होने पर छात्र जीवन तनाव के चपेट में आ जाता है इसीलिए वर्तमान समय में विद्यार्थी जीवन में बहुत तेज़ी से तनाव फैलता जा रहा है।

3½ ifjokj] fo|ky; ,oa lekt dk okrkoj.k

छात्र जीवन पर परिवार विद्यालय एवं समाज के वातावरण का सीधा प्रभाव पड़ता है। यह स्पष्ट तथ्य है कि छात्र अपने जीवन में केवल पुस्तकों से ही ज्ञान प्राप्त नहीं करता है अपितु, पुस्तकों से कहीं अधिक गुण ज्ञान वह अपने आस-पास के वातावरण, परिवार, विद्यालय एवं समाज के परिवेश को देखकर, सुनकर एवं अनुभवों से प्राप्त करता है इसीलिए छात्र के आस-पास का वातावरण सकारात्मक

होने पर छात्र जीवन में श्रेष्ठता के गुणों का विस्तार होता है जबकि, परिवार में कलह, विद्यालय में झगड़े और समाज में नकारात्मक गतिविधियों का दुष्प्रभाव छात्र जीवन पर पड़ता है और यह सभी नकारात्मक अवस्थाएँ छात्र जीवन में तनाव को उत्पन्न करती है। लम्बे समय तक नकारात्मक परिस्थितियों में रहने के पश्चात् कुछ परिस्थितियों में तो छात्र मादक और नशीले द्रव्यों का सेवन भी करने लगता है।

4) **i<kbZ dk vf/kd ncko ,oa ftEesnkfj;ksa dk cks>**

यहाँ पर हमें इस प्रकार समझना चाहिए कि एक छात्र शारीरिक और मानसिक स्तर पर पूर्ण रूप से परिपक्व नहीं होता है। अपितु, छात्र जीवन की यह अवस्था बहुत कोमल और संवेदनशील होती है। उम्र के इस चरण में छात्र ना शरीर से पूर्ण परिपक्व होता है और ना ही मानसिक व बौद्धिक स्तर पर विवेकज्ञान पूर्ण विकसित अवस्था में होता है। परन्तु, छात्र की क्षमता से अधिक बोझ डालने पर वह तनाव से ग्रसित होने लगता है। इसके साथ-साथ अधिकतर माता-पिता अपने बच्चों पर अपने सपने पूरा करने की बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियों का बोझ डाल देते हैं, जिससे वह छात्र तनाव से ग्रसित होने लगता है।

5) **ijh{kk esa lcls vPNk ifj.kke izkIr djus dh fpUrk**

यद्यपि प्रत्येक छात्र अच्छे परिणाम के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास करता है, परन्तु, फिर भी यह आवश्यक नहीं होता है कि उसे ही सबसे अच्छे अंक प्राप्त हो। परन्तु, परीक्षा में सबसे अच्छे परिणाम को प्राप्त करने की चिन्ता विद्यार्थी को तनाव की ओर ले जाती है। वर्तमान समय में सहपाठियों के प्रति बढ़ती प्रतिस्पर्धात्मक भावना, परिवार की महत्त्वाकांक्षा एवं माता-पिता द्वारा पूर्व निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने का दबाव छात्र जीवन को तनाव की ओर ले जाता है।

6) **Hkfo"; esa jkstxkj izkIr djus dh fpUrk**

छात्र जीवन का उद्देश्य उच्चतम शिक्षा प्राप्त करना होता है, जिससे वह अच्छी आजीविका को प्राप्त करता हुआ अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सके। इस विषय में अधिकांश छात्र भविष्य में रोजगार को लेकर बहुत चिंतित रहते हैं और आगे चलकर छात्रों की यही चिन्ता तनाव का रूप ग्रहण करने लगता है।

इस प्रकार, उपरोक्त कारक छात्र जीवन में तनाव को उत्पन्न करते हैं, अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि हम किस प्रकार जाने कि यह छात्र तनाव से ग्रस्त है। अतः अब तनाव के प्रमुख लक्षणों पर विचार करते हैं।

4-3-1 Nk= esa ruko ds y{k.k

छात्र के तनाव से ग्रस्त होने पर निम्न प्रमुख लक्षण प्रकट होते हैं-

1) तनाव का सबसे प्रथम एवं महत्त्वपूर्ण लक्षण विद्यार्थी की दिनचर्या में परिवर्तन होना होता है, ऐसी अवस्था में विद्यार्थी की भूख में परिवर्तन हो जाता है और वह निश्चित समय पर एवं पर्याप्त मात्रा में भोजन नहीं करता है।

2) विद्यार्थी के सिर में दर्द, गला सूखना, बार-बार मूत्र का वेग होना आदि लक्षणों के साथ स्वभाव में परिवर्तन हो जाता है और वह असामान्य अनुक्रियाएं करने लगता है।

3) छात्र अपने किसी भी कार्य को रूचि लेकर एवं उत्साहपूर्ण होकर नहीं करता है।

4) छात्र अधिकतम समय छात्र में अकेलापन, डर, बेचैनी, व्याकुलता अथवा भ्रम उत्पन्न हो जाता है और उसकी प्रवृत्ति दबाव में रहने की हो जाती है।

5) छात्र अकेलापन को अधिक पसन्द करने लगता है और वह घर से बाहर जाना तथा अपने मित्रों से बात करना, मिलना और उनके साथ खेलना छोड़ देता है।

6) छात्र के चेहरे पर चिन्ता एवं नकारात्मक भाव प्रकट होने लगते हैं।

7) छात्र के स्वभाव में क्रोध, चिड़चिड़ापन और अधीरता आदि सांवेगिक परिवर्तन आने लगते हैं। छोटी-छोटी बातों में ही गुस्सा आने लगता है एवं स्वयं पर नियंत्रण कम हो जाता है।

8) छात्र की स्मरण शक्ति कमज़ोर होने के साथ भूलने की प्रवृत्ति होने लगती है।

9) छात्र में समायोजन शीलता एवं अनुकूलन की क्षमता का अभाव होने लगता है।

10) छात्र में आत्मविश्वास का अभाव होने लगता है और वह जिम्मेदारियों से बचने लगता है जिससे छात्र अपनी योग्यता के अनुरूप प्रदर्शन नहीं कर पाता है।

इस प्रकार, उपरोक्त लक्षणों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि, छात्र तनाव रूपी महामारी से ग्रस्त है। इस स्थिति में एक ओर जहाँ छात्र की शारीरिक-मानसिक क्रियाएँ अव्यवस्थित होने लगती है तो वहीं दूसरी ओर छात्र की प्रवृत्ति भी आक्रामक और नकारात्मक होने लगती हैं। अवस्था लम्बे समय तक रहने एवं गंभीर होने पर कुछ छात्र आहार-विहार से संबंधित दुर्गुण एवं दुर्व्यसनों (नशीले पदार्थों का सेवन) में फँस जाते हैं। ऐसी अवस्था में छात्र का जीवन पतन की ओर जाना प्रारम्भ हो जाता है। इस महत्त्वपूर्ण अवस्था में जीवनशैली में योग एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है।

4-3-2 ;kSfxd izcU/ku

योग शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा की 'युज' धातु से हुई है। जिसका अर्थ होता है मिलना या जुड़ना। यहाँ पर आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ने के अर्थ में योग शब्द को लिया गया है। इस संसार का सबसे सकारात्मक तत्व ईश्वर है और ईश्वर के साथ स्वयं को जोड़ना ही योग कहलाता है। चूंकि मानसिक तनाव का मूल नकारात्मकता से होता है अतः ईश्वर के साथ जुड़ने से शरीर, मन और आत्मा में नकारात्मकता का विनाश और सकारात्मकता का विस्तार होता है, अतः इससे मानसिक तनाव समूल नष्ट होता है। योगांगों का पालन एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में सन्तुलन की अवस्था उत्पन्न होती है, जिससे मानसिक तनाव दूर होता है और आनन्द की प्राप्ति होती है। ईश्वर के साथ संयुक्त होने के लिए महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग का उपदेश किया है। अष्टांग योग के आठ अंगों का पालन करने से छात्रों में विभिन्न परिस्थितियों एवं कारकों से उत्पन्न मानसिक तनाव का भली-भांति प्रबन्धन हो

जाता है जिससे छात्र तनाव से मुक्त होकर अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में बिना किसी बाधा के अग्रसर होते है। योगाभ्यास द्वारा छात्रों का यौगिक प्रबन्धन इस प्रकार किया जा सकता है -

1½ ;e-fu;e ikyu d }kjk

महर्षि पतंजलि अष्टांग योग का आरम्भ यम-नियम के साथ करते हैं। यम के अन्तर्गत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह तथा नियम के अन्तर्गत शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान का वर्णन आता है। जिस प्रकार योग साधना में यम-नियम के पालन से योग साधक की पृष्ठभूमि तैयार होती है उसी प्रकार छात्र जीवन को उन्नत बनाने में यम-नियम का पालन बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। यम-नियम के पालन से छात्र में भावनाओं और संवेगों पर नियंत्रण करने की क्षमता का विकास होता है और मानसिक तनाव से मुक्ति प्राप्त होती है। यम-नियम के पालन से छात्र का आचरण और व्यवहार उन्नत बनने के साथ आत्मबल की प्राप्ति होती है और तनाव से मुक्ति मिलती है।

2½ ;kxkluk d vH;kl }kjk

छात्र जीवन में तनाव मुक्त बनाने में योगासनों का अभ्यास महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। आसनों का अभ्यास करने से शरीर पर मस्तिष्क का नियंत्रण बढ़ता है और शरीर की क्रियाशीलता बढ़ने के साथ पाचक रसों का स्रवण अधिक होता है, जिससे पाचन क्रिया उन्नत बनती है और भूख अच्छी व समय पर लगती है। शिक्षार्थियों को नियमित रूप से प्रातःकाल के समय सूर्यनमस्कार, ताड़ासन, त्रिकोणासन, वृक्षासन, धनुरासन, वज्रासन, पद्मासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, पवनमुक्तासन, उत्तानपादासन, सर्वांगासन, हलासन, चक्रासन, नौकासन और शीर्षासन आदि आसनों का अभ्यास करते हुए स्वास्थ्य को उन्नत बनाना चाहिए। इन आसनों के अभ्यास से शरीर और मन ऊर्जावान बनते हैं और तनाव समूल नष्ट होता है।

3½ ik.kk;ke d vH;kl }kjk

छात्रों के तनाव प्रबन्धन में प्राणायाम का अभ्यास बहुत लाभकारी भूमिका वहन करता है। तनाव की अवस्था में श्वसन क्रिया तीव्र और अव्यवस्थित हो जाती है जबकि, प्राणायाम के अभ्यास से श्वसन क्रिया पर नियंत्रण प्राप्त होता है। इसके साथ-साथ प्राणायाम के अभ्यास से छात्रों की बौद्धिक क्षमता एवं स्मरण शक्ति का विकास होता है। अतः छात्रों को नियमित रूप से अनुलोम-विलोम, नाड़ी शोधन, सूर्यभेदी, उज्जायी, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण का अभ्यास स्थिर और एकाग्र मन से करना चाहिए। इसके साथ लम्बे गहरे श्वासों के साथ श्वसन क्रिया को दीर्घ बनाना चाहिए।

4½ iR;kgkj ikyu d }kjk

छात्र जीवन में इन्द्रियां बहुत तेज़ी से बाहरी विषयों की ओर दौड़ती रहती हैं अतः इन्हें नियंत्रित करने के लिए प्रत्याहार पालन बहुत आवश्यक होता है। प्रत्याहार प्रालन के द्वारा छात्र अपनी इन्द्रियों और मन पर संयम स्थापित करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या, सात्विक आहार, समय प्रबन्धन एवं आत्म

अनुशासन को अपनाता हुआ मानसिक प्रसन्नता और संतोष की अनुभूति करता है जिससे मानसिक तनाव समूल नष्ट होता है।

5) धारणा-ध्यान का अभ्यास द्वारा

छात्रों के द्वारा अपने मन में नकारात्मक चिन्तन मनन का त्याग करते हुए, सकारात्मक विषयों एवं जीवन आदर्शों को धारण करने से मानसिक तनाव समूल नष्ट होता है। सकारात्मक चिन्तन के साथ ईश्वर का ध्यान और प्रार्थना का अभ्यास तनाव को पूर्णरूप से दूर करता है। ध्यान के अभ्यास से सकारात्मक ऊर्जा की प्राप्ति होती है और तनाव से मुक्ति मिलती है। इस प्रकार छात्र जीवन को सकारात्मक धारणा एवं ध्यान के साथ जोड़कर तनाव प्रबंधन किया जा सकता है।

6) समाधि की सकारात्मक अनुभूतियों द्वारा

यहाँ पर समाधि से तात्पर्य सकारात्मक अनुभूतियाँ करते हुए अपने चारों ओर सकारात्मक वातावरण का निर्माण करने से होता है। नकारात्मक अनुभूतियाँ जीवन को तनाव की ओर लेकर जाती हैं जबकि, इसके विपरीत सकारात्मक अनुभूतियाँ जीवन को उल्लास, उमंग, हर्ष और प्रसन्नता प्रदान करती हैं। अपने चारों ओर सकारात्मक अनुभूतियाँ करने से व्यक्तित्त्व विकास होता है और छात्र को अपनी क्षमताओं को ज्ञान प्राप्त होने के साथ अधिकतम कार्य करने की प्रेरणा प्राप्त होती है, जिससे वह पूर्ण से पुरुषार्थ करते हुए, प्राप्त फल में पूर्ण प्रसन्नता की अनुभूति करता है और प्रतिस्पर्धा व ईर्ष्या की भावना से मुक्त रहकर सभी परिस्थितियों में और सर्वत्र सकारात्मकता की कामना करता है। इस भाव से छात्रों में मानसिक तनाव समूल नष्ट होता है।

इसके साथ-साथ हठयोग की शुद्धि क्रियाओं में नेति और त्राटक क्रियाओं का अभ्यास तनाव को दूर करता है। अतः छात्रों को समय-समय पर नेति क्रिया और त्राटक क्रिया का अभ्यास करना चाहिए।

इन यौगिक क्रियाओं के साथ-साथ छात्रों को पथ्य और अपथ्य आहार पर भी ध्यान देना चाहिए। छात्र जीवन में राजसिक और तामसिक आहार जैसे नमक, मिर्च-मसाले, नमकीन, ब्रेड, बिस्किट, कोल्ड ड्रिंक्स आदि का त्याग करते हुए अंकुरित अन्न, मौसमीदार फल और सब्जियों के साथ दूध और दूध से बने पदार्थ एवं बादाम, अखरोट, किशमिश, अंजीर आदि पौष्टिक आहार का सेवन करना चाहिए। इससे छात्रों का पूर्ण शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, बौद्धिक और नैतिक विकास होता है और इसके साथ-साथ मन सात्विक वृत्तियों से युक्त रहता हुआ स्थिर, शान्त एवं नियंत्रित रहता है।

इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि योगांगों का पालन करते हुए नियमित यौगिक क्रियाओं जैसे षट्कर्म, आसन, प्राणायाम और ध्यान आदि का विधिपूर्वक अभ्यास करने से छात्रों के जीवन में तनाव का प्रबन्धन होता है और छात्र जीवन तनाव की महामारी से मुक्त रहता है। अब छात्र जीवन से अगला चरण गृहस्थ आश्रम का होता है, जिसमें व्यक्ति अपनी आजीविका चलाते हुए पारिवारिक और सामाजिक दायित्त्वों का निर्वाहन करता है। अतः अब सामान्य जनों में तनाव प्रबन्धन पर विचार करते हैं।

fVIi.kh

bdkbxr i’u&4-1

रिक्त स्थान भरिए–

क) महर्षि मनु जीवन को ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, ... और सन्यास आश्रम चार भागों में विभाजित करते हैं।

ख) तनाव के कारण व्यक्ति का .... बाधित हो जाता है।

ग) .... अनुभूतियाँ जीवन को उल्लास, उमंग, हर्ष और प्रसन्नता प्रदान करती है।

4-4 I kekU; tuk e ekufl d ruko dk ;kfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, यहाँ पर सामान्य जनों से अभिप्राय गृहस्थ आश्रम द्वारा समाज का पालन पोषण कर रहे व्यक्तियों से है, जिसमें जीवन की मध्यावस्था वाले पुरुष और महिलाएं आती हैं। जीवन की यह अवस्था सबसे अधिक दायित्त्वों का निर्वाहन करने वाली अवस्था होती है जिसमें स्वयं की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साथ-साथ परिवार और समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति का महत्त्वपूर्ण दायित्त्व निभाना होता है, अतः जीवन की इस सबसे जिम्मेदार अवस्था में अनेक समस्याओं और चुनौतियों का आना अत्यन्त स्वभाविक होता है। किन्तु, जब मनुष्य का इन समस्याओं और चुनौतियों से सामंजस्य बिगड़ जाता है तब मानसिक तनाव उत्पन्न होता है और महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि वर्तमान समय में समाज के बहुत अधिक मनुष्य (स्त्रियां और पुरुष) इस तनाव के जाल में फंसते जा रहें हैं। जिस कारण यह तनाव एक महामारी के रूप में फैलता जा रहा है। इस विषय में आगे बढ़ने से पूर्व हमें यह जानना आवश्यक हो जाता है कि कौन-कौन से कारक सामान्य जनों के जीवन में तनाव उत्पन्न करते हैं, जिससे इन कारणों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए इस समस्या का प्रबन्धन किया जा सके।

4-4-1 I kekU; tuk e ekufl d ruko d dkjd

सामान्य जनों में तनाव को उत्पन्न करने करने वाले प्रमुख कारक निम्नलिखित होते हैं-

1) **'kkjhfjd vkj ekufl d :i l LoLFk jgu dh leL;k**

वर्तमान समय में विकृत आहार-विहार और प्रदूषण के परिणामस्वरूप सामान्य जनों के लिए अपने स्वास्थ्य को बनाए रखना एक बड़ी चुनौती हो गया है। मशीनरी युग के कारण अधिकांश कार्य मशीनों से होने के कारण शारीरिक श्रम के अभाव ने इस समस्या को और अधिक बढ़ा दिया है। इसके साथ-साथ दायित्त्वों को पूरा करने की चिन्ता से वर्तमान समय में विभिन्न शारीरिक और मानसिक व्याधियां जैसे सिर दर्द, कमर दर्द, कब्ज़, मोटापा, रक्तचाप, थायरॉइड, मधुमेह और अनिद्रा आदि बहुत तेज़ी से समाज में फैलती जा रही हैं। इन व्याधियों से स्वयं से ग्रस्त होने पर अथवा स्वयं को बचाने के दबाव में मनुष्य बहुत तेज़ी से तनाव के जाल में फंसते जा रहें हैं।

fVIi.kh

2) viuk jkstxkj dks vkxs c<kus ,oa nkf;Ùoksa dk ijk djus dh leL;k

मनोवैज्ञानिक युंग जीवन की मध्यावस्था की तुलना दोपहर के सूर्य के साथ करते है। जीवन की इस महत्त्वपूर्ण अवस्था में व्यक्ति अपने रोजगार को अधिकतम उन्नति के शिखर पर ले जाना चाहता है, क्योंकि वह जानता है कि इससे अगली अवस्था में शारीरिक और मानसिक शक्तियां क्षीण होने वाली हैं, अतः वह इस अवस्था में अपनी शक्ति, क्षमता और योग्यता का अधिकतम उपयोग करने के दबाव में रहता है। इसके साथ-साथ इस अवस्था में व्यक्ति के ऊपर घर-परिवार के अन्य सदस्यों और सदस्यों के साथ सामाजिक दायित्वों के निर्वाहन का भार भी रहता है। इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप मनुष्य तनाव रूपी महामारी की चपेट में आ जाता है।

3) thou dh rukoiw.kZ ?kVuk,a

जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया गया है कि इस अवस्था में व्यक्ति अपने रोजगार को उन्नति के शिखर पर ले जाने का अधिकतम प्रयास करता है, तो वहीं वह अपने परिवार को भी अधिकतम सुख और सही दिशा प्रदान करने का प्रयास करता है, अतः इन कार्यों में कुछ ऐसी घटनाएं जैसे व्यापार में घाटा, बच्चे का परीक्षा में फेल हो जाना, माता-पिता का बीमार पड़ जाना आदि उसे तनाव की ओर ले जाती हैं।

4) dk;Z esa vlQyrk dh fpUrk dk udkjkRed fpUru

मनुष्य के स्वभाव एवं मनन–चिन्तन पर आहार-विहार एवं समाज के अन्य व्यक्तियों का प्रभाव पड़ता है। कुछ परिस्थितियों में समाज एवं परिवार के सदस्य किसी मनुष्य के मन में नकारात्मक भावनाओं की वृद्धि कर देते हैं, जिस कारण मनुष्य अधिक चिन्ता से ग्रस्त होकर तनाव में फंस जाता है। इसी प्रकार मन में चिन्ता के साथ अन्य नकारात्मक भावों की प्रधानता मानसिक तनाव को उत्पन्न करती है।

5) lalk/kuksa dk vHkko ,oa vkfFkZd detksjh dh leL;k

मानव जीवन की मध्यावस्था में मनुष्य को अपनी शक्ति, ज्ञान और योग्यता का अधिकतम उपयोग करने के लिए अनेक संसाधनो की आवश्यकता पड़ती है। इसके साथ-साथ आर्थिक धन सम्पदा भी बहुत आवश्यक होती है, जिनके अभाव में मनुष्य तनाव की चपेट में आ जाता है।

6) nwljksa ij fuHkZjrk dh leL;k

यद्यपि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और दूसरों को सहयोग करना एवं दूसरों से सहयोग लेने की प्रवृत्ति मनुष्य के स्वभाव में निहित होती है। परन्तु इस प्रवृत्ति के कारण कुछ मनुष्य दूसरों पर बहुत आधिक निर्भर और आश्रित हो जाते हैं। मनुष्य की दूसरों पर यह निर्भरता उनके आत्मविश्वास में कमी का प्रमुख कारण बन जाती है और स्वयं के आत्मविश्वास के अभाव में ऐसे मनुष्य बहुत जल्दी तनाव की चपेट में आ जाते हैं।

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार उपरोक्त कारक जन सामान्य को तनाव की समस्या के साथ जोड़ देते हैं। इस समस्या से ग्रस्त होने पर मनुष्य में विवेकशीलता का अभाव होने लगता है और वह तनाव से स्वयं

को मुक्त करने के लिए दुर्व्यसनों का सहारा लेने लगता है। परन्तु दुर्व्यसनों से तनाव समाप्त नहीं होता अपितु और अधिक जटिल रूप ग्रहण करने लगता है। अतः यहाँ पर तनाव का यौगिक प्रबन्धन एक श्रेष्ठतम विकल्प होता है। सामान्यजनों में तनाव का यौगिक प्रबन्धन निम्नवत है-

4-4-2 ;kSfxd izca/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, यहाँ पर योग से अभिप्रायः केवल शारीरिक व्यायाम से नहीं है अपितु योग का अर्थ सम्पूर्ण जीवन दर्शन से होता है, जिसमें प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व सोकर उठने से लेकर दिनभर की समस्त क्रियाओं को आस्तिकता के साथ समत्व के भाव से युक्त होकर बहुत अनुशासित रूप से किया जाता है। इस प्रकार स्वयं द्वारा स्वयं को अनुशासित बनाते हुए छल-कपट का त्याग करते हुए, निष्काम कर्म करने से मनुष्य का जीवन तनाव जैसी महामारी से मुक्त रहता है। इसके साथ-साथ निम्न योगांगों का पालन करने से पूर्व वर्णित कारकों से उत्पन्न तनाव को समूल नष्ट करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सामान्य जनों को निम्न योगांगों का पालन एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करते हुए तनाव प्रबन्धन करना चाहिए-

1½ ;e-fu;e ikyu dk }kjk- सामान्य जनों को अपने जीवन में पाँच यम- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और पाँच नियम-शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधन का व्रत के रूप में पालन करना चाहिए। ऐसा करने से नकारात्मक विचारों से मुक्ति प्राप्त होने के साथ—साथ सकारात्मक आत्मबल की प्राप्ति होती है और ईश्वर में आस्था व निष्ठा परिपक्व बनती है। ईश्वर में आस्था होने से मनुष्य में कर्त्तापन का भाव दूर होने लगता है जिससे अहंभाव नष्ट होता है और सभी परिस्थितियों में सम रहने की प्रवृत्ति प्रबल होता है। इससे मानसिक तनाव का प्रबन्धन होता है और सकारात्मक मनन चिन्तन एवं विवेकबुद्धि का उदय होता है। इस प्रकार अष्टांग योग में वर्णित यम और नियम का पालन करने से मनुष्य में मानसिक परिपक्वता आती है और सकारात्मक दूरदृष्टि प्राप्त होने के साथ तनाव दूर होता है।

2½ "kV~deZ dh 'kqf)fØ;kvksa dk vH;kl }kjk- सामान्य जनों को रोगों से मुक्त बनाते हुए उनके स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बनाने में षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का अभ्यास बहुत लाभकारी एवं प्रभावशाली भूमिका निभाता है। षट्कर्म की शुद्धि क्रियाओं में धौति, बस्ति, नेति, नौली, त्राटक और कपालभाति का वर्णन आता है। इन क्रियाओं को शरीर की आवश्यकतानुसार एवं क्षमतानुसार अभ्यास करना चाहिए। इसमें पाचन तंत्र को स्वस्थ, क्रियाशील और रोगमुक्त बनाने के लिए समय-समय पर वमन, बस्ति और शंखप्रक्षालन क्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए। जलनेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति क्रिया का अभ्यास प्रतिदिन प्रातःकाल करना चाहिए। सामान्य जनों को शरीर में वात-पित्त, कफ दोष की अवस्थानुसार एवं शरीर की क्षमतानुसार शुद्धिक्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए।

3½ vklukas dk vH;kl }kjk- सामान्य जनों को मोटापा, कमरदर्द, सिरदर्द, रक्तचाप, अनिद्रा और तनाव से मुक्त बने रहने के लिए प्रतिदिन योगासनों को अपनी दिनचर्या का अंग बनाना चाहिए। योगासनों में प्रातःकाल सूर्यनमस्कार, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों

fVIi.kh

का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। अपनी क्षमतानुसार पहले सामान्य और अभ्यास होने पर कठिन आसनों का अभ्यास करना चाहिए। इन आसनों का अभ्यास करने से शरीर लचीला, क्रियाशील, हल्का, सन्तुलित और निरोगी बना रहता है जिससे स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बना रहता है। स्वास्थ्य का स्तर उन्नत रहने से मानसिक प्रसन्नता और बौद्धिक क्रियाशीलता बनी रहती है तथा मानसिक तनाव दूर होता है। **ruko dh xHkhj voLFkk e 'kh"kklu dk vH;kl oftr gkrk g vFkkr 'kh"kklu ugh djuk pkfg,A**

4½ ik.kk;ke d vH;kl }kjk- प्राणायाम का अभ्यास प्राण शक्ति में वृद्धि करने के साथ-साथ शरीर को हल्का बनाता है और मन में स्थिरता उत्पन्न करता है। सामान्य जनों को तनाव रूपी महामारी से बचने के लिए नियमित रूप से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम के क्रम में अनुलोम-विलोम और नाड़ी शोधन प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर और मन के मध्य सन्तुलन स्थापित होता है। नाड़ियों का मल दूर होने के साथ चित्त निर्मल और मन प्रसन्न होता है। इनके साथ-साथ विधिपूर्वक उज्जायी, शीतली, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए। मानसिक तनाव की अवस्था में शीतली और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास विशेष लाभ प्रदान करता है। मानसिक तनाव से ग्रस्त होने पर प्रणव उच्चारण भी विशेष लाभ प्रदान करता है। **ruko dh xHkhj voLFkk e Åtk of) dju oky ik.kk;ke tl l;Hknh vkj HkfL=dk ugh dju pkfg,A**

5½ iR;kgkj d ikyu }kjk- प्रत्याहार का अर्थ इन्द्रियों पर संयम से होता है। तनाव का प्रारम्भ स्वयं पर असंयम से होता है, अतः इन्द्रियों पर संयम करते हुए मन पर नियंत्रण स्थापित करने से मानसिक तनाव का बहुत कुशलतापूर्वक प्रबन्धन किया जा सकता है। प्रत्याहार का पालन करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्त्विक आहार-विहार करने से मानसिक तनाव को बहुत सरलता और सहजता से दूर कर सकता है।

6½ ldkjkRed /kkj.kk }kjk- धारणा अर्थात् किसी विषय को दृढ़ता के साथ ग्रहण या धारण करना। नकारात्मक विषयों का चिन्तन-मनन करते हुए नकारात्मकता को ग्रहण करने से तनाव प्रारम्भ होता है जबकि, इसके विपरीत सकारात्मक विषयों को ग्रहण करते हुए पूर्ण तन्मयता एवं एकाग्रता के साथ अपना कार्य करने से तनाव दूर होता है। यहाँ किसी भी समस्या के उत्पन्न होने पर चिन्ता करने के स्थान पर चिन्तन करने का वर्णन किया जाता है क्योंकि सकारात्मक चिन्तन से करने से तनाव के स्थान पर गंभीर से गंभीर समस्या का भी हल प्राप्त हो जाता है जबकि, केवल चिन्ता मात्र करने से समस्याएँ गंभीर तनाव उत्पन्न कर देती हैं।

7½ /;ku d vH;kl }kjk- मानसिक तनाव और ध्यान दोनों एक दूसरे की विपरीत अवस्था होती है। ध्यान करने से मानसिक तनाव समूल दूर होता है। अतः सामान्य जनों द्वारा ध्यान को अपनी दिनचर्या का अंग बनाने से उनका जीवन तनाव से मुक्त बनता है। इस सम्बन्ध में अनेक शोध अध्ययनों द्वारा यह स्पष्ट होता है कि प्रातः अथवा सांय काल नियमित रूप से ध्यान का अभ्यास करने से मनुष्य का जीवन तनाव से मुक्त रहता है।

fVIi.kh

8½ lekf/k dh ldkjkRed vuqHkwfr;ksa }kjk - यहाँ पर समाधि का अर्थ अपने चारों ओर के वातावरण में सकारात्मक अनुभूतियाँ करते हुए आनन्दपूर्वक जीवन जीने से लिया जाता है। यहाँ पर स्मरणीय तथ्य यह है कि मनुष्य को चाहिए कि वह जीवन की कठिनाइयों और समस्याओं का सामना अपनी पूरी क्षमता एवं योग्यता से करते हुए प्राप्त परिणामों को सहर्ष स्वीकार करे। इससे मनुष्य को सुख एवं सन्तोष की प्राप्ति होती है और वह प्राप्त फल में प्रसन्न और सन्तुष्ट रहता है। इस प्रकार के आचरण से उसका जीवन सदैव तनावमुक्त बना रहता है।

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन स्पष्ट करता है कि वर्तमान समय में सामान्यजनों के लिए योगाभ्यास बहुत महत्त्वपूर्ण एवं अनिवार्य हो गया है। योगांगों का पालन करते हुए नियमित यौगिक क्रियाओं जैसे षट्कर्म, आसन, प्राणायाम और ध्यान आदि का विधिपूर्वक अभ्यास करने से समाज के जन स्वयं को शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रखते हुए अपने जीवन को तनाव से मुक्त बनाए रख सकते हैं। अब विषय में आगे बढ़ते हुए कॉर्पोरेट सेक्टर में सेवारत कर्मियों के तनाव प्रबन्धन पर विचार करते हैं।

bdkbZxr iz'u&4-2

सही/गलत बताइए–

क) तनाव एक महामारी के रूप में फैलता जा रहा है। ( )

ख) मन में चिंता के साथ अन्य नकारात्मक भावों की प्रधानता तनाव को उत्पन्न करती है। ( )

ग) आसनों का अभ्यास करने से शरीर लचीला, क्रियाशील, हल्का, संतुलित और निरोगी नहीं बना रहता है। ( )

4-5 dkiksjsV ,oa lsok lsDVj esa ekufld ruko dk ;kSfxd izcU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, यहाँ पर कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर से अभिप्रायः व्यवसाय एवं उद्योग धन्धों में कार्य करने वाले कर्मिकों एवं प्रबन्धकों से होता है। यह क्षेत्र किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था का आधार या रीढ़ होती है, जिसमें सभी घरेलू उत्पादों एवं राष्ट्र से बाहर निर्यात करने की वस्तुओं के निर्माण करने का कार्य होता है। इस क्षेत्र में सम्पूर्ण विश्व की दौड़ में स्वयं को बनाए रखने की चुनौती सामने रहती है। इस क्षेत्र में छोटी सी गलती या लापरवाही बहुत गंभीर परिणाम देने वाली होती है जिस पर एक साथ अनेक लोगों का भविष्य टिका होता है। अतः इस क्षेत्र में बहुत बुद्धिमत्ता, एकाग्रता, धैर्य और दूरदर्शिता से कार्य करने की आवश्यकता होती है एवं इस क्षेत्र में कार्य करने वाले कर्मिकों एवं प्रबन्धकों में तनाव का होना बहुत सामान्य है। अब यहाँ पर इस क्षेत्र में कार्य करने वाले प्रबन्धकों एवं कर्मिकों में तनाव को उत्पन्न करने वाले प्रमुख कारकों पर विचार करना अनिवार्य है। इन कारकों को जानने के उपरान्त ही इनमें उत्पन्न तनाव की समस्या का यौगिक प्रबन्धन किया जा सकता है।

4-5-1 dkiksZjsV ,oa lsok lsDVj esa ekufld ruko ds dkjd

कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर में तनाव को उत्पन्न करने करने वाले प्रमुख कारक निम्नलिखित होते हैं-

1) 'kkjhfjd vkSj ekufld :i ls LoLFk jgus dh leL;k

इस क्षेत्र में मनुष्य की दिनचर्या एवं खान–पान प्रायः अव्यवस्थित रहता है, जिससे इस क्षेत्र से जुड़े व्यक्तियों का बहुत समय अपने सेवा कार्यों में व्यतीत होता है, जिस कारण वह अपने स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते हैं। इसके साथ-साथ अव्यवस्थित दिनचर्या और शारीरिक-मानसिक श्रम में असन्तुलन होने से भी इस क्षेत्र से जुड़े लोगों में मोटापा, सिरदर्द, माइग्रेन, कब्ज़ और रक्तचाप आदि रोग पाये जाते हैं जो आगे चलकर गंभीर रूप धारण करते हुए तनाव का रूप ग्रहण कर लेते हैं।

2½ izfrLi/kkZRed okrkoj.k esa dEiuh dks vkxs c<kus dh leL;k

चूंकि कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर में बहुत प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण रहता है, जिसमें स्वयं को स्थापित बनाए रखना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। इस क्षेत्र में प्रबन्धकों एवं कर्मिकों पर बहुत बड़ा दायित्त्व रहता है और दायित्त्व के साथ प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण की चुनौती इस क्षेत्र में मानसिक तनाव का प्रमुख कारण होता है।

3½ vfuf'prrk ,oa tksf[ke;qDr okrkoj.k

कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर बहुत अनिश्चितताओं और जोखिम से भरा हुआ क्षेत्र होता है जिसमें निरन्तर उतार-चढ़ाव होते रहते हैं। इस क्षेत्र में आने वाले उतार-चढ़ावों का सम्बन्धित प्रबन्धकों एवं कर्मिकों पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार इस क्षेत्र की अनिश्चितताएं और जोखिमयुक्त वातावरण या उतार-चढ़ाव मानसिक तनाव को उत्पन्न करने में बहुत महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं।

4) LokFkZ ,oa vgaHkko dh vf/kdrk ,oa vkRe laosnukvksa dk vHkko

इस क्षेत्र से जुड़े लोगों का अधिक ध्यान अपने व्यवसाय की ओर ही जाता है, जिस कारण कुछ परिस्थितियों में उनके भीतर स्वार्थ और अहं भाव की अधिकता होने लगती है और व्यवसाय को अधिक महत्त्व देने की स्थिति में आत्म संवेदनाओं में कमी होने लगती है। यह कारक तनाव को उत्पन्न करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करते हैं।

5) ldkjkRed n`f"Vdks.k dk vHkko

इस क्षेत्र में सकारात्मक दृष्टिकोण की बहुत आवश्यकता होती है। सकारात्मक दृष्टिकोण रखने से विपरीत परिस्थितियों में धैर्य की प्राप्ति होती है जबकि नकारात्मक दृष्टिकोण से तनाव उत्पन्न होने लगता है।

6) Lo;a dh {kerkvksa ,oa vkRefo'okl dk vHkko

इस क्षेत्र में स्वयं की क्षमताओं पर विश्वास करते हुए सही दिशा में उपयोग करना बहुत आवश्यक होता

fVIi.kh

है और इसी से आत्मविश्वास की प्राप्ति होती है। जबकि इसके विपरीत स्वयं की क्षमताओं पर विश्वास नहीं होने से मनुष्य तनाव की चपेट में आ जाता है। अर्थ यह है कि आत्मविश्वास का अभाव तनाव को उत्पन्न करने का महत्त्वपूर्ण कारक है।

इस प्रकार उपरोक्त कारकों से कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर के लोगों में तनाव की गंभीर समस्या उत्पन्न होती है। अब इस समस्या का यौगिक प्रबन्धन इस प्रकार किया जा सकता है -

4-5-2 ;kSfxd izcU/ku

सर्वप्रथम तनाव को उत्पन्न करने वाले मूल कारक को जानना चाहिए। मूल कारण का निवारण करते हुए तनाव के जाल से समूल मुक्ति प्राप्त की जा सके। इसके साथ-साथ निम्न योगाभ्यास भी तनाव को दूर करने में लाभकारी प्रभाव रखता है-

1½ "kVdeZ dh 'kf)fØ;kvksa dk vH;kl }kjk

शरीर के शोधन हेतु विधिपूर्वक वमन क्रिया, समय–समय पर शंखप्रक्षालन करना चाहिए। प्रातःकाल नमकीन गुनगुने जल से जलनेति क्रिया करनी चाहिए। इसके साथ-साथ त्राटक क्रिया का अभ्यास करने से मन शान्त और एकाग्र होने से तनाव रोग में शीघ्र लाभ मिलता है।

2½ vklukas dk vH;kl }kjk

तनाव से मुक्त बने रहने के लिए प्रतिदिन योगासनों को अपनी दिनचर्या का अंग बनाना चाहिए। योगासनों में प्रातःकाल सूक्ष्म अभ्यास से प्रारम्भ करते हुए शरीर की क्षमतानुसार सूर्यनमस्कार पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों का अभ्यास करना चाहिए। नियमित आसन करने से शरीर के आन्तरिक अंगों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है, जिससे शारीरिक और मानसिक क्रियाओं में सन्तुलन स्थापित होता है। इसके साथ-साथ शरीर का वजन कम होता है और शारीरिक स्वास्थ्य उन्नत होने के साथ मानसिक तनाव का प्रबन्धन होता है।

3½ eqnzk vkSj cU/kksa dk vH;kl }kjk

यौगिक मुद्राओं जैसे योगमुद्रा, बह्ममुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, महामुद्रा का अभ्यास करना चाहिए। इसके साथ-साथ शरीर की क्षमतानुसार मूल बन्ध, उड्डियान बन्ध और जालंधर बन्ध का अभ्यास करने ऊर्जा सन्तुलित होती है और तनाव रोग दूर होता है।

4½ izR;kgkj dk ikyu }kjk

प्रत्याहार पालन अर्थात् इन्द्रियों पर संयम करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्विक आहार-विहार करने से मानसिक तनाव दूर करने में बहुत सहायता मिलती है।

5½ iz.kk;ke dk vH;kl }kjk

अनुलोम-विलोम, नाड़ी शोधन उज्जायी, शीतली, शीत्कारी, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए।

6½ /;ku dk vH;kl }kjk-

मन में सकारात्मक भावों को ग्रहण करते हुए सकारात्मक विषयों का चिन्तन एवं ध्यान करने से मानसिक तनाव समूल दूर होता है। कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर के लोगों को ध्यान का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। इससे नकारात्मकता दूर होती है और सकारात्मकता का विस्तार होता है।

उपरोक्त योगांगों के पालन के साथ सुव्यवस्थित एवं अनुशासित दिनचर्या, समय प्रबन्धन, शुद्ध और सात्विक आहार एवं जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर के लोगों में तनाव प्रबन्धन का महत्त्वपूर्ण भाग होता है। इनका पालन करने से इस क्षेत्र के लोगों का आचरण और व्यवहार श्रेष्ठ होने के साथ जीवन सदैव तनावमुक्त बना रहता है।

bdkbZxr iz'u&4-3

सही/गलत बताइए–

क) कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर में मानसिक तनाव अधिक है। ( )

ख) तनाव से मुक्त रहने के लिए प्रतिदिन योगाभ्यास की आवश्यकता नहीं है। ( )

ग) सकारात्मक भावों से चिंतन एवं ध्यान करने से मानसिक तनाव दूर होता है। ( )

vkius D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, इस इकाई (यूनिट) में तनाव के स्वरूप को विस्तार से समझाया गया है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से तनाव को परिभाषित करते हुए, जीवन में तनाव उत्पन्न करने वाले प्रमुख कारकों एवं तनाव के प्रमुख लक्षणों को समझाया गया है। इस इकाई (यूनिट) में जीवन के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण काल छात्र जीवन के महत्त्व को समझाते हुए इस अवस्था में तनाव उत्पन्न करने वाले प्रमुख कारकों और लक्षणों को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि यौगिक क्रियाओं के नियमित अभ्यास और आहार-विहार पर संयम के साथ सुव्यवस्थित दिनचर्या के पालन से छात्र जीवन में बहुत आसानी से तनाव प्रबन्धन किया जा सकता है। इस इकाई (यूनिट) के साररूप अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सामान्य जनों के साथ कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर के जन भी यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करते हुए और सकारात्मक जीवन दर्शन से अपने जीवन को तनाव मुक्त बना सकते हैं।

fVIi.kh

bdkbZ ds vUr esa iz'u

1) तनाव के अर्थ एवं स्वरूप को विभिन्न परिभाषाओं द्वारा स्पष्ट कीजिए।
2) छात्रों में तनाव के यौगिक प्रबन्धन की सविस्तार व्याख्या कीजिए।
3) सामान्यजनों में बढ़ते तनाव के प्रमुख लक्षणों एवं यौगिक प्रबन्धन की सविस्तार चर्चा कीजिए।
4) कॉर्पोरेट एवं सेवा सेक्टर के लोगों के यौगिक तनाव प्रबन्धन की व्याख्या कीजिए।
5) वर्तमान काल में बढ़ते मानसिक तनाव की समस्या का यौगिक प्रबन्धन लिखिए।

bdkbZxr iz'uksa ds mÙkj

4-1

क) वानप्रस्थ,
ख) सर्वांगीण विकास
ग) सकारात्मक

4-2

क) सही,
ख) सही,
ग) गलत

4-3

क) सही,
ख) गलत
ग) सही

5

महिलाओं के लिए यौगिक प्रबन्धन

प्रिय शिक्षार्थियों, महिला परिवार की नींव, समाज का आधार एवं राष्ट्र की रीढ़ होती है। महिला के स्वस्थ, सुखी एवं प्रसन्न होने पर परिवार, समाज एवं राष्ट्र उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है, जबकि, महिला के रोगी और दुखी होने पर परिवार, समाज एवं राष्ट्र पतन की गहराईयों में जाने लगता है। महिला परिवार में सकारात्मक वातावरण का निर्माण करती है, समाज को अच्छे संस्कारों से संस्कारित करती है और राष्ट्र में खुशहाली लाती है। स्वस्थ माता की कोख से ही वीर और बलवान सन्तानें जन्म लेती हैं जो परिवार, समाज एवं राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर ले जाती हैं और अपनी क्षमता, योग्यता, बल और बुद्धि से परिवार, समाज एवं राष्ट्र को सम्मान प्रदान करती हैं। इसलिए, महिला का स्वस्थ एवं प्रसन्न होना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसी महत्त्वपूर्ण तथ्य को ध्यान में रखते हुए, महिलाओं के सम्मान एवं स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के उद्देश्य से सम्पूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष **8 ekp**Z को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस आयोजित किया जाता है।

परन्तु, वर्तमान काल के विकृत आहार-विहार, असंयमित दिनचर्या, मानसिक तनाव एवं नकारात्मक चिन्तन आदि कारकों ने महिलाओं के स्वास्थ्य पर बहुत नकारात्मक प्रभाव डाला है। विकृत आहार-विहार के परिणाम स्वरूप जहाँ शारीरिक बल और क्षमता में कमी आयी है तो वहीं नकारात्मक चिन्तन ने शरीर में हार्मोन्स के सन्तुलन को बिगाड़ दिया है। इस कारण वर्तमान समय में अधिकतर महिलाएं अनेक प्रकार की शारीरिक और मानसिक विकृतियों से ग्रस्त हो रही हैं। इन विकृतियों से ग्रस्त होने के उपरान्त इनसे मुक्ति प्राप्त करने के लिए एलोपैथिक दवाइयों का सेवन किया जाता है किन्तु एलोपैथिक दवाइयों के प्रभाव से कुछ समय के लिए आराम तो मिल जाता है किन्तु रोग स्थाई रूप से दूर नहीं होता है। इसके अतिरिक्त एलोपैथिक दवाईयों के अधिक सेवन करने से इनके दुष्प्रभावों से शरीर और मन में अन्य रोग उत्पन्न होने लगते हैं। अंग्रेज़ी दवाइयों के प्रयोग के स्थान पर विधिपूर्वक यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से एक ओर जहाँ सभी

रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है तो वहीं दूसरी ओर महिलाओं के स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बनता है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में महिलाओं के स्वास्थ्य पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

यह अत्यन्त स्पष्ट तथ्य है कि परिवार, समाज एवं राष्ट्र के उत्थान में महिलाओं का स्वस्थ होना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक होता है। महिलाओं के रोगी एवं अस्वस्थ होने पर परिवार एवं समाज में सुख और शान्ति का वास नहीं हो सकता है और आने वाली पीढ़ी भी स्वस्थ नहीं बन पायेगी। जिससे परिवार, समाज और राष्ट्र का विकास कभी भी नहीं हो सकेगा। इसके साथ-साथ यह भी स्पष्ट तथ्य है कि अंग्रेज़ी दवाइयाँ तात्कालिक आराम तो प्रदान कर देती हैं किन्तु रोग के मूल कारण का निवारण नहीं करती हैं। अतः महिलाओं से सम्बन्धित रोगों का किस प्रकार यौगिक प्रबन्धन किया जा सकता है ? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होता है जिसके उत्तर में प्रस्तुत इकाई (यूनिट) के अन्तर्गत योगाभ्यास के प्रभाव की व्याख्या की गयी है।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप -

- महिलाओं के स्वास्थ्य की विवेचना करने में सक्षम हो सकेंगे;
- स्त्री रोगों का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
- महिलाओं में मासिक धर्म की समस्या का यौगिक प्रबन्धन जान पायेंगे;
- गर्भावस्था एवं प्रसवावस्था के दौरान यौगिक प्रबन्धन को समझ पायेंगे;
- महिलाओं में रजोनिवृत्ति अवस्था का यौगिक प्रबन्धन करने में सक्षम हो पायेंगे।

5-1 efgyk LokLF; dk lkekU; ifjp;

प्रिय शिक्षार्थियों, संसार की कुल आबादी में महिलाओं की संख्या लगभग आधी है और इस प्रकार महिलाएं, इस सृष्टि की महत्त्वपूर्ण अवयव हैं। यद्यपि वर्तमान सभ्य समाज में औरतों को पुरूषों के बराबर दर्जा देने की बात की जाती है परन्तु यदि गहराई से चिन्तन किया जाए तो वास्तव में महिलाओं का स्थान तो पुरूषों की तुलना में कहीं ऊपर होना चाहिए क्योंकि, पुरूषों को भी जन्म देने वाली महिलाएं ही हैं। इसीलिए लोक व्यवहार में प्रथम स्थान स्त्री को ही दिया जाता है और विशेष रूप से भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता में परिवार और समाज के अन्दर स्त्री को बहुत सम्मानित स्थान पर रखने का उपदेश किया गया है। परन्तु, वर्तमान समय का दूसरा पक्ष यह भी है कि, संसार में महिलाओं की हमारी आधी-आबादी अनेक रोगों से ग्रस्त है और दुर्भाग्य की बात यह है कि, अधिकतर महिलाओं को आवश्यकता पड़ने पर उपयुक्त उपचार भी प्राप्त नहीं हो पाता है जिस कारण महिलाओं के स्वास्थ्य की समस्या गंभीर होती चली जाती है। कहीं पर महिला संकोचवश तो कहीं पर पारिवारिक दायित्वों के कारण अपनी स्वास्थ्य की समस्या को प्रकट नहीं कर पाती है और उसकी रोगावस्था गंभीर रूप धारण कर लेती है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) का विषय महिलाओं के स्वास्थ्य को जानकर उनका यौगिक प्रबन्धन करना है। महिला स्वास्थ्य के विभिन्न पक्षों की चर्चा करने से पहले यह जान लेना आवश्यक हो जाता है कि वास्तव में महिला स्वास्थ्य कहते किसे हैं और इसकी परिभाषा क्या है ?

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, स्वास्थ्य सिर्फ रोग या दुर्बलता की अनुपस्थिति ही नहीं बल्कि एक पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक खुशहाली की स्थिति है। स्वास्थ्य से अभिप्राय केवल शरीर के स्वस्थ होने से ही नहीं होता है अपितु, शरीर के साथ-साथ मानसिक स्तर पर सकारात्मक अनुभूतियाँ स्वास्थ्य का महत्त्वपूर्ण पक्ष होता है।

आयुर्वेद शास्त्र में स्वास्थ्य को परिभाषित करते हुए आचार्य सुश्रुत कहते हैं-

lenk"k% lekfXuÜp le/kkrqey%fØ;k%A
i lUukRefUn ;eu% LoLFk bR;-fHk/kh;rAA

(सु0 सू0 15/41)

जिस पुरूष के दोष, धातु, मल तथा अग्निव्यापार सम हों अर्थात् सामान्य (विकाररहित) हों तथा जिसकी इन्द्रियाँ, मन तथा आत्मा प्रसन्न हो, वही स्वस्थ है।

प्रिय शिक्षार्थियों, यहाँ पर पुरुष शब्द से अभिप्राय स्त्री और पुरुष दोनों से एक समान रूप में है। इस प्रकार जिस महिला के शरीर में वात-पित्त और कफ नामक त्रिदोष साम्य अवस्था में विद्यमान हैं, सातों धातुओं और त्रिमलों का व्यापार समान अवस्था में होने के साथ-साथ तेरह प्रकार की अग्नियां साम्यावस्था में हैं तथा इन्द्रियां, मन और आत्मा प्रसन्न अवस्था में है तो वही उत्तम स्वास्थ्य कहलाता है जबकि इसके विपरीत अवस्था ही रोग है।

इसी प्रकार विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा, विकसित स्वास्थ्य की आधुनिक परिभाषा, का महर्षि सुश्रुत द्वारा प्रदत्त हजारों वर्ष प्राचीन परिभाषा से काफी साम्यता प्रतीक होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा स्वास्थ्य को परिभाषित करते हुए कहा गया है-

> Health is a state of Physical, Mental and Social well being not merely in which disease or infirmity are absent. (W.H.O.)

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार केवल रोगों की अनुपस्थिति मात्र को स्वास्थ्य नहीं कहा जा सकता है अपितु स्वास्थ्य वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्तर पर सकारात्मक और स्वस्थ है। सामान्यतया यह दृष्टिगोचर भी होता है कि, जब एक महिला स्वस्थ्य होती है तब वह प्रसन्न रहती हुई स्वयं को सक्रिय, सृजनशील, समझदार और कार्य करने में सक्षम अनुभव करती है। इस अवस्था में महिला शक्ति और बल से परिपूर्ण रहती है। वह अपने दैनिक कार्यों को करने के साथ-साथ परिवार एवं समाज में निर्धारित अपनी भूमिकाओं का प्रसन्नतापूर्वक वहन करती हुई दूसरों के साथ सकारात्मक एवं सन्तोषजनक सम्बन्ध स्थापित करती है। स्वस्थ महिला परिवार और समाज को सकारात्मक दिशा प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करती है जबकि, रोगावस्था में उसके सभी दायित्त्व एवं कार्य अपूर्ण रहने लगते हैं। इस तथ्य से अवगत होकर वर्तमान समय में महिलाओं के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देने की बात बहुत तेज़ी से बढ़ी है परन्तु, वर्तमान समय में भी महिलाओं के स्वास्थ्य का अर्थ गर्भावस्था तथा प्रसव में दी जाने वाली मातृ स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित हो जाता है। यद्यपि ये सेवायें भी अत्यन्त आवश्यक होती हैं परन्तु, ये केवल महिलाओं की 'मां की भूमिका' का ही ध्यान रखती हैं। जबकि, महिलाओं का शरीर पुरुषों की तुलना में जटिल संरचना युक्त एवं महिलाओं का भावनात्मक स्तर पर अधिक संवेदनशील होने के कारण इन्हें स्वास्थ्य के स्तर पर अधिक ध्यान रखने की आवश्यकता होती है।

यदि कोई महिला अपने सभी दैनिक कार्य पूरी कुशलता और सरलता के साथ कर सकती है और उसे किसी प्रकार का कोई रोग या शारीरिक कष्ट न हो तो हम कह सकते हैं कि वह महिला पूरी तरह से स्वस्थ है। इसके अलावा महिला में सन्तानोत्पत्ति की क्षमता का होना भी अनिवार्य है। नारी को 'जननी' कहा जाता है क्योंकि, इसमें सन्तान को जन्म देने की अद्‌भूत क्षमता होती है। आमतौर पर यह देखा गया है कि शारीरिक कमज़ोरी और खानपान में कमी के कारण महिलाओं की सन्तानोत्पत्ति की क्षमता प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो जाती है जबकि, एक स्वस्थ महिला में सन्तानोत्पत्ति की क्षमता का होना भी अनिवार्य है। बच्चे देश का भविष्य होते हैं और एक स्वस्थ महिला ही स्वस्थ बच्चे को जन्म दे सकती है इसलिए, किसी भी महिला का स्वस्थ होना, स्वस्थ समाज की एक प्राथमिक शर्त होती है।

इसके साथ-साथ प्रत्येक महिला का जीवन भी बाल्यावस्था, युवावस्था, मध्यावस्था और वृद्धावस्था आदि चरणों से होकर गुजरता है। इन चरणों में शरीर के बाहर एवं भीतर अनेक प्रकार के भौतिक एवं जैविक परिवर्तन (Physical and Biological Changes) होते हैं। विशेष रूप से मध्यावस्था के काल में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन रजोनिवृत्ति होता है। यह प्रत्येक महिला के जीवन का बहुत महत्त्वपूर्ण काल होता है। इस काल में शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होते हैं। इन परिवर्तनों के अनुरूप दिनचर्या, आहार-विहार एवं अन्य कार्य करने से यह परिवर्तन सहज हो जाते हैं जबकि इसके विपरीत आचरण करने से यह परिवर्तन जटिल और असहज होकर रोग का रूप ग्रहण कर लेते हैं।

सर्वप्रथम विषय का प्रारम्भ महिलाओं की युवावस्था से करते हैं। युवावस्था में साधारणतया कन्याओं को 12 से 15 वर्ष की आयु में और उष्ण प्रदेशों में इससे भी पूर्व मासिक धर्म प्रारम्भ हो जाता है, जिसका अर्थ यह होता है कि कन्या गर्भ धारण के योग्य हो रही है। तब से लेकर 45 से 50 वर्ष की आयु तक साधारणतया प्रत्येक 28वें दिन मासिक धर्म (Menstrual Cycle) होता रहता है। प्रत्येक मास में एक बार डिम्ब ग्रन्थि से एक डिम्ब परिपक्व होकर बाहर निकलता है और डिम्बवाहिका नली में शुक्राणु द्वारा संषेचित होकर गर्भाशय में आकर गर्भ बन जाता है। इस प्रकार मासिक धर्म का प्रारम्भ होना गर्भ धारण की योग्यता का संकेत होता है।

5-2 ekfld /ke dh leL;k e ;kfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, सामान्यता महिलाओं में मासिक धर्म का समय 28 दिन होता है। महिलाओं के जीवन की निश्चित अवधि में प्रत्येक 28वें दिन यह चक्र नियमित रूप से चलता रहता है। इस चक्र का सामान्य रूप से चलना उत्तम स्वास्थ्य का परिचायक होता है जबकि इस चक्र की अनियमितता रोगावस्था को जन्म देती है। महिलाओं में मासिक धर्म के चक्र की क्रियाविधि निम्न होती है-

5-2-1 efgykvk dk ekfld /ke (Menstrual Cycle in Women)

बाल्यावस्था पूर्ण करने के उपरान्त जैसे ही बालिका 12 से 15 वर्ष की आयु पूर्ण करती है तब उसके शरीर में कुछ विशेष शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होते हैं। इन परिवर्तनों में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह होता है कि इस अवस्था में ओवरी (अण्डाश्य) प्रत्येक माह एक विकसित ओवम (अण्डा) उत्पन्न करना प्रारम्भ कर

देता है। ओवरी में उत्पन्न यह ओवम पुरूष के शुक्राणु से निषेचित होकर गर्भ के रूप में विकसित होता है। किन्तु, यदि इस ओवम का शुक्राणु के साथ संयोग नहीं हो पाता है तब यह रक्त के साथ योनि से बाहर निष्कासित होता है जिसे मासिक धर्म, रजोधर्म, ऋतुस्राव और महावारी आदि नामों से जाना जाता है। शरीर की यह प्राकृतिक क्रिया 12 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होकर 48 से 50 वर्ष की आयु तक चलती रहती है। इसी अवस्था में महिला का शरीर गर्भधारण करने में सक्षम रहता है।

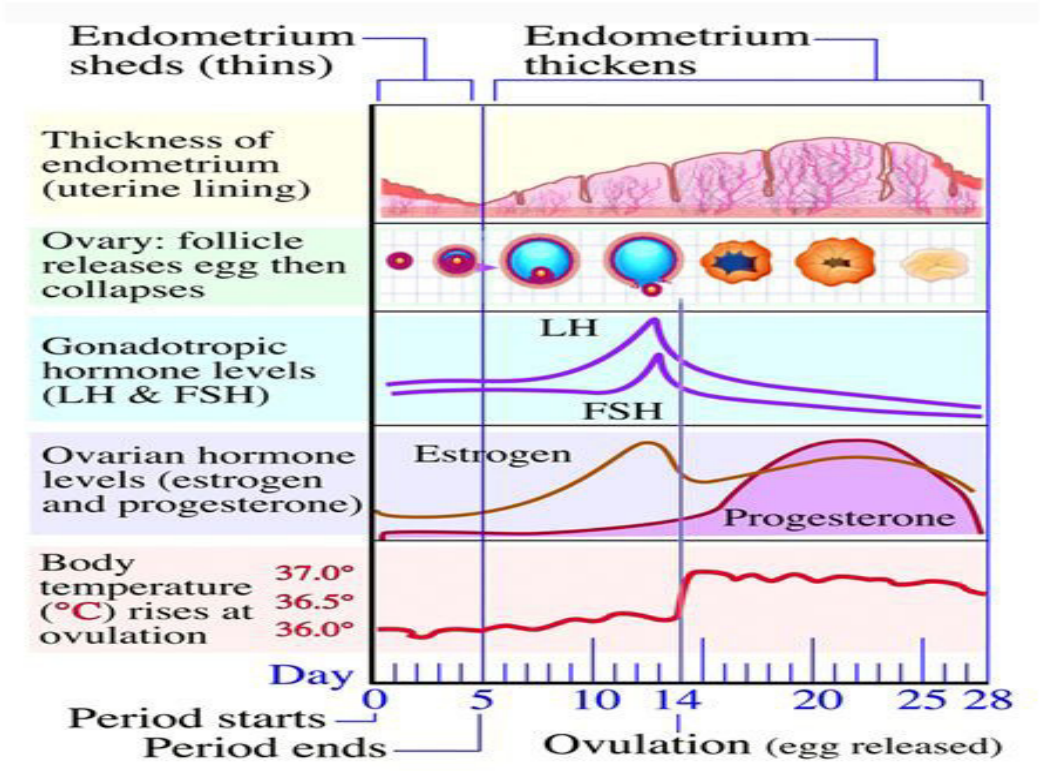

चित्र 5.1: महिलाओं का मासिक धर्म

5-2-2 efgykvk e ekfld /ke dh leL;k,¡ (Menstrual Disorders)

प्रिय शिक्षार्थियों, महिलाओं में मासिक धर्म का चक्र प्रत्येक 28वें दिन प्राकृतिक रूप से चलता रहता है किन्तु इस चक्र पर कुछ कारक नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। जैसे शरीर के वजन का कम अथवा अधिक होने पर या खान-पान से सम्बन्धित अनियमितता का दुष्प्रभाव मासिक धर्म पर पड़ता है। इसके साथ-साथ मानसिक तनाव और रासायनिक एलोपैथिक दवाइयों के अधिक सेवन के साथ मादक पदार्थों के सेवन करने पर मासिक धर्म में भी अनियमितताएं एवं विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। मासिक धर्म का सीधा सम्बन्ध हार्मोन्स के साथ होता है। शरीर में हार्मोन्स के असन्तुलित होने पर मासिक धर्म भी अनियमित हो जाता है। मासिक धर्म से सम्बन्धित प्रमुख विकार इस प्रकार होते हैं-

1) मासिक धर्म में अत्यधिक पीड़ा या कष्ट होना।

2) मासिक धर्म में अधिक रक्तस्राव होना।

3) मासिक धर्म कम अथवा अधिक लम्बा होना।

4) मासिक धर्म का समय से नहीं होना।

5) मासिक धर्म काल में पेट अथवा कमर में अत्यधिक पीड़ा का होना।

इस प्रकार मासिक धर्म में उपरोक्त समस्याएँ उत्पन्न होती हैं जिनसे बचने के लिए दर्दनिवारक रासायनिक दवाइयों का प्रयोग किया जाता है किन्तु, दवाइयों के सेवन के स्थान पर यौगिक प्रबन्धन इन विकृतियों का श्रेष्ठतम विकल्प होता है। अतः अब मासिक धर्म की समस्याओं के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते हैं-

5-2-3 ;kfxd icU/ku (Yogic Management of Menstrual Disorders)

प्रिय शिक्षार्थियों, सामान्यतया योग का अर्थ केवल आसन, प्राणायाम और ध्यान से ही लिया जाता है किन्तु, जब हम योग विषय का गहराई से अध्ययन करते हैं तो, हमें स्पष्ट होता है कि, योग का प्रारम्भ अनुशासन से होता है और यह अनुशासन साधक के शरीर, मन और आत्मा में सन्तुलन स्थापित करता है जिसके फलस्वरूप साधक समाधि के उच्चतम शिखर को प्राप्त करने में सक्षम बनता है। महर्षि पतंजलि कृत अष्टांग योग में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि नामक आठ सीढ़ियों का उपदेश किया गया है जिनका पालन करने से शरीर, मन और आत्मा का विकास होता है और साधक शरीर, मन और आत्मा के स्तर पर ऊर्जावान होता है। इस अवस्था के प्राप्त करने में शरीर और मन का स्वस्थ होना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसके लिए ऋषियों के द्वारा हठयोग का उपदेश किया गया है। हठयोग में षट्कर्म, आसन, मुद्रा-बन्ध, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि का उपदेश किया गया है। योगाभ्यास शरीर के साथ-साथ मन में सकारात्मक भावना एवं विचार उत्पन्न करता है। मन में सकारात्मक भावना का मासिक चक्र पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। जीवन में मानसिक तनाव एवं नकारात्मक भावनाओं के फलस्वरूप मासिक चक्र में असन्तुलन एवं कष्टकारी मासिक धर्म आदि विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं जबकि, चित्तवृत्तियों को स्थिर एवं मन को शान्त करने से मासिक धर्म से सम्बन्धित सभी विकार समूल नष्ट हो जाते हैं।

प्रिय शिक्षार्थियों, मासिक धर्म से सम्बन्धित समस्याओं में उपरोक्त यौगिक क्रियाएँ बहुत लाभकारी प्रभाव रखती हैं। मासिक धर्म सम्बन्धित समस्याओं का यौगिक प्रबन्धन इस प्रकार है-

I) "kVde dk iHkko

प्रिय शिक्षार्थियों, महर्षि घेरण्ड द्वारा शरीर को शुद्ध बनाने हेतु हठयोग के निम्न सात साधनों का उपदेश करते हुए कहा गया है-

'kk/ku –<rk pbo LFk;! èk;! p yk?koeA
çR;{k p fufyfIr'p ?kVL; lIr lk/kueAA

(घे०सं० 1/9)

शोधन, दृढ़ता, स्थैर्य, धैर्य, लाघव, प्रत्यक्ष और निर्लिप्तता- ये शरीर की शुद्धि के लिए सात साधन हैं। शरीर को शुद्ध एवं मन को निर्मल बनाने वाले इन साधनों को धारण करने के लिए अर्थात् प्राप्त करने

के लिए योगी पुरूष को निम्न योगाभ्यास करने चाहिए। इन अभ्यासों के फलों पर प्रकाश डालते हुए ऋषि पुनः स्पष्ट करते हैं-

"kVdel.kk 'kk/ku p vkluu Hkon~<eA
eæ;k fLFkjrk pb çR;kgkjs.k /khjrkAA
çk.kk;kekYyk?ko p /;kukRçR;{kekRefuA
lekf/kuk fufyZIr p efDrjo u l'k;AA

¼घे०सं० 1/10-11)

षट्कर्मों से शरीर की शुद्धि, आसनों द्वारा शरीर का मजबूत होना, मुद्राओं द्वारा स्थिरता, प्रत्याहार से धीरता, प्राणायाम से शरीर का हल्कापन, ध्यान से साक्षात्कार तथा समाधि से निर्लिप्ति के भाव की प्राप्ति होने पर मुक्ति आवश्यक है, इसमें सन्देह नहीं है।

इस प्रकार योग में षट्कर्म, आसन, मुद्रा, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि नामक सात अंगों का उपदेश किया गया है। इनमें से षट्कर्म प्रथम योगांग है जिसमें धौति, बस्ति, नेति, नौली, त्राटक और कपाल नामक छः शुद्धि क्रियाओं का वर्णन आता है। इन छः शुद्धि क्रियाओं का अभ्यास करने से शरीर शुद्ध होता है और वात-पित्त और कफ नामक त्रिदोषों में सन्तुलन स्थापित होता है जिसका सकारात्मक प्रभाव महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ता है। मासिक धर्म के विकारों में बस्ति, नेति और त्राटक क्रिया का अभ्यास विशेष लाभकारी प्रभाव रखते हैं। नेति क्रिया से मानसिक स्वच्छता उत्पन्न होती है और पिट्यूटरी ग्रन्थि की क्रियाशीलता बढ़ती है जिससे मासिक चक्र सन्तुलित होता है। इसके साथ-साथ शरीर की आवश्यकता, योग्यता एवं क्षमता अनुसार शोधन क्रियाओं का अभ्यास भी किया जा सकता है।

II) vkluk dk vH;kl

प्रिय शिक्षार्थियों, योगासन शरीर को स्वस्थ एवं ऊर्जावान बनाने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करते हैं। यद्यपि मासिक धर्म की अवस्था में आसनों का अभ्यास नहीं किया जाता है किन्तु सूक्ष्म अभ्यास एवं वार्म अप एक्सरसाइज करने से मासिक धर्म का काल कष्ट एवं पीड़ा से मुक्त होकर सरल एवं सहज बन जाता है। इसके साथ-साथ सामान्य अवस्था में शरीर की क्षमतानुसार ताड़ासन, त्रिकोणासन, पद्मासन, सिद्धासन, तितली आसन, वज्रासन, मण्डूकासन, शशांकासन, सिंहासन, पवनमुक्तासन, उत्तानपादासन, मरकटासन, नौकासन, भुजंगासन और धनुरासन के साथ शवासन आदि आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करने पर मासिक धर्म से सम्बन्धित विकार स्वतः ही दूर हो जाते हैं।

नियमित विधिपूर्वक सूर्यनमस्कार का अभ्यास करने से अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ एवं अण्डाश्य (ओवरी) स्वस्थ बनती हैं जिससे मासिक धर्म से सम्बन्धित विकार दूर होते हैं।

III) enk ,o cU/kk dk iHkko ½

प्रिय शिक्षार्थियों, मुद्रा से अभिप्राय शरीर की उन विशेष आकृतियों से होता है जिनके अभ्यास से

आन्तरिक ऊर्जा जाग्रत होती है और शरीर स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनता है। योगमुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, शक्तिचालिनी और महामुद्रा का विधिपूर्वक अभ्यास करने से मासिक धर्म से सम्बन्धित सभी विकार समूल नष्ट होते हैं और शरीर स्वस्थ बनता है।

IV) iR;kgkj dk iHkko

प्रत्याहार का अर्थ इन्द्रियों पर संयम करने से होता है। सामान्यता इन्द्रियों पर संयम के अभाव में शरीर रोगी होने लगता है जबकि, प्रत्याहार को अपनाते हुए इन्द्रियों पर संयम करने से आहार-विहार शुद्ध और सात्विक बनता है और दिनचर्या सुव्यवस्थित होती है। इसका मासिक चक्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है और मासिक धर्म से सम्बन्धित विभिन्न विकार दूर होते हैं। शुद्ध और सात्विक आहार से एवं दिनचर्या सुव्यवस्थित करने से ओवरी (अण्डाशय) की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है और इसके साथ-साथ शरीर में हार्मोन्स का स्राव भी सन्तुलित होता है, जिसका अनुकूल प्रभाव मासिक चक्र पर पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप महिलाओं की प्रजनन क्षमता में अभिवृद्धि होती है और बांझपन का रोग भी दूर होता है।

V) ik.kk;ke dk iHkko

शरीर में प्राण ऊर्जा का विस्तार करने की क्रिया प्राणायाम कहलाती है। प्राणायाम का अभ्यास शरीर की जीवन शक्ति और रोग प्रातिरोधक क्षमता को सीधे-सीधे प्रभाावित करता है। नियमित विधिपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर पूर्ण रूप से स्वस्थ और क्रियाशील बनाता है। प्राणायाम के क्रम में अनुलोम-विलोम और नाड़ी शोधन से प्रारम्भ करते हुए सूर्यभेदी, उज्जायी, भस्त्रिका और भ्रामरी का अभ्यास करने से प्रजनन अंगों (ओवरी) की क्रियाशीलता और कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

प्राणायाम के अभ्यास का शरीर के आन्तरिक अंगों पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से ओवरी की क्रियाशीलता एवं कार्यक्षमता में वृद्धि होती है जिससे महिला की जनन क्षमता बढ़ती है और मासिक धर्म से सम्बन्धित विकार दूर होते हैं।

VI) /;ku dk iHkko

प्रिय शिक्षार्थियों, मानसिक तनाव के परिणामस्वरूप शरीर में हार्मोन्स का सन्तुलन बिगड़ जाता है और मासिक चक्र अव्यवस्थित हो जाता है जबकि, इसके विपरित ध्यान के अभ्यास से शरीर में हार्मोन्स का सन्तुलन स्थापित होता है और मासिक चक्र सुव्यवस्थित बनता है। इसके साथ साफ-स्वच्छ स्थान पर स्थिर मन के साथ सकारात्मक विषयों का ध्यान, भजन एवं ईश्वर से प्राथना करने पर महिलाओं के रोग समूल नष्ट होते हैं।

ध्यान के अभ्यास से शरीर की चयापचय दर (Metabolism) सन्तुलित होती है जिससे सम्पूर्ण शरीर की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। इससे समय पर भूख, कार्य और नीदं आदि क्रियाएँ सुव्यवस्थित होती हैं। लम्बे गहरे श्वासों के साथ दीर्घ प्रणव जप करने से महिलाओं के रोग समूल नष्ट होते हैं।

efgykvk d fy, ;kfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है, योगांगों का पालन करने से शरीर और मन पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है और षट्कर्म की शोधन क्रियाओं के योगासन, प्राणायाम और ध्यान आदि यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से महिलाओं के मासिक धर्म से समबन्धित सभी रोग समूल नष्ट होते हैं। महिलाओं के जीवन की अगली अवस्था गर्भावस्था और प्रसवावस्था होती है। इन दोनों अवस्थाओं में भी महिलाओं के सम्मुख अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं जिनका यौगिक प्रबन्धन इस प्रकार है-

bdkbxr i’u&5-1

रिक्त स्थान भरिए–

क) सामान्यतः महिलाओं में मासिक धर्म का समय .... दिन होता है।

ख) .... ग्रन्थि की क्रियाशीलता बढ़ने से मासिक चक्र सन्तुलित होता है।

ग) लम्बे गहरे श्वासों के साथ .... जप करने से महिलाओं के रोग समूल नष्ट होते हैं।

5-3 xHkkoLFkk ,o i lokÙkj d nkjku ;kfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, गर्भावस्था प्रसवावस्था के उपरान्त का समय महिलाओं के जीवन का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, परिवर्तनयुक्त एवं संवेदनशील काल होता है। मानव में गर्भावस्था का समय 40 सप्ताह अर्थात् 280 दिनों का होता है। इस अवस्था में महिला को निम्न शारीरिक और मानसिक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। यद्यपि सभी महिलाओं को निम्न समस्याएँ नहीं आती हैं किन्तु, प्रायः अधिकतर महिलाएं इनसे ग्रस्त हो जाती हैं। इनमें से कुछ प्रमुख समस्याएँ निम्नवत होती हैं-

1) भूख कम हो जाना, भोजन का पाचन नहीं होना एवं पेट में दर्द होना।
2) शरीर में लगातार थकावट बने रहने के साथ चक्कर आना।
3) पैरों में सूजन-दर्द एवं कमर में दर्द उत्पन्न होना।
4) जी मिचलाना एवं उल्टियाँ होना।
5) सिरदर्द होने के साथ बैचेनी होना।
6) शरीर में रक्त की कमी के साथ अत्यधिक शारीरिक और मानसिक कमज़ोरी होना।

इन समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए अंग्रेज़ी दवाइयों का सेवन करने के स्थान पर यौगिक प्रबन्धन एक श्रेष्ठतम विकल्प होता है। यौगिक प्रबन्धन करने से यह समस्याएँ समूल नष्ट होती हैं।

प्रिय शिक्षार्थियों, योग चिकित्सा का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त यह होता है कि सामान्य अवस्था में कठिन योगासनों और गहरे प्राणायामों का अभ्यास अधिक देर तक किया जाता है किन्तु विशेष परिस्थितियों (रोगावस्था, गर्भावस्था एवं प्रसवोपरान्त की अवस्था) में कठिन योगासन और एवं गहरे प्राणायामों का अधिक अभ्यास नहीं

करना चाहिए। अतः गर्भावस्था एवं प्रसवोपरान्त की अवस्था में महिला हल्के सूक्ष्म अभ्यासों एवं दीर्घ श्वसन क्रिया के अभ्यास से शरीर की जीवनी शक्ति, कार्य क्षमता एवं आन्तरिक ऊर्जा में अभिवृद्धि कर सकती है। चूंकि गर्भावस्था एवं प्रसव के उपरान्त की अवस्था में शरीर काफी कोमल एवं संवेदनशील हो जाता है, अतः इस अवस्था में कठिन योगाभ्यास नहीं किया जाता है। प्रसव के उपरान्त छः माह तक कठिन योगासनों का अभ्यास वर्जित होता है अतः इस अवस्था में सन्धि संचालन के अभ्यास, सूक्ष्म अभ्यास और हल्के आसनों का अभ्यास करने से महिलाओं की उपरोक्त समस्याएँ दूर होती है। संन्धि संचालन के अभ्यासों से सम्पूर्ण शरीर में रक्त प्रवाह तीव्र होता है और प्राणऊर्जा में वृद्धि होती है।

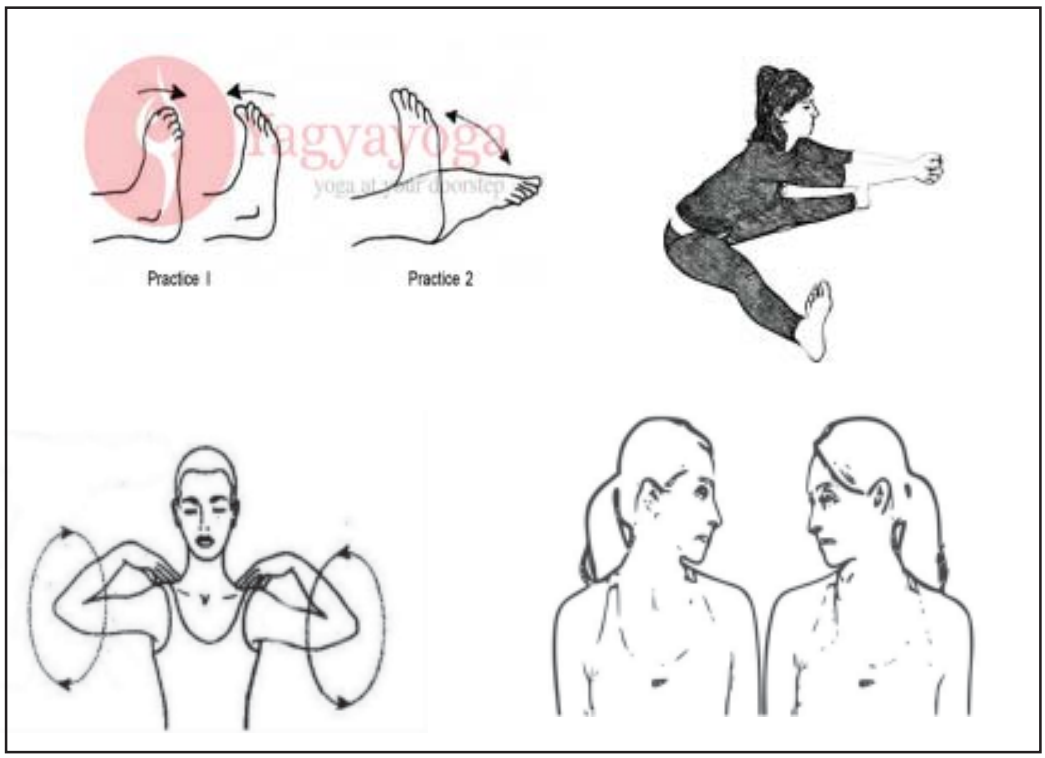

चित्र 5.2 : गर्भावस्था एवं प्रसवोपरान्त सन्धि संचालन अभ्यास

इस अवस्था में प्राणायाम एवं ध्यान की भूमिका अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। अतः विधिपूर्वक अनुलोम-विलोम, नाड़ी शोधन, उज्जायी और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास अधिक समय तक करना चाहिए। दीर्घ श्वसन क्रिया करने के साथ प्रणव उच्चारण करना चाहिए। प्राणायाम के अभ्यास से शरीर एवं मन प्राण ऊर्जा का विस्तार होता है और ध्यान व प्रार्थना के अभ्यास मानसिक एवं आत्मिक बल की प्राप्ति होती है जिससे उपरोक्त समस्याओं का समूल निवारण होता है।

उपरोक्त योगाभ्यास के साथ-साथ प्रातःकालीन भ्रमण, सुव्यवस्थित दिनचर्या एवं पथ्य आहार के सेवन से महिलाओं की उपरोक्त समस्याओं का समूल निवारण हो जाता है। यौगिक प्रबन्धन के अन्तर्गत चित्त को शान्त अवस्था में रखते हुए स्वाध्याय के साथ सकारात्मक चिंतन और प्रसन्नतापूर्वक रहने से महिलाओं के लिए यह काल सरल और सुविधाजनक हो जाता है।

bdkbxr iz'u&5-2

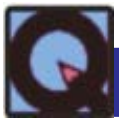

सही ग़लत बताइए–

क) मानव में गर्भावस्था का समय 40 सप्ताह होता है। ( )

ख) गर्भावस्था में कठिन योगासन एवं गहरे प्राणायामों का अभ्यास करना चाहिए। ( )

ग) संधि संचालन के अभ्यास से संपूर्ण शरीर में रक्त प्रवाह तीव्र होता है और प्राणऊर्जा में वृद्धि होती है। ( )

5-4 jtksfuo`fÙk d nkSjku ;kSfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों, गर्भधारण एवं प्रसव की अवस्था के उपरान्त की अवस्था रजोनिवृत्ति होती है। इस अवस्था में महिला के मासिक धर्म का चक्र रुक जाता है और विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होते हैं। इस अवस्था में भी महिला के सम्मुख कुछ समस्याएँ उत्पन्न होती हैं जिनका योगाभ्यास से प्रबन्धन किया जाता है। रजोनिवृत्ति के यौगिक प्रबन्धन को जानने के लिए रजोनिवृत्ति एवं इससे सम्बन्धित लक्षणों तथा समस्याओं को जानना आवश्यक होता है।

5-4-1 jtksfuo`fÙk ifjp; (Menopause)

जब डिम्ब ग्रन्थि में डिम्बों का क्षरण बन्द हो जाता है, तब मासिकधर्म भी बन्द हो जाता है। डिम्ब ग्रन्थि में जो अन्तःस्राव बनते हैं, वे ही डिम्ब के परिपक्व होने के बाद अंडोत्सर्ग, गर्भस्थापना और गर्भवृद्धि के कारण होते हैं। डिम्ब ग्रन्थि के सक्रिय जीवन के समाप्त होने पर इन स्रावों का बनना निसर्गतः बन्द हो जाता है। रजोनिवृत्ति इसी का सूचक तथा परिणाम है।

रजोनिवृत्ति होने पर स्त्री के शरीर में शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के परिवर्तन हो जाते हैं। बहुधा ये परिवर्तन इतनी धीमी गति तथा अल्प होते हैं कि, स्त्री को कोई असुविधा नहीं होती है, किन्तु, कुछ स्त्रियों को विशेष कष्ट होता है। रजोनिवृत्ति को अग्रेंजी में मेनोपॉज (Menopause) कहते हैं, जिसका अर्थ 'जीवन में परिवर्तन' होता है। यह वास्तव में स्त्री के जीवन का परिवर्तनकाल होता है। इस काल का प्रारम्भ होने पर चित्त में निरूत्साह, शरीर में शिथिलता, निद्रा नहीं आना, सिर में तथा शरीर को भिन्न-भिन्न भागों में पीड़ा रहना, अनेक प्रकार की असुविधाएँ या बेचैनी होना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। बहुतों के शरीर में स्थूलता आ जाती है। आनुवंशिक या वैयक्तिक उन्माद या पागलपन होने की आशंका रहती है और अन्य प्रकार के मानस विकार भी हो सकते हैं। प्रजनन क्रिया समाप्त होने के पश्चात, प्रजनन अंगों में अबुर्द (Tumor) होने का भय रहता है। डिम्ब ग्रन्थि और गर्भाशय दोनों में अर्बुद (Tumor) उत्पन्न हो सकते हैं। गर्भाशय में घातक और प्रघातक दोनों प्रकार के अर्बुदों की प्रवृत्ति होती है। मासिक धर्म की गडबड़ी प्रजनन अंगों में कैन्सर का सर्वप्रथम लक्षण होता है। उदर के आकार में वृद्धि का कारण अर्बुद (Tumor) हो सकता है। इस अवस्था में गलगंड या घेंघा रोग के उत्पन्न होने की भी संभावना रहती है।

fVIi.kh

सभी महिलाओं को प्रायः जीवन की एक निश्चित अवस्था पर रजोनिवृत्ति यानी मेनोपॉज होती हैं। यद्यपि रजोनिवृत्ति का चक्र 45 से 50 उम्र में शुरू हो जाता है परन्तु, हाल ही में हुए शोध अध्ययन से यह भी पता चला है कि अब मेनोपॉज की उम्र घट चुकी है। अब 50 नहीं बल्कि इसके लक्षणों का अनुभव 30 की उम्र में ही होने लगा है। इस अध्ययन के अनुसार एक-दो प्रतिशत भारतीय महिलाएं 29 से 34 साल के बीच रजोनिवृत्ति के लक्षणों का अनुभव करती हैं, इसके अलावा 35 से 39 साल की उम्र के बीच की उम्र में यह आंकड़ा आठ प्रतिशत तक बढ़ जाता है।

सामान्यता जीवन में एक आयु पूरा करने पर महिलाओं के शरीर में अण्डाशय से अण्डे के उत्पादन की क्रिया बन्द हो जाती है, इस कारण से शरीर में एस्ट्रोजन हार्मोन की कमी हो जाती है और रजोनिवृत्ति अवस्था प्रारम्भ हो जाती है। इस अवस्था में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं-

i) अनियमित ढंग से मासिक चक्र होना।

ii) अचानक से तेज़ गर्मी लगना या असामान्य ढंग से अचानक पसीना आना।

iii) सामान्य नींद में समस्या होना एवं गहरी निद्रा में कमी होना।

iv) शरीर का वजन अचानक से बढ़ना।

v) रक्तचाप अनियमित होने के साथ अचानक घबराहट होना।

vi) जनन अंगों में सूखापन के साथ प्रजनन क्षमता में कमी होना।

vii) त्वचा में रुखापन और झुर्रियां होना।

viii) मनोदशा में बदलाव जैसे चिड़चिड़ापन, क्रोध आदि एवं संवेगिक अस्थिरता।

प्रिय शिक्षार्थियों, उपरोक्त लक्षण यह संकेत करते करते हैं कि महिला रजोनिवृत्ति अवस्था में प्रवेश कर रही है। इन लक्षणों के साथ-साथ शोध अध्ययन से यह तथ्य भी स्पष्ट हुआ है कि इस अवस्था में तीन में से एक व्यस्क महिला को हृदय सम्बन्धी कोई न कोई रोग होता है। विशेष रूप से रजोनिवृत्ति के बाद हृदय सम्बन्धित बिमारियों का जोखिम बढ़ सकता है। महिलाओं में मेनोपॉज के 10 साल बाद दिल का दौरा पड़ने के मामलों में वृद्धि देखी जाती है। यह बात एक शोध में सामने आयी है। शोध रिपोर्ट के मुताबिक, महिलाओं में रजोनिवृत्ति के संक्रमण को अन्य स्वास्थ्य प्रभावों के साथ जोड़कर देखा जाता है, जिसमें हॉट फ्लेशेज़ और डिप्रेशन से लेकर वास्कुलर एजिंग तक शामिल होती है, जिसे आम तौर पर धमनियों की कठोरता और एंडोथेलियल डिस्फंकशन के रूप में देखा जाता है। अब यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होता है कि महिलाओं के जीवन की इस महत्त्वपूर्ण अवस्था का यौगिक प्रबन्धन किस प्रकार किया जा सकता है और महिलाओं की रजोनिवृत्ति अवस्था का यौगिक प्रबन्धन कितना प्रभावशाली होता है। अतः अब रजोनिवृत्ति अवस्था के यौगिक प्रबन्धन पर विचार करते है।

5-4-2 ;kfxd icU/ku (Yogic Management of Menopause)

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि उपरोक्त तथ्य स्पष्ट करते हैं कि, सामान्यतया 45 वर्ष की आयु पार करने के साथ महिलाओं के जीवन में रजोनिवृत्ति अवस्था प्रारम्भ हो जाती है। रजोनिवृत्ति की अवस्था में उत्पन्न लक्षण

महिला के दैनिक जीवन में जटिलताएं उत्पन्न करते हैं। इनमें शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक अर्थात् सभी प्रकार की समस्याओं का सामना महिलाओं को करना पड़ता है। इस अवस्था में एक ओर जहाँ शरीर में थकावट, भार में वृद्धि और रक्तचाप में असन्तुलन के साथ हृदय सम्बन्धित बिमारियों का जोखिम बढ़ जाता है तो वहीं दूसरी ओर शरीर की नींद और भूख जैसी प्राथमिक जैविक क्रियाओं में समस्याएँ उत्पन्न होने लगती हैं। इसके साथ-साथ महिला के स्वभाव का चिड़चिड़ा होना और क्रोध आदि संवेगों पर नियंत्रण कम होने जैसे लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं। अतः इन सभी जटिलताओं से बचने के लिए इस अवस्था में यौगिक प्रबन्धन अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। इस अवस्था का यौगिक प्रबन्धन निम्न प्रकार किया जा सकता है-

I½ "kVde dk iHkko

प्रिय शिक्षार्थियों, शरीर का शोधन करने के उद्देश्य से छः शोधन क्रियाओं का अभ्यास लाभकारी प्रभाव रखता है। धौति क्रिया से सम्पूर्ण उदर प्रदेश का शोधन होता है। बस्ति क्रिया से आंतों के स्वच्छ होने के साथ-साथ वात दोष सन्तुलित होता है। नेति क्रिया के अभ्यास से शीर्ष प्रदेश का शोधन होता है। नौलि क्रिया का अभ्यास उदर प्रदेश को क्रियाशील बनाने के साथ-साथ जठराग्नि को प्रदीप्त करता है जिससे भूख लगने के साथ भोजन का पाचन सुव्यवस्थित रूप में होता है और शरीर ऊर्जावान बनता है। त्राटक क्रिया का अभ्यास मानसिक स्थिरता एवं एकाग्रता उत्पन्न करता है जिससे संवेगों पर नियंत्रण स्थापित होता है। कपालभाति क्रिया का अभ्यास करने से विजातीय पदार्थ बाहर उत्सर्जित होते हैं जिससे शरीर का वजन कम होने के साथ जीवन शक्ति एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है।

इस प्रकार अर्थ यह है कि इस अवस्था में षट्कर्म का अभ्यास करने से शरीर का शोधन होता है और शारीरिक स्वच्छता के साथ मानसिक स्थिरता व एकाग्रता उत्पन्न होती है। अतः महिलाओं को इस अवस्था में शरीर की क्षमता एवं योग्यता के अनुसार षट्कर्मों की शुद्धि क्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए।

II½ vklu dk vH;kl

प्रिय शिक्षार्थियों, रजोनिवृत्ति की अवस्था में शरीर को सक्रिय, बलवान, ऊर्जावान एवं स्वस्थ बनाने के उद्देश्य से योगासनों का नियमित अभ्यास करना चाहिए। योगासनों से पूर्व शरीर को सक्रिय बनाने के लिए सूक्ष्म अभ्यासों के द्वारा शरीर को सक्रिय बनाना चाहिए। इसके उपरान्त ताड़ासन, त्रिकोणासन, उत्कटासन, वज्रासन, तितली आसन, गोमुखासन, सिंहासन, उत्तानपादासन, मरकटासन, भुजंगासन और शलभासन के साथ पद्मासन व सिद्धासन का अभ्यास नियमित रूप से एवं विधिपूर्वक करने से विशेष लाभों की प्राप्ति होती है। इन आसनों के अभ्सास से शरीर लचीला एवं स्वस्थ होने के साथ-साथ आन्तरिक जनन तंत्र भी स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनता है। इसके साथ-साथ शरीर की क्षमता के अनुसार सूर्यनमस्कार का अभ्यास मंत्रों के साथ एवं पूर्ण एकाग्रता के साथ करने से रजोनिवृत्ति की अवस्था में उत्पन्न समस्याओं का स्थाई समाधान होता है। सूर्यनमस्कार के अभ्यास से शरीर का वजन कम होने के साथ-साथ गहरी नींद की प्राप्ति होती है और रजोनिवृत्ति की समस्याएँ कम होती है।

III½ enk ,o cU/kk dk iHkko ½

रजोनिवृत्ति की अवस्था में योगमुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, शक्तिचालिनी, महामुद्रा और महाबन्धमुद्रा का विधिपूर्वक अभ्यास करने से आन्तरिक ऊर्जा जाग्रत होती है और सम्बन्धित विकार समूल नष्ट होते हैं।

fVIi.kh

IV½ iR;kgkj dk iHkko

प्रत्याहार के द्वारा इन्द्रियों पर संयम करते हुए शुद्ध-सात्विक आहार-विहार एवं सुव्यवस्थित दिनचर्या को अपनाने से शरीर की आन्तरिक ऊर्जा में बहुत तेज़ी से वृद्धि होती है। इसके फलस्वरूप सात्विक वृत्ति का विकास होने के साथ-साथ इन्द्रियों और मन पर संयम स्थापित होता है। प्रत्याहार के पालन से मन में स्थिरता एवं संवेगों पर नियंत्रण के साथ धैर्य का विकास होता है, जो रजोनिवृत्ति की समस्याओं का समाधान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। अर्थ यह है कि प्रत्याहार पालन रजोनिवृत्ति अवस्था का महत्त्वपूर्ण अंग होता है।

V½ ik.kk;ke dk iHkko

प्राणायाम का अभ्यास रजोनिवृत्ति अवस्था में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। चूंकि रजोनिवृत्ति अवस्था शरीर का परिवर्तन काल होता है जिसमें शरीर की प्राण ऊर्जा प्रायः क्षीण हो जाती है, अतः इस प्राण ऊर्जा को उन्नत बनाने के लिए प्राणायाम का नियमित अभ्यास अत्यन्त अनिवार्य होता है। प्राणायाम के अभ्यास से रजोनिवृत्ति अवस्था की समस्याएँ समूल नष्ट होती हैं।

प्रातःकाल खाली पेट साफ-स्वच्छ स्थान पर स्थिर और एकाग्र मन के साथ अनुलोम-विलोम, नाड़ी शोधन, सूर्यभेदी, उज्जायी और भ्रामरी प्राणायामों का अभ्यास शरीर को ऊर्जावान बनाने के साथ मन को सकारात्मक बनाता है। इन प्राणायामों के अभ्यास से रजोनिवृत्ति के उपरान्त हृदय से सम्बन्धित रोगों की संभावनाएं कम हो जाती हैं और अचानक गर्मी लगना, नींद ना आना व शरीर का वजन बढ़ना आदि विकृतियाँ दूर हो जाती हैं।

VI½ /;ku dk iHkko %

प्रिय शिक्षार्थियों, रजोनिवृत्ति अवस्था में ध्यान और प्रार्थना का अभ्यास भी लाभकारी प्रभाव रखता है। ध्यान के अभ्यास से नकारात्मकता का ह्रास होने के साथ सकारात्मक चिन्तन का विकास होता है। इसके परिणामस्वरूप शरीर की चयापचय दर सन्तुलित होती है और शरीर के सभी अंगों एवं तंत्रों की क्रियाशीलता एवं कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है योगांगों का पालन करने से महिलाओं की रजोनिवृत्ति अवस्था की जटिलताएं समाप्त हो जाती हैं और रजोनिवृत्ति अवस्था के परिवर्तन महिला के लिए सरल, सहज और अनुकूल हो जाते हैं। यौगिक प्रबन्धन को अपनाने से महिला स्वयं को बहुत आसानी से इस अवस्था के साथ समायोजित कर लेती है। यौगिक प्रबन्धन का एक महत्त्वपूर्ण अंग पथ्य एवं अपथ्य आहार होता है। इस अवस्था में महिला को अपथ्य आहार का त्याग करते हुए निम्न पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए-

A) iF; vkgkj- महिला को प्रातःकाल उषापान करते हुए कब्ज़ रोग से बचना चाहिए। इसके साथ अंकुरित आहार का सेवन, जौ, चना, गेहूँ को मिलाकर चौकर सहित रोटियों का सेवन और मौसम के अनुसार हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे मैथी, पालक, लौकी, तुरई, परवल, करेला, नींबू आदि का सेवन

करना चाहिए। मौसमी ताजे फलों जैसे मौसमी, सन्तरा, अनार, आम, पपीता, अंगूर आदि का अधिक सेवन करना चाहिए।

B) **viF; vkgkj-** चाय, चीनी, नमक आदि उत्तेजक एवं तामसिक पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। मैदा और मैदे से बने सभी खाद्य पदार्थों, कृत्रिम रंगों एवं रसायनों से युक्त बाजार की मिठाइयों व खाद्य पदार्थों का प्रयोग वर्जित होता है। विशेष रूप से रसायनों से युक्त आहार के सेवन से महिलाओं की प्रजनन क्षमता का ह्रास होने के साथ रोगों की उत्पत्ति होती है।

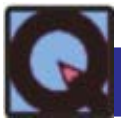

bdkbxr i'u&5-3

सही/ग़लत बताइए–

क) रजोनिवृत्ति का अर्थ है– जीवन में परिवर्तन। ( )

ख) रजोनिवृत्ति की अवस्था में यौगिक प्रबंधन की आवश्यकता नहीं। ( )

ग) कपालभाति क्रिया करने से विजातीय पदार्थ बाहर उत्सर्जित होते हैं। ( )

vkiu D;k lh[kk

इस इकाई (यूनिट) में हमने सीखा कि

महिला परिवार की नींव, समाज का आधार एवं राष्ट्र की रीढ़ होती है। महिला के स्वस्थ, सुखी एवं प्रसन्न होने पर परिवार, समाज एवं राष्ट्र उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है, जबकि, महिला के रोगी और दुखी होने पर परिवार, समाज एवं राष्ट्र पतन की गहराईयों में जाने लगता है।

वर्तमान काल के विकृत आहार-विहार, असंयमित दिनचर्या, मानसिक तनाव एवं नकारात्मक चिन्तन आदि कारकों ने महिलाओं के स्वास्थ्य पर बहुत नकारात्मक प्रभाव डाला है। विकृत आहार-विहार के परिणाम स्वरूप जहाँ शारीरिक बल और क्षमता में कमी आयी है तो वहीं नकारात्मक चिन्तन ने शरीर में हार्मोन्स के सन्तुलन को बिगाड़ दिया है।

स्वास्थ्य से अभिप्राय केवल शरीर के स्वस्थ होने से ही नहीं होता है अपितु, शरीर के साथ-साथ मानसिक स्तर पर सकारात्मक अनुभूतियाँ स्वास्थ्य का महत्त्वपूर्ण पक्ष होता है।

युवावस्था में साधारणतया कन्याओं को 12 से 15 वर्ष की आयु में और उष्ण प्रदेशों में इससे भी पूर्व मासिक धर्म प्रारम्भ हो जाता है, जिसका अर्थ यह होता है कि कन्या गर्भ धारण के योग्य हो रही है। तब से लेकर 45 से 50 वर्ष की आयु तक साधारणतया प्रत्येक 28वें दिन मासिक धर्म (Menstrual Cycle) होता रहता है।

सामान्यता महिलाओं में मासिक धर्म का समय 28 दिन होता है। महिलाओं के जीवन की निश्चित अवधि में प्रत्येक 28वें दिन यह चक्र नियमित रूप से चलता रहता है। इस चक्र का सामान्य रूप से चलना उत्तम स्वास्थ्य का परिचायक होता है जबकि, इस चक्र की अनियमितता रोगावस्था को जन्म देती है।

महिला का जीवन परिवर्तनों के साथ बहुत गहराई से जुडा रहता है। महिला जीवन के लिए यह परिवर्तन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं चुनौतीयुक्त होते हैं। इन परिवर्तनों के साथ स्वयं को समायोजित करना महिला के लिए बड़ी चुनौती होती है। इस इकाई (यूनिट) में महिला के जीवन परिवर्तनों का यौगिक प्रबन्धन समझाते हुए स्पष्ट किया गया है कि योग के महत्त्वपूर्ण अंगों जैसे षट्कर्म, आसन और प्राणायाम आदि का नियमित एवं विधिपूर्वक अभ्यास करने से महिला को शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बल की प्राप्ति होती है और महिला स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त रहते हुए अपने जीवन उद्देश्य को प्राप्त करने की दिशा में निर्बाध गति से अग्रसर होती रहती है।

bdkb ds vUr e i'u

1) वर्तमान काल में बढ़ते महिलाओं के रोगों के कारण एवं यौगिक प्रबन्धन लिखिए।

2) महिलाओं की मासिक धर्म की प्रमुख समस्याएँ एवं उनका यौगिक प्रबन्धन सविस्तार समझाइये।

3) महिलाओं में रजोनिवृत्ति के प्रमुख लक्षण लिखते हुए यौगिक प्रबन्धन लिखिए।

4) महिलाओं की समस्याओं में योगाभ्यास के महत्त्व पर सविस्तार प्रकाश डालिए।

bdkbxr i'uk ds mÙkj

5-1	क) 28,	ख) पिट्यूटरी	ग) दीर्घ प्रणव
5-2	क) सही	ख) गलत	ग) सही
5-3	क) सही,	ख) गलत	ग) सही

6

श्वसन एवं हृदय (कॉर्डियोवेस्कुलर) सम्बन्धी रोग एवं यौगिक चिकित्सा

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व इकाई (यूनिट) में आपने महिलाओं के यौगिक प्रबन्धन के विषय में जाना और ज्ञान प्राप्त किया कि महिलाएं यौगिक प्रबन्धन को अपनाकर विभिन्न रोगों से मुक्त रहती हुई अपने जीवन को सुखमय और सार्थक बना सकती हैं। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) श्वसन और हृदय से सम्बन्धित रोगों की यौगिक चिकित्सा है। मुनष्य भोजन के बिना कुछ दिनों तक, जल के अभाव में कुछ घन्टों तक जीवित रह सकता है किन्तु श्वास के अभाव में कुछ पलों में ही जीवन पर प्रश्न चिह्न स्थापित हो जाता है। अर्थात् श्वसन क्रिया संसार के प्रत्येक प्राणधारी जीव की सबसे प्रमुख और महत्त्वपूर्ण क्रिया है। मनुष्य जन्म के साथ इस क्रिया के साथ जुड़ जाता है और जीवन पर्यन्त बिना रूके इस क्रिया को सम्पन्न करता रहता है। मानव शरीर में इस क्रिया का होना जीवन और इस क्रिया का रूक जाना ही मृत्यु कहलाता है।

वैज्ञानिक स्तर पर अध्ययन करें तो, श्वास के माध्यम से शरीर ऑक्सीजन नामक प्राणदायी गैस को ग्रहण करता है। इस ऑक्सीजन को फेफड़ों से रक्त में ग्रहण कर लिया जाता है। फेफड़ों से ऑक्सीजन लेकर रक्त हृदय नामक महत्त्वपूर्ण अंग में जाता है। हृदय का प्रमुख कार्य इस ऑक्सीजन युक्त रक्त को सम्पूर्ण शरीर में भेजना होता है अर्थात् हृदय रक्त के माध्यम से ऑक्सीजन गैस को सम्पूर्ण शरीर की कोशिकाओं में भेज देता है। कोशिकाओं में भोजन से प्राप्त ग्लूकोज होता है जिसका ऑक्सीजन की उपस्थिति में दहन (ऑक्सीकरण) होता है। इस ऑक्सीकरण से शरीर के भीतर ऊर्जा की उत्पत्ति होती है जिसका उपयोग विभिन्न आन्तरिक और बाह्य कार्यों को करने में किया जाता है। इस प्रकार श्वसन तंत्र और हृदय तंत्र मिलकर शरीर को ऊर्जा प्रदान करने का कार्य निरन्तर करते रहते हैं। इन दोनों तंत्रों के स्वस्थ और सक्रिय होने पर शरीर ऊर्जावान बना रहता है जबकि इन तंत्रों में विकार उत्पन्न होने पर शरीर ऊर्जाहीन हो जाता है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में श्वसन तंत्र और हृदय से सम्बन्धित रोगों के प्रमुख लक्षणों एवं इनकी यौगिक

चिकित्सा को समझाया गया है। अर्थात् श्वसन और हृदय से सम्बन्धित रोगों के क्या-क्या लक्षण होते हैं जिससे इन रोगों की पहचान (Diagnose) की जा सकती है और इन रोगों की यौगिक चिकित्सा किस प्रकार की जा सकती है? प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में इन्हीं महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर सविस्तार विचार किया गया है।

mís';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्वसन तंत्र के प्रमुख रोगों का वर्णन करने में सक्षम हो सकेंगे;
- श्वसन तंत्र के प्रमुख रोगों का यौगिक प्रबंधन करने में सक्षम हो सकेंगे;
- हृदय सम्बन्धी प्रमुख रोगों का वर्णन कर सकेंगे;
- हृदय सम्बन्धी रोगों की यौगिक चिकित्सा पर प्रकाश डाल सकेंगे।

6-1 'olu ra= ds izeq[k jksx

प्रिय शिक्षार्थियों, आधुनिक समय में फैक्ट्रियों और यातायात के साधनों से निकलने वाले धुएँ, वातावरण में प्रयोग हो रहे रासायनिक कीटनाशक जहरों, जनसंख्या विस्फोट और अग्निहोत्र (हवन) नहीं करने आदि कारकों ने पर्यावरण असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न कर दी है। वर्तमान समय में वातावरण में प्रदूषण के स्तर को देखकर प्रत्येक पर्यावरणीय वैज्ञानिक (Ecologist) के माथे पर चिन्ता की गहरी लकीरें उभर कर आती हैं। इसके साथ-साथ विकृत खान-पान और मानसिक तनाव के कारण मनुष्यों में श्वसन तंत्र से सम्बन्धित रोगों की बाढ़ सी आयी हुई है। इन रोगों से ग्रस्त होने पर श्वसन क्रिया बाधित होने से शरीर में ऊर्जा उत्पादन की दर कम हो जाती है और शरीर ऊर्जाहीन और शक्तिहीन हो जाता है। मानव शरीर में श्वसन तंत्र से सम्बन्धित प्रमुख रोग निम्न होते हैं-

6-1-1 lkbukslkbfVl jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

यह श्वसन तंत्र का बहुत तेज़ी से बढ़ता रोग है जिसे सामान्य बोलचाल की भाषा में साइनस के नाम से

चित्र 6.1: साइनस के स्थान के लक्षण

भी जाना जाता है। इस रोग में नासिका के चारों ओर सूजन के साथ तेज़ सिर दर्द होने लगता है जिसमें दर्दनिवारक दवाइयों से भी आराम नहीं मिल पाता है।

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) नासिका के भीतर की झिल्ली में बैक्टिरिया या फंगस के संक्रमण के कारण नासिका क्षेत्र में दर्द के साथ सूजन होना।

2) लगातार जुकाम के साथ श्लेष्मा का अधिक स्रावण होना।

3) नासिका के चारों ओर चेहरे पर सूजन आ जाना।

4) शरीर में शक्तिहीनता के साथ तेज़ सिरदर्द रहना।

5) नासिका में गन्ध ग्रहण करने की शक्ति क्षीण हो जाना।

6) नासिका में साइनस की जगहों पर दबाने से दर्द होना।

7) नाक की हड्डी बढ़ना अथवा टेढ़ी होने के कारण श्वास लेने में आवाज के साथ परेशानी होना।

8) खांसी के साथ नासिका में कफ जम जाना।

'kjhj esa mijksDr y{k.k 'olu r= dks lkbul jksx dh vksj ladsr djrs gSA

6-1-2 VkWfUlykbfVl jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

मानव शरीर में गले के दोनों ओर दो टॉन्सिल नामक ग्रन्थियाँ उपस्थित रहती हैं जिनका कार्य बाह्य रोगाणु अथवा विषाणुओं से शरीर की सुरक्षा करना होता है। इन ग्रन्थियों को लिम्फ ग्रन्थियाँ कहा जाता है। अचानक मौसम परिवर्तन, ठण्डे पदार्थों का अधिक सेवन और अव्यवस्थित दिनचर्या के परिणामस्वरूप जब इन ग्रन्थियों में संक्रमण हो जाता है, तब इनके आकार में वृद्धि के साथ तीव्र वेदना होने लगती है जिसे टॉन्सिलाइटिस रोग कहा जाता है। श्वसन तंत्र का यह रोग पहले बच्चों में अधिक पाया जाता था परन्तु, अब यह युवाओं को भी चपेट में ले रहा है।

चित्र 6.2: टॉन्सिल का स्थान

fVIi.kh

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) गले में स्थित टॉन्सिल ग्रन्थियों में संक्रमण के कारण इस क्षेत्र में दर्द के साथ सूजन होना।

2) गले में कफ की अधिकता के साथ खराश होना।

3) गले में तीव्र वेदना के साथ कुछ भी निगलने में बहुत परेशानी होना।

4) गले से लेकर कानों तक दर्द एवं खुजली होना।

5) शरीर में कमज़ोरी के साथ बुखार से ग्रस्त हो जाना।

6) बोलने में परेशानी के साथ आवाज परिवर्तित हो जाना।

7) गर्दन में दर्द के साथ सिरदर्द होना।

'kjhj es mijksDr y{k.k 'olu r= d VkfUlykbfVl jksx dh vksj lsdr djr gSA

6-1-3 czksdkbfVl jksx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

मानव शरीर की वक्षीय गुहा में दो फेफड़े उपस्थित होते हैं। ये बहुत महत्त्वपूर्ण और कोमल रचनाएँ होती हैं जिनके भीतर श्वसनी और श्वसनिकाओं का जाल फैला होता है, जिनके माध्यम से श्वास की वायु फेफड़ों तक जाती है। इन श्वसनी में बाह्य रोगाणु अथवा विषाणुओं से संक्रमण होने पर इनमें सूजन उत्पन्न हो जाती है जिसे ब्रोन्काईटिस (श्वसनी शोथ) रोग कहा जाता है।

चित्र 6.3: वक्षीय गुहा में फेफडे एवं श्वसनिकाएं

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) श्वसनियों में संक्रमण के कारण वक्ष प्रदेश में तीव्र दर्द होना।

2) कफ की अधिकता के साथ खांसी होना एवं खांसते समय बहुत परेशानी होना।

3) श्वसन क्रिया अव्यवस्थित होने के साथ श्वास फूलना।

4) श्वसन गति में वृद्धि के साथ नाड़ी दर बढ़ जाना।

5) शरीर में कमज़ोरी के साथ ठंड लगते हुए बुखार आ जाना।

6) सम्पूर्ण शरीर में दर्द के साथ बच्चों में न्यूमोनिया हो जाना।

7) लगातार नाक बहना और भूख नहीं लगना।

'kjhj esa mijksDr y{k.k 'olu ra= ds czkWadkbfVl jksx dh vksj ladsr djrs gSaA

6-1-4 vLFkek ¼nek½ jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

आधुनिक समाज में श्वसन तंत्र का यह रोग बहुत तेज़ी से बढ़ रहा है। पहले यह एक बुढ़ापे का रोग माना जाता था परन्तु मानसिक तनाव और रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण होने के कारण आजकल यह रोग बच्चों और युवाओं में भी बहुत तेज़ी से फैलता जा रहा है। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि यह रोग विकासशील देशों की तुलना में विकसित देशों में अधिक फैल रहा है। यह रोग व्यक्ति की जीवन शक्ति को इतना कमज़ोर बना देता है कि एक बार शरीर में प्रवेश करने के बाद जीवन भर के लिए जुड़ जाता है।

चित्र 6.4: दमा रोग में फेफडों की स्थिति

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) श्वसन क्रिया अचानक तीव्र होने के साथ अनियमित और अव्यवस्थित होना।

2) बहुत खाँसी उठना और खाँसते-खाँसते व्यक्ति का होश खो देना।

3) रात्रि में खाँसी आना और प्रातःकाल नियमित रूप से लगातार खाँसी उठना।

4) सामान्य कार्य करने पर ही श्वास फूलना।

5) शरीर में कमज़ोरी के साथ ठंड लगते हुए बुखार आ जाना।

6) सम्पूर्ण शरीर में दर्द के साथ आलस्य और भारीपन का बने रहना।

7) कफ के साथ खाँसी का लम्बे समय तक बने रहना।

8) वक्ष प्रदेश में दर्द के साथ शरीर में शक्तिहीनता का अनुभव होना।

'kjhj esa mijksDr y{k.k vLFkek ;k nek jksx dh vksj ladsr djrs gSaA

टिप्पणी

6.2 श्वसन तंत्र के प्रमुख रोगों की यौगिक चिकित्सा

प्रिय शिक्षार्थियों, योग का प्रारम्भ अनुशासन से होता है, अतः सर्वप्रथम सुव्यवस्थित दिनचर्या एवं आहार-विहार पर नियंत्रण के साथ साफ-स्वच्छ वातावरण में वास करने से श्वसन तंत्र के रोगों में शीघ्र लाभ प्राप्त होता है। इसके साथ-साथ श्वसन तंत्र के रोगों में यौगिक क्रियाओं जैसे षट्कर्म, आसन, मुद्रा-बंध, प्राणायाम एवं ध्यान आदि का अभ्यास रोग दूर करने में अत्यन्त प्रभावी सिद्ध होता है। इन यौगिक क्रियाओं का अभ्यास कराने से श्वसन रोगी को तुरन्त लाभ मिलने लगता है तथा लम्बे समय तक इन क्रियाओं का नियमित अभ्यास कराने से रोग के रोगी पर नियंत्रण प्राप्त होने लगता है। श्वसन तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा इस प्रकार है-

1) **षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का अभ्यास करना-** श्वसन तंत्र के रोगों का सम्बन्ध कफ दोष की विकृति से होता है अतः कफ दोष को सम बनाने के लिए षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करना चाहिए। इन शुद्धिक्रियाओं में श्वसन रोगी को प्रातःकाल नमकीन गुनगुने जल से वमन और कुंजल क्रिया का अभ्यास करना चाहिए। कुशल निर्देशन में वस्त्रधौति क्रिया का अभ्यास करने से अस्थमा रोगी को विशेष लाभ की प्राप्ति होती है। इसके साथ-साथ नियमित रूप से जलनेति और सूत्रनेति का अभ्यास करने से विकृत कफ शरीर से बाहर निकलता है और नासिका प्रदेश का शोधन होने के साथ रोगी को आराम की अनुभूति होती है। त्राटक क्रिया के अभ्यास से भी रोगी का तनाव दूर होकर मानसिक शान्ति प्राप्त होती है, जिससे श्वसन दर कम होने के साथ रोग में आराम मिलता है। श्वसन तंत्र के रोगों में रोगी को नियमित रूप से कपालभाति क्रिया का अभ्यास करना चाहिए।

2) **आसनों का अभ्यास करना-** श्वसन रोगी को नियमित रूप से प्रातःकालीन भ्रमण और आसनों का अभ्यास करते हुए अपनी जीवन शक्ति व रोग प्रतिरोधक क्षमता को उन्नत बनाने का प्रयास करना चाहिए। रोग की तीव्र अवस्था में सूक्ष्म अभ्यास और वार्म अप एक्सरसाईज करनी चाहिए और रोग की स्थिति सामान्य होने पर शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार सूर्यनमस्कार, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, हलासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। आसनों के उपरान्त शरीर शिथिलीकरण हेतु योग निद्रा का नियमित अभ्यास करना चाहिए।

3) **मुद्रा और बन्धों का अभ्यास करना-** श्वसन रोगी को आन्तरिक ऊर्जा जाग्रत करने के उद्‌देश्य से मुद्रा और बन्धों का अभ्यास करना चाहिए। इसमें यौगिक मुद्राओं जैसे योगमुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, काकी मुद्रा, महामुद्रा, तड़ाकी मुद्रा का अभ्यास करना चाहिए। इनके साथ-साथ मूल बन्ध, उड्डियान बन्ध और जालंधर बन्ध का अभ्यास करते हुए शरीर को रोगमुक्त और ऊर्जावान बनाना चाहिए।

4) **प्राणायाम का अभ्यास करना-** श्वसन रोगी को रोगमुक्त होने के लिए प्रतिदिन विधिपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। इससे प्राणशक्ति और जीवन शक्ति का विस्तार एवं रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर और मन के मध्य सन्तुलन स्थापित होता है और नाड़ियों का मल दूर होने के साथ चित्त निर्मल और मन प्रसन्न होता है। श्वसन तंत्र के रोगों में सूर्यभेदी, उज्जायी, शीत्कारी, भस्त्रिका और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। इसके

साथ-साथ फेफड़ों की कार्यक्षमता में वृद्धि करने के लिए दीर्घ प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का लम्बा जप करना चाहिए।

5½ **iR;kgkj dk ikyu djuk-** श्वसन तंत्र के रोगों में प्रत्याहार पालन अर्थात् अपनी इन्द्रियों पर संयम करने से विशेष लाभ प्राप्त होता है। प्रत्याहार का पालन करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्विक एवं शरीर के लिए हितकारी (कफदोष नाशक) उष्ण प्रकृति के आहार का सेवन करने से रोग में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। श्वसन रोगी को ठंडे जल का सेवन का त्याग करते हुए सदैव उष्ण जल का सेवन करना चाहिए।

6½ **/;ku dk vH;kl djuk-** श्वसन तंत्र के रोगों में तनाव से ग्रस्त रहने पर रोग बहुत गंभीर रूप धारण कर लेता है और रोगावस्था बढ़ती चली जाती है जबकि इसके विपरीत इस अवस्था में सकारात्मक धारणा बनाते हुए ध्यान और प्रार्थना का अभ्यास करने से रोग में आराम मिलना प्रारम्भ हो जाता है। श्वसन रोगी को प्रतिदिन विधिपूर्वक ध्यान का अभ्यास एवं ईश्वर से पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्ति की प्रार्थना करनी चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त योगांगों का पालन करते हुए यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करने से श्वसन तंत्र के सभी रोग समूल दूर होकर व्यक्ति को उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। यौगिक चिकित्सा के अन्तर्गत रोगी को निम्न वर्णित अपथ्य आहार का त्याग करते हुए केवल पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए। श्वसन तंत्र के रोगी को निम्न पथ्य-अपथ्य आहार पर विशेष ध्यान रखना चाहिए-

viF; vkgkj% गरिष्ठ तेलयुक्त खाद्य पदार्थ, शीत प्रकृति के खाद्य पदार्थ, मैदा और मैदे से बनी वस्तुएं, बासी एवं प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्य पदार्थ, मिठाईयाँ, बर्फ-आईसक्रीम, दही-मठ्ठा एवं फ्रिज के ठंडे जल का पूर्णतया त्याग कर देना चाहिए।

iF; vkgkj% हल्का सुपाच्य आहार, उष्ण प्रकृति के खाद्य पदार्थ जैसे अदरक, सौंठ, इलायची, काली मिर्च, अजवायन, तुलसी, सब्जियों का गर्म सूप, विटामिन ए और सी युक्त ताजे फल] चौकर युक्त आटे की रोटिया एवं गर्म जल का सेवन करना चाहिए।

bdkbZxr iz'u&6-1

1. साइनोसाइटिस रोग कि तंत्र से सम्बधित है?
2. गले में तीव्र वेदना, निगलने में कष्ट होना, आवाज मे परिवर्तन किस रोग के मुख्य लक्षण है?
3. श्वसन तंत्र के प्रमुख रोगों में कौन–सी यौगिक क्रिया का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए?

6-3 ân; ls lEcfU/kr izeq[k jksx

प्रिय शिक्षार्थियों, प्राचीन काल में जब वातावरण प्रदूषण से मुक्त था और मनुष्य का आहार पूर्ण रूप से प्राकृतिक था। मनुष्य निश्चित दिनचर्या के अन्तर्गत समय पर उठने से लेकर सभी कार्य सुव्यवस्थित रूप

से करता हुआ तनावमुक्त रहता था, उस समय मनुष्य का हृदय पूर्ण रूप से रोगों से मुक्त रहता था। परन्तु, वर्तमान समय में प्रदूषित वातावरण के साथ, कृत्रिम रसायनों से युक्त आहार करना और अव्यवस्थित दिनचर्या के साथ मानसिक तनाव से ग्रस्त रहना, ऐसे महत्त्वपूर्ण कारक हैं जिनके कारण हृदय रोगों की समाज में एक बाढ़ सी आ गयी है। वर्तमान समय में हृदय रोग सम्पूर्ण विश्व के समक्ष बहुत बड़ी चुनौती के रूप में उभर रहें है। विश्व में हृदय रोगों के कारण प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में लोग मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं और रक्तचाप की समस्या को सबसे बड़ी महामारी घोषित किया गया है। इन रोगों से स्वयं को बचाने के लिए एवं रोगों के उपचार में नियमित योगाभ्यास एवं यौगिक चिकित्सा बहुत प्रभावशाली एवं महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करती है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में यहाँ पर हृदय से सम्बन्धित प्रमुख रोगों एवं उनकी यौगिक चिकित्सा पर विचार करते हैं। मानव शरीर में हृदय से सम्बन्धित प्रमुख रोग निम्न होते हैं-

6-3-1 dksjksujh vkjVjh fMthht dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

यह हृदय से सम्बन्धित ऐसा रोग है जो वर्तमान समय में बहुत तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। विकृत आहार-विहार अथवा अन्य कारणों जब शरीर में हृदय से सम्बधित धमनियों में वसा जमने के कारण इनका आकार संकरा हो जाता है, तब उस स्थिति में हृदय में रक्त–संचार की क्रिया बाधित होने लगती है और सीने में तीव्र चुभन के साथ दर्द उत्पन्न होता है, जिसे कोरोनरी आरटरी डिज़ीज कहा जाता है। इस रोग से ग्रस्त होने पर रोगी व्यक्ति की शल्य चिकित्सा एन्जियोप्लास्टी कराई जाती है किन्तु, इससे भी समस्या का स्थाई समाधान नहीं होता है। अपितु, पुनः इस रोग के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

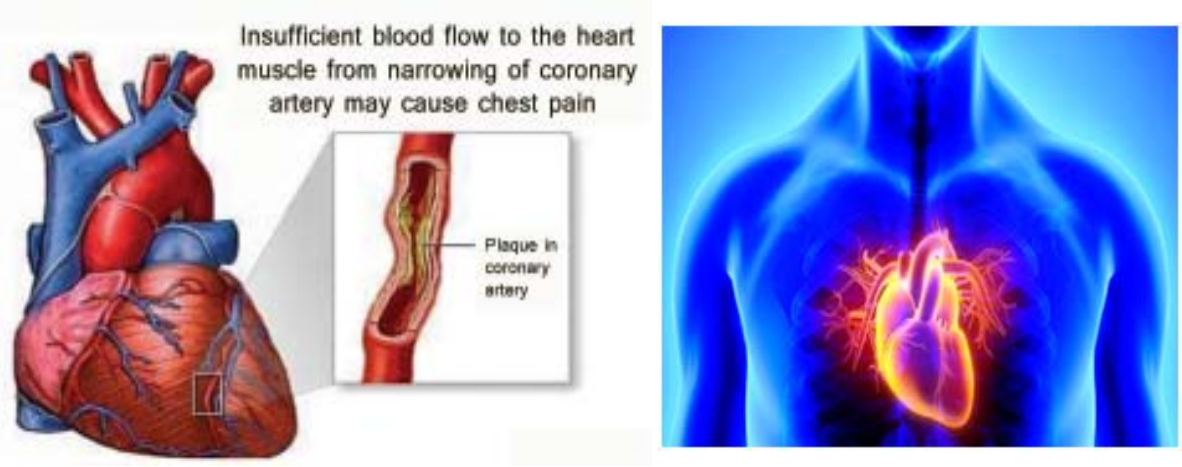

चित्र 6.5: कोरोनरी आरटरी डिज़ीज

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) सीने में बहुत तेज़ दर्द के साथ सुई के समान चुभन का होना इस रोग का सबसे प्रमुख व महत्त्वपूर्ण लक्षण होता है।

2) सीने में बहुत तेज़ दर्द के साथ दिल का दौरा भी पड़ जाता है।

3) दीर्घ श्वास में परेशानी होने के साथ छोटी श्वासें आना एवं श्वासों का फूलना।

4) सीने में दर्द के साथ जी मिचलाना।

5) असामान्य रूप से बिना कार्य किए हुए बहुत थकान होना।

6) वक्ष में सूजन के साथ ठंडा पसीना आना।

शरीर में उपरोक्त लक्षण हृदय से सम्बन्धित कोरोनरी आरटरी डिज़ीज रोग की ओर संकेत करते हैं। कुछ परिस्थितियों में मनुष्य इसे पाचन तंत्र का अपच या एसिडिटी रोग मानकर पाचन तंत्र में जलन मान लेता है किन्तु ऐसी अवस्थाओं में बहुत ध्यान देने की आवश्यकता होती है क्योंकि आगे चलकर यह गंभीर हृदयाघात (**Heart attack**) का कारण भी बन सकता है।

6-3-2 ,atkbuk iSDVksfjl jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

मानव शरीर के वक्ष स्थल में बांयी ओर उठने वाले दर्द को कई बार पाचन तंत्र का अपच या एसिडिटी रोग मानकर इसे अनदेखा कर दिया जाता है जबकि, कई बार मनुष्य इसे हृदयाघात मानकर बहुत परेशान हो जाता है जबकि, वास्तव में यह हृदय का एंजाइना पेक्टोरिस रोग होता है, जिसमें हृदय की मांसपेशियों को कम मात्रा में रक्त आपूर्ति होने के कारण वक्ष के बायें भाग में दर्द के साथ श्वास लेने में परेशानी होती है।

चित्र 6.6: एंजाइन्स पेन्टोरिस

मानव शरीर में एंजाइना पेक्टोरिस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) सीने में बांयी ओर हल्का अथवा तेज़ दर्द होना इस रोग का सबसे प्रमुख मूल लक्षण होता है जो इस रोग की ओर संकेत करता है।

2) छाती में जलन के साथ बेचैनी महसूस होना।

3) सीने में जकड़न के साथ भारीपन महसूस होना।

4) सीने का दर्द कन्धों, गले और पीठ की ओर भी फैलना।

5) शरीर में कमज़ोरी के साथ कार्य करने में रुचि का अभाव होना।

शरीर में उपरोक्त लक्षण हृदय के एंजाइना पेक्टोरिस रोग की ओर संकेत करते हैं। इस रोग की जाँच के लिए आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इलैक्ट्रोकार्डियोग्राम (ई0 सी0 जी0) कराया जाता है।

6-3-3 jDrpki jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

मानव शरीर में सामान्यतया 5.5 लीटर रक्त उपस्थित होता है। इस रक्त की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि शरीर में रक्त किसी भी स्थान पर रूकता नहीं है अपितु प्रतिक्षण हृदय और रक्तवाहिनियों में परिभ्रमण करता रहता है। **'kjhj esa jDr ftl ncko ds lkFk ân; ls jDrokfgfu;ksa esa cgrk gS mls jDrpki dgk tkrk gSA** जब हृदय सिकुड़ता है तो 120 m.m. of Hg. का दबाव होता है जिसे सिस्टोलिक प्रेशर और जब हृदय फैलता है तो 80 m.m. of Hg. का दबाव होता है जिसे डायस्टोलिक प्रेशर कहा जाता है। इस प्रकार स्वस्थ मनुष्य का रक्त चाप 120-80 m.m. of Hg. होता है। जिसे स्फेग्मोमेनोमीटर नामक यंत्र की सहायता से मापा जाता है। परन्तु जब किन्ही कारणों या परिस्थितियों के प्रभाव से रक्तचाप इस सामान्य स्तर से अधिक अथवा कम होता है तब उस अवस्था को रक्तचाप रोग की संज्ञा दी जाती है। रक्तचाप सम्पूर्ण विश्व में सबसे बड़ी महामारी है जिससे ग्रस्त होने वाले रोगियों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है।

चित्र 6.7 : रक्तचाप

इस रोग के दो प्रमुख प्रकार होते हैं। प्रथम उच्चरक्तचाप में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं-

1) तेज़ सिरदर्द के साथ पसीना आना।

2) श्वास गति और नाड़ी स्पंदन की दर अचानक तेज़ हो जाना।

3) हाथों-पैरों में सूक्ष्म कम्पन्न होने के साथ श्वास फूलना।

4) संवेगों पर नियंत्रण का अभाव होने के साथ अधिक क्रोध और स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाना।

5) बेचैनी के साथ नींद में कमी होना और नाक से खून निकलना उच्चरक्तचाप के लक्षण हैं।

'olu ,oa ân; ¼dkfMZ;koLdqyj½ lEcU/kh jksx ,oa ;kSfxd fpfdRlk

इस रोग का दूसरा प्रकार निम्न रक्तचाप होता है जिसमें निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं-

1) सिर में हल्का दर्द के साथ हाथ-पैर ठंडे रहना।

2) श्वास गति और नाड़ी स्पंदन की दर अनियमित हो जाना।

3) हाथों-पैरों में शक्तिहीनता के साथ कार्य में मन नहीं होना।

4) जी मिचलाना, उल्टी होना, धुंधला दिखलाई देना और बेहोशी होना निम्न रक्तचाप रोग के लक्षण हैं।

शरीर में उपरोक्त लक्षण रक्तचाप रोग की ओर संकेत करते हैं।

6-3-4 bfLdfed ân; jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि इकाई (यूनिट) में हमने हृदय से सम्बन्धित कोरोनरी आरटरी डिज़ीज का अध्ययन किया है यह ठीक उसी के समान रोग है जो, वर्तमान समय में बहुत तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। अमेरिका जैसे विकसित देश में इस रोग के लाखों की संख्या में मामले आते हैं। इस रोग में भी जब शरीर में हृदय से सम्बंधित धमनियां क्षतिग्रस्त हो जाती हैं अथवा धमनियों में वसा जमने के कारण इनका आकार संकरा हो जाता है तब उस स्थिति में हृदय में रक्त संचार की क्रिया बाधित होने लगती है और सीने में तीव्र चुभन के साथ दर्द उत्पन्न होता है जिसे इस्किमिक हृदय रोग कहा जाता है।

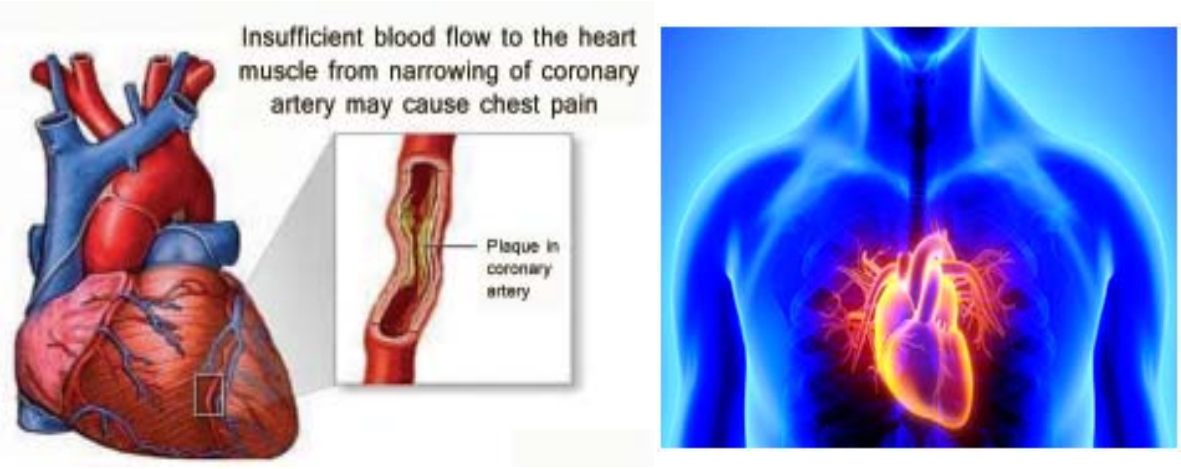

चित्र 6.8 : इस्किमिक हृदय रोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) सीने में बहुत तेज़ दर्द के साथ सुई के समान चुभन का होना इस रोग का सबसे प्रमुख व महत्त्वपूर्ण लक्षण होता है।

2) सीने में बहुत तेज़ दर्द के साथ दिल का दौरा भी पड़ जाता है।

3) दीर्घ श्वास में परेशानी होने के साथ छोटी श्वासें आना एवं श्वासों का फूलना।

fVIi.kh

4) सीने में दर्द के साथ जी मिचलाना।

5) असामान्य रूप से बिना कार्य किए हुए बहुत थकान होना।

6) वक्ष में सूजन के साथ ठंडा पसीने की अनुभूति होना।

इस प्रकार शरीर में उपरोक्त लक्षण इस्किमिक हृदय रोग की ओर संकेत करते हैं।

6-3-5 ofjdkst f'kjk jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि इकाई (यूनिट) में हमने यह अध्ययन किया है कि मानव शरीर में हृदय से ऑक्सीजन युक्त रक्त सम्पूर्ण शरीर के अंगों, ऊतकों और कोशिकाओं तक जाता है, जहाँ पर रक्त से ऑक्सीजन ऊतक ग्रहण कर लेते हैं और कार्बन-डाई ऑक्साईड रक्त को दे देते हैं। कार्बन-डाई ऑक्साईड को लेकर रक्त वेन्स के माध्यम से वापिस हृदय में आता है। इस अवस्था में रक्त गुरुत्वाकर्षण बल के विरुद्ध ऊपर की ओर आता है अतः इसमें बल की आवश्यकता होती है। इस बल को पैरों में स्थित मांसपेशियों से प्राप्त किया जाता है। परन्तु, बढ़ती उम्र के प्रभाव से अथवा अन्य कारणों से जब अशुद्ध रक्त वापिस हृदय में नहीं जा पाता है और वेन्स में ही एकत्र होने लगता है तब इस रोगावस्था को वेरिकोज शिरा (Varicose Veins) का नाम दिया जाता है। वर्तमान समय में यह रोग सम्पूर्ण विश्व में तेज़ी से फैलता जा रहा है, जिसमें पैरों पर नीली और लाल रंग की नसें असामान्य रूप से उभार लिए हुए अगल से दिखलाई पड़ती हैं।

चित्र 6.9 : वेरिकोज शिरा रोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) पैरों पर नीली और लाल रंग की नसें असामान्य रूप से उभार लिए हुए अलग से दिखलाई पड़ना इस रोग का सबसे प्रमुख एवं मूल लक्षण है।

2) पैरों के इन भागों में भारीपन के जलन की अनुभूति होती है।

3) लम्बे समय तक लगातार खड़े होकर कार्य करने से उपरोक्त समस्या बढ़ने लगती है।

4) रोग की गंभीर अवस्था में त्वचा के रंग में परिवर्तन, त्वचा में सूजन और नसों में कठोरता (स्टिफनेस) आने लगती है।

5) पैर के टखने के पास से इसका क्षेत्र फैलने लगता है और इस स्थान पर खुजली, जलन और बेचैनी होने लगती है।

bl idkj 'kjhj esa mijksDr y{k.k ofjdkst f'kjk jksx dh vksj ladsr djrs gSaA

6-4 ân; jksxksa dh ;kSfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, वर्तमान समय में हृदय रोग और रक्तचाप की समस्या सम्पूर्ण विश्व के लिए बहुत बड़ी चुनौती बनी हुई है। इस समस्या से निपटने के लिए अनेक अनुसंधान कार्य किए जा रहें हैं किन्तु इस समस्या का स्थाई समाधान अभी तक भी प्राप्त नहीं हो पाया है। विश्व में इन रोगों से ग्रस्त होकर अकाल मृत्यु को प्राप्त होने वाले मनुष्य की संख्या सबसे अधिक है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने इन रोगों को असाध्य रोगों की श्रेणी में रख दिया है, जिनका स्थाई उपचार संभव नहीं होता है अपितु, एक बार इन रोगों की चपेट में आने के बाद मनुष्य दवाइयों के प्रभाव से केवल इन रोगों के लक्षणों को दबाए रख सकता है और इन रोगों से मुक्ति प्राप्त करना संभव नहीं है। इसलिए विषय की गंभीरता के समझते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा प्रतिवर्ष 29 सितम्बर को 'विश्व हृदय दिवस' घोषित किया गया है। इसका उद्देश्य हृदय रोगों के प्रति जागरुकता उत्पन्न करते हुए इससे सम्बन्धित रोगों पर नियंत्रण प्राप्त करना है।

इन रोगों का यौगिक चिकित्सा के माध्यम से बहुत कुशलतापूर्वक प्रबन्धन किया जा सकता है। योगमय जीवनशैली और यौगिक क्रियाओं के प्रभाव से हृदय रोगों एवं रक्तचाप के रोगों से बचा जा सकता है अपितु इन रोगों के लक्षणों को स्थाई रूप से दूर करते हुए इनसे सदैव के लिए मुक्ति भी प्राप्त की जा सकती है। इसलिए सम्पूर्ण विश्व में अनेक लोग यौगिक क्रियाओं का नियमित अभ्यास करते हुए इन गंभीर रोगों से मुक्ति प्राप्त कर रहे हैं। चूंकि योग का प्रथम सूत्र- 'अथ योगानुशासनम।' अनुशासन के साथ जुडने की प्रेरणा प्रदान करता है अतः सर्वप्रथम सुव्यवस्थित दिनचर्या एवं आहार-विहार पर नियंत्रण के साथ स्वयं को अनुशासित और सकारात्मक करने से हृदय रोगों में शीघ्र लाभ प्राप्त होता है। इसके साथ-साथ हृदय रोगों में यौगिक क्रियाओं जैसे षट्कर्म, आसन, मुद्रा-बंध, प्राणायाम एवं ध्यान आदि का अभ्यास भी विधिपूर्वक पूर्ण श्रद्धा और विश्वासपूर्वक करने से यह रोग समूल नष्ट होते हैं। इन यौगिक क्रियाओं का अभ्यास एवं योगांगों का पालन करने से रक्तचाप एवं हृदय रोगों में तुरन्त लाभ मिलने लगता है तथा लम्बे समय तक इन क्रियाओं का नियमित दिनचर्या से विधिपूर्वक अभ्यास कराने से रोग पर नियंत्रण प्राप्त होने लगता है। हृदय रोगों की यौगिक चिकित्सा इस प्रकार है-

1½ "kV~deZ dh 'kqf)fØ;kvksa dk vH;kl djuk- रक्तचाप एवं हृदय रोगों का सम्बन्ध रक्त की अशुद्धि से होता है अतः रक्त को शुद्ध बनाने के लिए षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करना चाहिए। इन शुद्धिक्रियाओं में पाचन तंत्र को स्वच्छ निर्मल बनाने के लिए शरीर की क्षमता और आवश्यकता अनुसार कुंजल और वमन क्रिया के साथ शंखप्रक्षालन का अभ्यास रोगी को करना चाहिए। यहाँ महत्त्वपूर्ण स्मरणीय तथ्य यह है कि उच्च रक्तचाप की अवस्था में गर्म पानी में नमक का प्रयोग नहीं करना चाहिए अपितु नमक के स्थान पर सौंफ को उबालकर और छानकर पानी का प्रयोग वमन,

fVIi.kh

कुंजल, शंखप्रक्षालन अथवा नेति क्रिया में करना चाहिए। रोगी व्यक्ति को नित्य नेति क्रिया का अभ्यास करना चाहिए। अभ्यास परिपक्व होने पर विधिपूर्वक जलनेति के साथ सूत्रनेति का अभ्यास करने से इन रोगों में आराम मिलता है। त्राटक क्रिया के नियमित अभ्यास से भी रोगी का तनाव दूर होकर मानसिक शान्ति प्राप्त होती है जिससे हृदय को बल और आराम मिलता है। इस अवस्था में कपालभाति क्रिया का तेज़ी से अभ्यास करना वर्जित होता है क्योंकि इससे हृदय पर दबाव पड़ने के साथ रक्तचाप में वृद्धि होती है और रोगी की समस्या बढ़ सकती है।

2½ vkluksa dk vH;kl djuk- रक्तचाप एवं हृदय रोगी के लिए प्रातःकालीन भ्रमण और आसनों का अभ्यास बहुत लाभकारी होता है। प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व उठकर सकारात्मक मनन-चिन्तन करते हुए भ्रमण एवं आसनों का अभ्यास करने से रोग में लाभ प्राप्त होता है। रक्तचाप एवं हृदय रोगी को कठिन आसनों का अभ्यास नहीं करना चाहिए अपितु सूक्ष्म अभ्यासों और वार्म अप एक्सरसाईज अधिक करनी चाहिए। रोग की स्थिति सामान्य होने पर अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार सूर्यनमस्कार एवं सामान्य आसनों जैसे ताड़ासन, त्रिकोणासन, वृक्षासन, पवनमुक्तासन, मरकटासन, भुजंगासन, वक्रासन, उष्ट्रासन, सिंहासन, शशांकासन, पद्मासन, सिद्धासन और स्वस्तिकासन आदि आसनों का अभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए। महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह है कि, शशांकासन का अभ्यास बहुत लाभ प्रदान करता है एवं हृदयाघात की संभावना को कम करता है जबकि शीर्षासन का अभ्यास इन रोगों में वर्जित होता है। आसनों के उपरान्त शरीर शिथिलीकरण हेतु योग निद्रा का नियमित अभ्यास उच्चरक्तचाप एवं हृदय रोगी को अवश्य करना चाहिए।

3½ eqnzk vkSj cU/kksa dk vH;kl djuk- रक्तचाप एवं हृदय रोगी को आन्तरिक ऊर्जा जाग्रत करने के उद्देश्य से मुद्रा और बन्धों का अभ्यास करना चाहिए। इसमें यौगिक मुद्राओं जैसे योगमुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, काकी मुद्रा, महामुद्रा, तडाकी मुद्रा का अभ्यास करना चाहिए। इनके साथ-साथ मूल, उड्डियान और जालंधर बन्धों का अभ्यास करते हुए शरीर को रोगमुक्त और ऊर्जावान बनाना चाहिए।

4½ izk.kk;ke dk vH;kl djuk- रक्तचाप एवं हृदय रोगी को रोगमुक्त होने के लिए प्रतिदिन विधिपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। इससे प्राणशक्ति और जीवन शक्ति का विस्तार एवं रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। प्राणायाम के अभ्यास क्रम में अधिकतम समय अनुलोम-विलोम और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। इनके साथ-साथ रक्तचाप सामान्य होने की अवस्था में सूर्यभेदी प्राणायाम का अभ्यास एवं बहुत धीमी गति से भस्त्रिका प्राणायाम का अभ्यास अतिरिक्त वसा को नष्ट करने के उद्देश्य से किन्तु, बहुत सावधानी और ध्यानपूर्वक करना चाहिए। इनके साथ-साथ शान्त एवं स्थिर मन के साथ हृदय की कार्यक्षमता में वृद्धि करने के लिए दीर्घ प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का लम्बे स्वर में श्रद्धापूर्वक जप करना चाहिए।

5½ izR;kgkj dk ikyu djuk- रक्तचाप एवं हृदय रोगों में प्रत्याहार पालन अर्थात् अपनी इन्द्रियों पर संयम करने से विशेष लाभ प्राप्त होता है। प्रत्याहार का पालन करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्विक एवं शरीर के लिए हितकारी आहार का सेवन करने से रोग में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। उच्च रक्तचाप की अवस्था में इन्द्रियों पर संयम करते हुए नमक-मिर्च और मसाले का त्याग कर देना चाहिए। इन्द्रियों पर संयम करते हुए क्रोध एवं अन्य संवेगों पर नियंत्रण प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

6½ **/;ku dk vH;kl djuk-** रक्तचाप एवं हृदय रोगों में मानसिक तनाव बहुत नकारात्मक प्रभाव रखता है और तनाव ग्रस्त रहने से सम्बन्धित रोग बहुत गंभीर रूप धारण करते चले जाते हैं जिनका कोई उपचार भी संभव नहीं होता है अतः इस अवस्था में मानसिक तनाव का पूर्ण रूप से त्याग करते हुए सकारात्मक धारणा, ध्यान और प्रार्थना का अभ्यास करना चहिए। स्थूल विषयों पर ध्यान की प्रक्रिया को बढाते हुए ज्योतिंर्ध्यान और सूक्ष्म ध्यान का अभ्यास करने से इन रोगों में स्थाई लाभ मिलना प्रारम्भ हो जाता है। हृदय रोगी को प्रतिदिन विधिपूर्वक ध्यान का अभ्यास एवं ईश्वर से पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्ति की प्रार्थना करनी चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त योगांगों का पालन करते हुए यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करने से रक्तचाप एवं हृदय के सभी रोग समूल दूर होकर व्यक्ति को उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। यौगिक चिकित्सा के अन्तर्गत रक्तचाप एवं हृदय रोगी को निम्न वर्णित अपथ्य आहार का त्याग करते हुए केवल पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए। रक्तचाप एवं हृदय रोगी को निम्न पथ्य-अपथ्य आहार पर विशेष ध्यान रखना चाहिए-

viF; vkgkj% नमक, मिर्च, मसाले, वसा, डालडा, घी-तेल चिकनाई युक्त खाद्‌य पदार्थ, मैदा और मैदे से बनी वस्तुएं, बासी एवं प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्‌य पदार्थ, मलाई, मिठाईयाँ, बर्फ-आईसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक्स आदि का त्याग कर देना चाहिए।

iF; vkgkj% हल्का सुपाच्य आहार, गेंहू-जौ और चना मिलाकर चौकर युक्त आटे की रोटियां, दलिया, लौकी, तुरई, टमाटर, नींबू, विटामिन ए और सी युक्त ताजे फल जैसे सन्तरा] मौसमी, अनार, पपीता, अंगूर, अनानास, नारियल पानी आदि सुपाच्य खाद्‌य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

bdkbZ iz'u&6-2

सही / ग़लत बताइए–

क) प्रतिवर्ष 29 सितम्बर को विश्व हृदय दिवस मनाया जाता है। ( )

ख) रक्तचाप एवं हृदय रोगी को शीर्षासन का अभ्यास करना चाहिए। ( )

ग) रक्तचाप एवं हृदय रोगी को पथ्य अपथ्य आहार पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। ( )

vkiu D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में श्वसन तंत्र के रोगों एवं हृदय रोगों की यौगिक चिकित्सा को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) के प्रारम्भ में श्वसन तंत्र के चार महत्त्वपूर्ण रोगों : साइनोसाइटिस,

fVIi.kh

टॉन्सिलाईटिस, ब्रोन्काइटिस और अस्थमा के सामान्य परिचय के साथ इन रोगों के प्रमुख लक्षणों पर प्रकाश डाला गया है। तत्पश्चात् श्वसन तंत्र के रोगों में यौगिक चिकित्सा को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) के इस भाग में रोगियों को कराए जाने वाले योगाभ्यास के साथ अन्य सावधानियों जैसे पथ्य आहार के स्वरूप को भी स्पष्ट किया गया है। इसी प्रकार इकाई (यूनिट) आगे रक्त परिसंचरण तंत्र के रोगों को समझाते हुए उनकी यौगिक चिकित्सा पर प्रकाश डाला गया है।

इकाई (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि यद्यपि योगाभ्यास शरीर के लिए लाभकारी क्रियाएँ होती हैं किन्तु, रोग विशेष की अवस्था में यौगिक क्रियाएँ बहुत सावधानीपूर्वक करने की आवश्यकता होती है। जैसे उच्चरक्तचाप एवं हृदय रोग से ग्रस्त होने पर नेति क्रिया में नमक के स्थान पर सौंफ के जल का प्रयोग करना चाहिए और इसी प्रकार ऐसी अवस्था में रोगी व्यक्ति के द्वारा शीर्षासन का अभ्यास नहीं करना चाहिए। इकाई (यूनिट) में यौगिक चिकित्सा के सभी महत्त्वपूर्ण अंगों को क्रमानुसार रोग के साथ जोड़कर समझाया गया है और अन्त में रोगावस्था में रोगी के लिए लाभकारी पथ्य और रोगी के लिए हानिकारक अपथ्य आहार का वर्णन किया गया है। इस प्रकार इकाई (यूनिट) में श्वसन और हृदय रोगों की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार वर्णन किया गया है।

bdkbZ dk vUr esa iz'u

1) श्वसन रोगों की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार वर्णन कीजिए।

2) हृदय रोगों की यौगिक चिकित्सा की सविस्तार व्याख्या कीजिए।

3) वेरिकोज शिरा रोग का सामान्य परिचय देते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन कीजिए।

4) अस्थमा रोग के प्रमुख कारण समझाते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा लिखिए।

5) टिप्पणियां लिखिए-

   क) साइनोसाइटिस रोग के लक्षण

   ख) रक्तचाप की यौगिक चिकित्सा

bdkbZxr iz'uksa ds mÙkj

6-1 क) श्वसन तंत्र, ख) टॉन्सिलाइटिस, ग) कपालभाति

6-2 क) सही ख) गलत ग) सही

7

पाचन एवं मूत्र-प्रजनन सम्बन्धी रोग एवं यौगिक चिकित्सा

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व इकाई (यूनिट) में आपने श्वसन तंत्र एवं हृदय से सम्बन्धित रोगों की यौगिक चिकित्सा के विषय में जाना और ज्ञान प्राप्त किया कि योगमय जीवनशैली अर्थात् आहार-विहार के साथ यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से मानव शरीर के इन महत्त्वपूर्ण संस्थानों को स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनाया जा सकता है। अब यहाँ पर महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि, जिस प्रकार श्वसन तंत्र एवं हृदय सम्बन्धित रोगों का यौगिक चिकित्सा के द्वारा उपचार किया जा सकता है, उसी प्रकार पाचन और उत्सर्जन तंत्र के विकारों को भी किस प्रकार यौगिक चिकित्सा के द्वारा ठीक किया जा सकता है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) का विषय पाचन और उत्सर्जन तंत्र से सम्बन्धित रोगों की यौगिक चिकित्सा है। मानव शरीर के सभी तंत्रों में पाचन तंत्र का स्थान सबसे विशिष्ट होता है क्योंकि शरीर के सभी तंत्रों को क्रियाशील रहने के लिए ऊर्जा पाचन तंत्र से ही प्राप्त होती है इसीलिये 'सभी रोग पेट से जन्म लेते हैं' और 'पेट स्वस्थ, शरीर स्वस्थ' जैसी लोकोक्ति प्राचीन काल से ही प्रचलित हैं जो पाचन तंत्र के महत्त्व को स्पष्ट करती हैं।

परन्तु वर्तमान काल में आधुनिकता का बहुत अधिक प्रभाव मनुष्य के आहार पर पड़ा है। समय का अभाव कहें अथवा स्वाद के वशीभूत होना माने परन्तु यह तथ्य स्पष्ट है कि वर्तमान सभ्य समाज में शुद्ध-सात्विक आहार को छोड़कर फास्टफूड, जंकफूड, सीफूड, डिब्बाबंद आहार, कोल्डड्रिंक्स और अन्य रसायनों से युक्त आहार के सेवन का प्रचलन बहुत तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार के आहार से पाचन तंत्र और इसके साथ उत्सर्जन तंत्र अनेक रोगों से ग्रस्त हो जाता है। इन रोगों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए रासायनिक दवाइयों का सेवन कुछ समय के लिए राहत अवश्य प्रदान कर देता है किन्तु रोग स्थाई रूप से दूर नहीं होता है। इसके साथ रासायनिक दवाइयों के दुष्प्रभाव से यकृत और किडनी की कार्यक्षमता भी क्षीण हो

fVIi.kh

जाती है। अतः यहाँ पर यौगिक चिकित्सा एक श्रेष्ठ विकल्प है जिसे अपनाने से पाचन और उत्सर्जन तंत्र के रोगों से दूर होकर उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में पाचन और उत्सर्जन तंत्र के प्रमुख रोगों का परिचय और लक्षण समझाते हुए इनकी यौगिक चिकित्सा पर सविस्तार विचार किया गया है।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् बाद आप -

- पाचन सम्बन्धी प्रमुख रोगों का वर्णन कर सकेंगे;
- पाचन सम्बन्धी रोगों का यौगिक प्रबंधन करने में सक्षम हो सकेंगे;
- उत्सर्जन तंत्र सम्बन्धी प्रमुख रोगों पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- उत्सर्जन तंत्र सम्बन्धी रोगों के यौगिक प्रबंधन करने में सक्षम हो सकेंगे।

7-1 ikpu ra= ds izeq[k jksx

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य को विभिन्न कार्य करने के लिए प्रतिक्षण ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसे मुनष्य भोजन से प्राप्त करता है किन्तु, भोजन से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए उसे पहले सरल रूप में परिवर्तित करना होता है क्योंकि, भोजन के सरल अणुओं को ही रक्त के द्वारा शरीर में अवशोषित किया जाता है। भोजन की इस प्रक्रिया को पाचन कहा जाता है। जिसमें सभी पाचन अंग मिलकर भाग लेते हैं। परन्तु, वर्तमान समय में गलत दिनचर्या, विकृत आहार का सेवन, शारीरिक श्रम का अभाव और मानसिक तनाव आदि कारकों के परिणामस्वरूप पाचन अंगों की क्रियाशीलता कम हो रही है जिस कारण पाचन क्रिया में बाधा उत्पन्न होने के साथ पाचन रोग उत्पन्न हो रहे हैं। मानव शरीर में पाचन तंत्र से सम्बन्धित प्रमुख रोग निम्न होते हैं-

7-1-1 vip jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

अपच का अर्थ होता है पाचन नहीं होना। जैसा कि हमें ज्ञात है कि शरीर में पाचन तंत्र का मूल कार्य भोजन का पाचन करना अर्थात् उसे शरीरोपयोगी सरल रूप में परिवर्तित करना होता है किन्तु जब पाचन तंत्र में भोजन का पाचन नहीं हो पाता है और ग्रहण किया गया भोजन बिना पचा ही रहने लगता है, तब उस अवस्था को अपच रोग (Indigestion) कहा जाता है।

चूंकि इस अवस्था में भोजन का पाचन नहीं हो पाता है अतः शरीर और पेट भारी रहता है। इसके साथ मनुष्य को कभी-कभी दस्त और कभी-कभी कब्ज़ की शिकायत होती है और कभी बिना पचे भोजन के कारण दस्त भी होने लगते हैं। ऐसी अवस्था में भोजन करने के बाद जी मचलता है। खट्टी डकारें आने के साथ कभी-कभी उल्टियाँ भी होने लगती हैं। इस अवस्था में शरीर का बल और कार्यक्षमता बहुत क्षीण हो जाती है।

चित्र 7.1 अपचरोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) पेट में जलन होना और भारीपन के साथ खट्टी डकारें आना।
2) पेट में गैस बनते हुए पेट फूलना और दर्द होना।
3) भूख कम होने के साथ भोजन के प्रति अरुचि होना।
4) जी मिचलाना, मुँह में पानी आना और गले-छाती में जलन होना।
5) कभी कब्ज़ तो कभी दस्त होना।
6) शरीर में शक्तिहीनता और कार्यों में रुचि का अभाव होना।
7) शरीर में आलस्य, भारीपन और सुस्ती रहने के साथ नींद कम हो जाना।

'kjhj e mijkDr y{k.k ikpu r= d vip jkx dh vkj lidr djr gA

7-1-2 dCt jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

यह पाचन तंत्र का सबसे सामान्य किन्तु, गंभीर होने के साथ बहुत तेज़ी से बढ़ता रोग है। यद्यपि यह जीर्ण रोगों की श्रेणी में आता है जो एकदम उत्पन्न नहीं होता है अपितु, धीरे-धीरे शरीर में आता है। मनुष्य जो आहार ग्रहण करता है उसके शरीरोपयोगी अंश का आमाशय एवं आंतों द्वारा पाचन एवं अवशोषण होता है तथा शेष अनुपयोगी अंश मल के रूप में बड़ी आंत के द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। यह शरीर की एक सामान्य प्रक्रिया है जो प्रतिक्षण चलती रहती है। परन्तु जब यह भोजन से उत्पन्न मल सुचारू रूप से बाहर नहीं निकल पाता है और बड़ी आंत में ही एकत्र होने लगता है तब यह अवस्था कब्ज़ (Constipation) कहलाती है।

इस रोग के विषय में महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि कब्ज़ अनेक रोगों की जननी है। इससे ग्रस्त मनुष्य के शरीर में ऊर्जा का स्तर क्षीण हो जाता है और वह व्यक्ति बहुत जल्दी अनेक रोगों की चपेट में आ जाता है। इससे ग्रस्त व्यक्ति शारीरिक और मानसिक स्तर पर ऊर्जाहीन एवं क्रियाहीन होने लगता है।

चित्र 7.2 : कब्जरोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) पेट में भारीपन के साथ शौच में कठिनाई होना और भली प्रकार पेट साफ नहीं होना।

2) जीभ पर सफेद मैल की परत जमना और श्वासों में बदबू आना।

3) भूख कम होने के साथ अधिकतर समय पेट में हल्का दर्द रहना।

4) मुँह में छाले पड़ जाना और चेहरे पर फुन्सियां निकलना।

5) सिरदर्द के साथ चक्कर आना और स्वभाव चिड़चिड़ा होना।

6) चेहरे पर उदासीनता के भाव, शरीर में शक्तिहीनता और कार्यों में रुचि का अभाव होना।

7) पेट साफ नहीं होने के कारण दुर्गन्धयुक्त अपान वायु का निष्कासन होना।

8) शरीर में आलस्य, भारीपन और सुस्ती रहने के साथ नींद कम हो जाना।

'kjhj e mijkDr y{k.k ikpu r= d dCt jkx dh vkj ldr djr gA

7-1-3 ,flfMVh jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

वर्तमान समय में मनुष्य की जीवनशैली में बदलाव के साथ भोजन में अम्लीय मिर्च-मसालों के अधिक प्रयोग, फास्ट फूड और जंक फूड का सेवन और बिना भूख बार-बार खाने जैसी आदतों ने अम्लता रोग को जन्म दिया है। यद्यपि, यह रोग शरीर में धीरे-धीरे आता है किन्तु आने के उपरान्त शरीर में ही ठहर जाता है और यदि समय पर इस रोग पर ध्यान देते हुए इसका उपचार नहीं किया जाता है तो आगे चलकर यह अल्सर का गंभीर रूप धारण कर लेता है। इस रोग को भी आधुनिक सभ्यता का रोग कहा जाता है क्योंकि प्राचीन काल में यह रोग बहुत कम होता था किन्तु वर्तमान समय में इस रोग ने बहुत तेज़ी से फैलते हुए समाज में गहरी जड़ें जमा ली हैं।

ikpu ,o e=&iztuu lEcU/kh jkx ,o ;kfxd fpfdRlk

fVIi.kh

एसीडिटी रोग को आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की भाषा में गैस्ट्रोइसोफेजियल रिफलक्स डिज़िज (GERD) के नाम से जाना जाता है। इस रोग को आयुर्वेद शास्त्र में 'अम्लपित्त' कहा जाता है। वास्तव में भोजन के पाचन हेतु आमाशय में स्थित ग्रन्थियों से अम्ल का स्रावण किया जाता है किन्तु, जब आमाशय में यह अम्ल अधिक होकर जलन उत्पन्न करता है, यह अवस्था एसिडिटी रोग कहलाती है।

चित्र 7.3 : एसीडिटी रोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) गले से लेकर वक्ष तक के क्षेत्र में जलन एवं हृदय प्रदेश में दर्द महसूस होना ।

2) पेट में भारीपन के साथ बार-बार खट्टी डकारें आना।

3) भोजन के प्रति अरुचि होना और भूख नहीं लगना।

4) घबराहट होना, पसीना अधिक आना, जी घबराने के साथ हार्ट अटैक का सन्देह होना।

5) पेट में गैस बनना और जी मिचलाने के साथ उल्टियाँ होना।

6) शरीर में शक्तिहीनता की अनुभूति के साथ श्वास फूलना।

7) बिना परिश्रम किए हुए शारीरिक और मानसिक थकावट होना।

'kjhj e mijkDr y{k.k ikpu r= d ,flfMVh jkx dh vkj lidr djr gA

7-1-4 vkbZ-ch-,l- jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

यह शरीर की बड़ी आंत से सम्बन्धित पाचन तंत्र का रोग है, जिसका पूरा नाम Irritable Bowel Syndrome (IBS) है। इसे हिन्दी भाषा में 'क्षोभी आंत विकार' कहा जाता है। वर्तमान समय में अनियमित दिनचर्या,

fVli.kh

अंसयमित आहार, विलासितापूर्ण जीवनशैली और मानसिक तनाव आदि कारकों के परिणामस्वरूप जब बड़ी आंत की क्रियाशीलता प्रभावित होकर आंतों में ऐंठन, पेट दर्द, सूजन, गैस, दस्त और कब्ज़ आदि लक्षण उत्पनन होते हैं तब वह अवस्था इर्रिटेबल बाऊल सिण्ड्रोम कहलाती है।

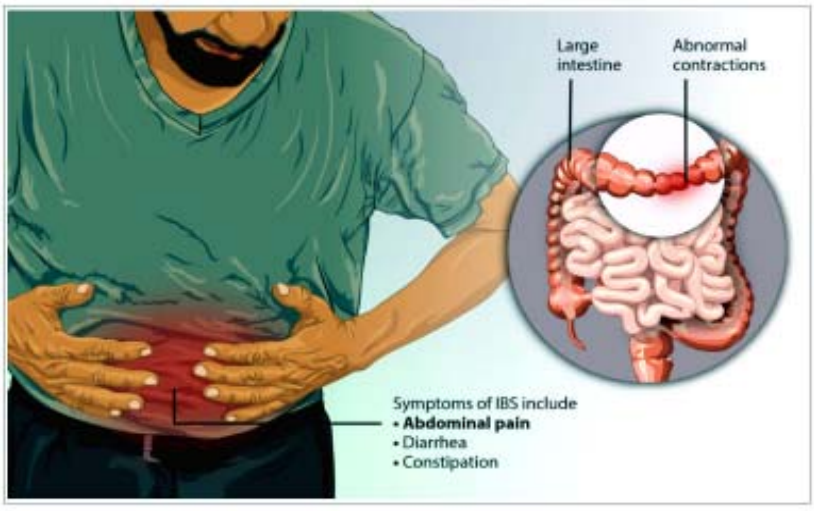

चित्र 7.4 : आई. बी. एस. रोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) पेट में भारीपन के साथ दर्द और ऐंठन होना।

2) पेट में गैस अधिक बनना, जिसके कारण पेट फूला हुआ महसूस होना।

3) कभी कब्ज़ तो कभी दस्त होना।

4) मल का अधिक श्लेष्मायुक्त होना।

5) रोग की गंभीर अवस्था में शरीर का वजन कम हो जाना।

6) शरीर में कमज़ोरी की अनुभूति होना।

'kjhj e mijkDr y{k.k ikpu r= d vkbZ0 ch0 ,l0 jkx dh vkj ldr djr gA

7-1-4 ifIVd vYlj jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

सामान्य रूप से समझें तो पाचन तंत्र में होने वाले घाव को अल्सर (Ulcer) कहा जाता है। पाचन तंत्र के विभिन्न अंगों जैसे आमाशय, छोटी आंत और बड़ी आंत के आन्तरिक भागों में होने वाले घावों को अल्सर के नाम से जाना जाता है। इसे ही गैस्ट्रिक अल्सर या पेप्टिक अल्सर या पेट के छाले भी कहा जाता है।

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि हमें ज्ञात है कि आमाशय में उपस्थित ऑक्जेन्टिक सैल्स हाईड्रोक्लोरिक अम्ल का स्रावण करती है जिसका कार्य भोजन के पाचन में मदद करना होता है किन्तु, जब अधिक अम्लीय आहार

का सेवन, अधिक समय तक एंटीबायोटिक दवाइयों का सेवन, दर्द निवारक पेन किलर का अधिक सेवन, धूम्रपान अथवा मद्यपान एवं मानसिक तनाव आदि कारकों के प्रभाव से आमाशय की दीवारों में अम्ल से छाले अथवा घाव उत्पन्न होने लगते हैं, वह अवस्था पेप्टिक अल्सर कहलाती है। वर्तमान समय में अल्सर रोगियों की संख्या तेज़ी से बढ़ती जा रही है।

चित्र 7.5 : पेप्टिक अल्सर

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) खाली पेट अथवा खाना खाने के कुछ समय बाद पेट में अचानक बहुत तेज़ दर्द होना।
2) पेट में बहुत गैस बनने के साथ खट्टी डकारें आना।
3) पेट के ऊपरी भाग में भारीपन के साथ दर्द और ऐंठन होना।
4) भूख में कमी आने के साथ भोजन के प्रति अरुचि उत्पन्न होना।
5) शरीर में कमज़ोरी के साथ शरीर का वजन कम होते जाना।
6) कुछ परिस्थितियों में सुबह-सुबह के समय उल्टियाँ होती हैं और रोग की गंभीर अवस्था में उल्टियों में रक्तस्राव भी होता है।
7) अल्सर रोग की गंभीर अवस्था में मल के साथ भी रक्तस्राव होने लगता है।

वास्तव में एसीडिटी रोग आगे चलकर अल्सर का रूप ग्रहण कर लेता है और अल्सर रोग ही अगले चरण में कैंसर के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

7-1-5 gfu;k jksx dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रकृति ने मानव शरीर में प्रत्येक अंगों को एक निश्चित स्थान प्रदान किया है किन्तु, जब

शरीर का कोई अंग अपने मूल स्थान से हटकर बाहर निकल जाता है तब उस शारीरिक अवस्था को 'हर्निया' कहा जाता है। यहाँ पर उदर भाग में स्थित बड़ी आंत के किसी भाग का अपने मूल स्थान से हटकर बाहर की ओर निकलने के अर्थ में हर्निया रोग को लिया जाता है।

वास्तव में विकृत आहार-विहार, अव्यवस्थित दिनचर्या और यौगिक क्रियाओं का अभ्यास नहीं करने के फलस्वरूप जब उदर की मांसपेशियाँ कमज़ोर और शिथिल हो जाती है और भारी वजन उठाने के अवस्था में बड़ी आंत का कोई भाग नाभि के पास से बाहर निकल जाता है, वह अवस्था हर्निया रोग कहलाता है।

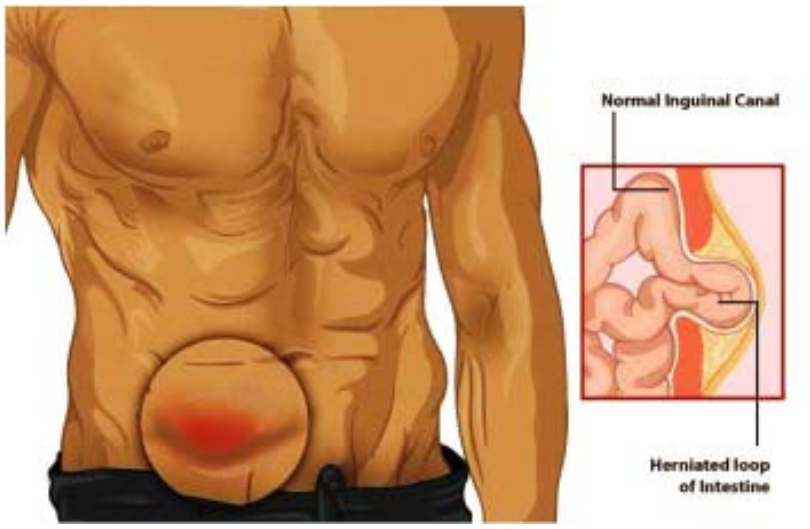

चित्र 7.6 : हर्निया रोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) नाभि के पास के क्षेत्र में आंत के किसी भाग का उभर बाहर की ओर निकल जाना, इस रोग का सबसे प्रमुख लक्षण होता है।

2) नाभि के पास उभरे स्थान पर सूजन के साथ दर्द होना, विशेष रूप से वजन उठाने पर पेट के इस भाग में बहुत तेज़ दर्द होना।

3) पेट के ऊपरी भाग में दर्द के साथ उल्टियाँ होना।

4) पेट में उभरे स्थान पर दर्द के साथ बुखार आ जाना।

5) रोग की गंभीर अवस्था में पेट के सूजन वाले भाग में गांठ बन जाना, जिसे छूने पर दर्द होना।

'kjhj e mijkDr y{k.k ikpu r= d gfu;k jkx dh vkj ldr djr gA

7-1-6 xnk jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य का पाचन तंत्र 28 से 32 फिट लम्बी एक जटिल रचना होती है। यह मुख से प्रारम्भ

होकर गुदा तक फैली होती है। इस रचना में विभिन्न पाचन अंगों का समावेश होता है और प्रत्येक अंग का अपना विशिष्ट कार्य होता है। इस प्रकार पाचन तंत्र का सबसे अन्तिम भाग गुदा होती है जिसके द्वारा भोजन का अनुपयोगी भाग शरीर से बाहर उत्सर्जित किया जाता है। यह शरीर का एक संवेदनशील अंग है जिसमें रक्तवाहिनियों द्वारा रक्त की तीव्र आपूर्ति की जाती है।

fVIi.kh

मनुष्य के खान-पान सम्बन्धी गलत आदतों, धूम्रपान-मद्यपान, अव्यवस्थित दिनचर्या, मानसिक तनाव और यौगिक क्रियाओं का अभ्यास नहीं करने के फलस्वरूप जब गुदा अपने मूल कार्य- (मल भाग का उत्सर्जन) भली-भांति नहीं कर पाता है तब उस अवस्था को गुदा रोग की संज्ञा दी जाती है। ऐसी अवस्था में इस भाग में पीड़ा, सूजन, संक्रमण, बवासीर और गुदा कैन्सर जैसे रोग उत्पन्न होने लगते हैं। इन रोगों का मूल लक्षण इस भाग में पीड़ा का होना होता है। मल त्याग की स्थिति में इस भाग में पीड़ा और अधिक बढ़ जाती है। इस अवस्था को गुदा रोगों की संज्ञा दी जाती है।

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार अपच, कब्ज़, एसीडिटी, आईबीएस, पप्टिक अल्सर, हर्निया और गुदा रोग पाचन तंत्र के प्रमुख विकार होते हैं जिनका प्रकोप दिन-प्रतिदिन समाज में बढ़ता जा रहा है। इन रोगों से मुक्ति प्राप्त करने में यौगिक चिकित्सा बहुत लाभकारी एवं प्रभावशाली भूमिका वहन करती है, अतः अब पाचन तंत्र के रोगों में यौगिक चिकित्सा का अध्ययन करते हैं।

7-2 ikpu ra= ds jksxksa dh ;kSfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, योग का प्रारम्भ शुद्ध सात्विक आहार से होता है। इस सन्दर्भ में गीता में योगीराज श्रीकृष्ण उपदेश करते हैं

;äkgkjfogkjL; ;äp"VL; delA
;äLoIukocks/kL; ;ksxks Hkofr nq%[kgkAA

(गीता 6/17)

अर्थात् जिस व्यक्ति के आहार-विहार ठीक हैं, जिसके कार्यों की निश्चित दिनचर्या है। जिसका सोना और जागना निश्चित है, ऐसे योगी व्यक्ति को किसी प्रकार का दुःख नहीं होता है। अर्थ यह है कि जो व्यक्ति अपने जीवन को योगमय शैली में व्यतीत करता है वह सभी प्रकार के दुःखो, कष्टों व बिमारियों से मुक्त जीवन व्यतीत करता है। यौगिक ग्रन्थों में विद्वानों ने अत्याहार (अधिक आहार का सेवन करना) को योग साधना का एक बाधक तत्व माना है तथा इसके स्थान पर मिताहार का उल्लेख किया गया है। मिताहार की व्याख्या करते हुए महर्षि घेरण्ड कहते हैं कि यदि आमाशय के चार भाग किये जाते तो दो भाग अन्न के लिए एक भाग जल के लिए तथा एक भाग वायु संचालन के लिए खाली रखना 'मिताहार' कहलाता है। अर्थात् योग के ग्रन्थों में भरपेट भोजन के स्थान पर केवल आधे पेट भोजन सेवन को निर्देशित किया गया है। यदि वर्तमान समय के अनुसार विचार करें तो इस विषय में आधुनिक चिकित्सक भी अपने चिकित्सकीय अनुभवों के आधार पर इस तथ्य को सहर्ष स्वीकार करते हैं कि अधिक मात्रा में और असन्तुलित आहार लेने से अपच, कब्ज़, गैस, एसिडिटी, अम्लपित्त तथा अल्सर जैसे रोग उत्पन्न होते हैं। वहीं कम में सन्तुलित आहार ग्रहण करने से पाचन तंत्र भली-भाँति सक्रिय, स्वस्थ और क्रियाशील बना रहता है।

fVIi.kh

पाचन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं का अभ्यास भी बहुत सकारात्मक प्रभाव डालते हैं। यौगिक क्रियाओं के प्रभाव को इस प्रकार समझ सकते हैं -

7-2-1 ikpu r= ij "kVdeks dk çHkko

षट्कर्म के अन्तर्गत धौति, बस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति, नामक छः शोधन क्रियाओं का वर्णन आता है। ये शोधन क्रियाएँ सम्पूर्ण शरीर के साथ-साथ पाचन तंत्र की भी सफाई करती है।

धौति क्रिया का सम्बन्ध आमाशय से है। यह क्रिया आमाशय अर्थात् पेट की सफाई करती है। इस क्रिया के अन्तर्गत वमन तथा वस्त्र के माध्यम से पाचन संस्थान की सफाई की जाती है। वमन करने से अम्लपित्त, एसीडिटी, पेट में गैस बनना, पेट में जलन, पेट में भारीपन आदि रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है। वस्त्र धौति के अभ्यास से पाचन नली की सफाई होती है तथा आमाशय में पाचक रसों के स्राव की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे भूख भली-भाँति लगती है तथा भोजन का पाचन भी अच्छी प्रकार होने लगता है। धौति क्रिया के अन्तर्गत ही शंखप्रक्षालन क्रिया का वर्णन भी यौगिक शास्त्रों में किया गया है। इस क्रिया के अन्तर्गत गर्म नमकीन पानी को पीने के उपरान्त कुछ निश्चित आसन किये जाते है, जिन्हें करने से यह पानी पूरे पाचन संस्थान की सफाई करता हुआ अधोमार्ग से बाहर निकल जाता है। इस क्रिया के अभ्यास से पूरे पाचन तंत्र की सफाई तथा कब्ज़ जैसा खतरनाक रोग दूर होता है।

षट्कर्म की दूसरी क्रिया बस्ति क्रिया है। इस क्रिया का पाचन संस्थान पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आयुर्वेद में वात का मुख्य स्थान बड़ी आंत माना गया है यहाँ पर स्थित वायु यदि कुपित हो जाती है तो भिन्न-भिन्न प्रकार के वात रोग पैदा होते हैं। इस वात को वस्ति कर्म के अभ्यास से बड़ी आसानी से शान्त किया जा सकता है। अतः पेट में गैस बनना, डकारें आना, पेट में दर्द, अफारा तथा कब्ज़ आदि रोग में भी बस्ति क्रिया लाभ पहुँचाती है। यह उदर की वायु मस्तिष्क में जाकर सिर दर्द का कारण बनती है। बस्ति क्रिया के अभ्यास से इस रोग में भी लाभ मिलता है, तथा अल्सर, बवासीर आदि रोग नहीं होते।

नेति क्रिया का पाचन तंत्र से सीधा-सीधा सम्बन्ध नहीं होता है। नौलि क्रिया का पाचन तंत्र पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। नौलि क्रिया से पेट के आन्तरिक अंग हृष्ट-पुष्ट तथा मजबूत होते है। नौलि क्रिया में जब पेट की मांसपेशियों का संचालन किया जाता है तब पेट की अच्छी तरह मालिश होती है तथा जठराग्नि, प्रदीप्त होती है। परिणामस्वरूप भोजन का पाचन अच्छी प्रकार होने लगता है तथा भूख भली-भाँति लगने लगती है।

त्राटक कर्म का सम्बन्ध मानसिक एकाग्रता से है, जिसका प्रभाव तंत्रिका तंत्र पर पड़ता है तथा इससे शरीर के सभी तंत्र सुव्यवस्थित होते है।

कपालभाति का अभ्यास प्रश्वास के साथ शरीर के हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालता है। कपालभाति के अभ्यास से सभी पाचन अंगों जैसे आमाशय, आँत, लीवर, पेन्क्रियाज आदि पर प्रभाव पड़ता है तथा ये अंग क्रियाशील बनते हैं।

7-2-2 ikpu r= ij vkluksa dk çHkko

प्रिय शिक्षार्थियों, आसनों का सीधा प्रभाव पाचन तंत्र पर पड़ता है। यद्यपि आसन में यह सावधानी विशेष रूप से रखी जाती है कि आसन सदैव खाली पेट ही किये जाने चाहिये, किन्तु वज्रासन का प्रभाव अभ्यास भोजन करने के तुरन्त बाद किये जाने से भोजन का पाचन अच्छी प्रकार होता है। आसन करते समय पाचन अंगों पर पोजेटिव और निगेटिव दबाव (दबाव और खिंचाव) उत्पन्न होता है। जिस समय इन अंगों पर दबाव पड़ता है उस समय इन अंगों की ओर रक्त संचार बन्द हो जाता है तथा जैसे ही यह दबाव हटता है उस समय बहुत तेज़ी के साथ रक्त उस अंग में भर जाता है, जिससे उस अंग की गन्दगियाँ हटती है तथा उसे ज्यादा मात्रा में शुद्ध ऑक्सीजन एवं पोषक पदार्थों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार ऐसे आसनों का अभ्यास करने से पाचन तंत्र स्वस्थ सक्रिय एवं मजबूत होता है।

सूक्ष्म अभ्यास से प्रारम्भ करते हुए स्थिर मनोभाव के साथ पवनमुक्तासन, उत्तानपादासन, सर्वांगासन, हलासन, मत्स्यासन, भुजंगासन, धुनरासन, योग मुद्रासन, मण्डूकासन, उष्ट्रासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, सुप्त वज्रासन, शशांकासन तथा मयूरासन आदि आसनों का विधिपूर्वक और नियमित रूप से अभ्यास करने पर सम्पूर्ण पाचन तंत्र स्वस्थ एवं सक्रिय बनता है। इन आसनों का नियमित अभ्यास करने से अपच, कब्ज़, गैस, भूख ना लगना, एसिडिटी, अल्सर, आईबीएस, हर्निया और गुदा सम्बन्धी रोग नहीं होते हैं। इसके साथ-साथ इन आसनों का अभ्यास पाचन तंत्र को वज्र के समान मजबूत बना देता है। योग शास्त्रों में स्पष्ट किया गया है कि मयूरासन का अभ्यास विष को पचाने की क्षमता प्रदान करने वाला होता है। इस प्रकार आसनों का अभ्यास पेट की मांसपेशियों को मजबूती प्रदान करते हुए पाचन तंत्र को स्वस्थ, सक्रिय एवं मजबूत बनाता है। आसनों के क्रम में बारह (12) आसनों का सम्मिलित अभ्यास 'सूर्यनमस्कार' कहलाता है। सूर्यनमस्कार का अपने शरीर की क्षमतानुसार अभ्यास करने से पाचन तंत्र स्वस्थ एवं सक्रिय बनाता है और पाचन रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है।

7-2-3 ikpu r= ij eqækvksa o cU/kksa dk çHkko

पाचन तंत्र पर विभिन्न मुद्राओं एवं बन्धों का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यद्यपि मुद्राओं का मूल प्रभाव शरीर को स्थिरता प्रदान करता है। किन्तु, तड़ागी मुद्रा, माण्डुकी मुद्रा, अश्विनी मुद्रा, पाषिनि मुद्रा, भुजण्गिनी मुद्रा पाचन तंत्र को विशेष रूप से प्रभावित करती है। बन्धों का भी पाचन तंत्र पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। मूल बन्ध का अभ्यास बड़ी आंत को विशेष रूप से सक्रिय एवं क्रियाशील बनाता है तथा पाचन तंत्र के रोगों को भी दूर करता है। उड्डियानबंध उदर प्रदेश में विपरीत दबाव पैदा करता है। उड्डियानबंध का अभ्यास पेट की मांसपेशियों को लचीली तथा क्रियाशील बनाता है। यह लीवर, आमाशय तथा आंतों को क्रियाशील बनाता है। उड्डियान बंध के अभ्यास से विभिन्न पाचक रस अधिक मात्रा में स्रावित होते हैं, जिससे भोजन का पाचन भली-भाँति होता है। तीनों बन्धों का एक साथ अभ्यास अर्थात् महाबंध का अभ्यास करने से पेट के आन्तरिक अंगों की मालिश होती है। इसका अभ्यास करने से सम्पूर्ण पाचन तंत्र उत्तेजित क्रियाशील एवं विकार रहित होता है।

fVIi.kh

7-2-4 ikpu r= ij çk.kk;ke dk çHkko

प्राणायाम से तात्पर्य प्राण तत्व का विस्तार करने से है। प्राणायाम का अभ्यास करने से शुद्ध प्राण वायु (ऑक्सीजन) अधिक मात्रा में शरीर को प्राप्त होती है, जिससे शरीर की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है। इसी कारण प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर की चयापचय दर (मैटाबोलिक रेट) संतुलित होती है तथा शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। शरीर का शोधन करने वाले एवं शरीर में उष्मा उत्पन्न करने वाले प्राणायाम का पाचन तंत्र पर विशेष प्रभाव पड़ता है। नाड़ी शोधन प्राणायाम का अभ्यास करने से नाड़ियों की शुद्धि होती है। भूख अच्छी लगती है, कब्ज़ आदि रोग नहीं होते एवं पाचन तंत्र भली-भाँति क्रियाशील रहता है।

सूर्यभेदी, उज्जायी तथा भस्त्रिका प्राणायाम का अभ्यास पाचन तंत्र को सक्रिय एवं ऊर्जावान बनाता है। इन प्राणायामों के अभ्यास से पाचन तंत्र सक्रिय एवं ऊर्जावान होता है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है एवं पाचन तंत्र सम्बन्धित रोग नहीं होत हैं। भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करता है। जिसका सकारात्मक प्रभाव पाचन तंत्र पर भी पड़ता है।

7-2-5 ikpu r= ij çR;kgkj dk çHkko

प्रत्याहार से तात्पर्य इंद्रियों पर संयम करने से है। प्रत्याहार का पालन करने से पाचन तंत्र सुव्यवस्थित रूप में कार्य करता है। जबकि इंद्रियों पर असंयम भिन्न-2 प्रकार के रोगों एवं व्याधियों को पैदा करता हैं। प्रत्याहार के अन्तर्गत व्यक्ति राजसिक एवं तामसिक आहार के स्थान पर केवल सात्विक आहार ही ग्रहण करता है। साथ ही साथ अत्यधिक मिर्च मसाले एवं नमक का त्याग करता हुआ प्राकृतिक आहार का सेवन करता है। जिसका सकारात्मक प्रभाव पाचन तंत्र पर पड़ता है। प्रत्याहार का अभ्यासी साधक मिताहार का भी पालन करता है अर्थात् वह निश्चित समय पर अल्प मात्रा में आहार ग्रहण करता है, ऐसा करने से कब्ज़, एसीडिटी, अल्सर तथा गैस आदि रोग नहीं होते एवं पाचन तंत्र सुव्यवस्थित रूप में अपना कार्य करता है।

7-2-6 ikpu r= ij /;ku dk çHkko

ध्यान से तात्पर्य शरीर एवं मन की एक रूपता से होता है। ध्यान का अभ्यास मानसिक एकाग्रता को उत्पन्न करता है, यह एकाग्रता अन्तःस्रावी तंत्र को प्रभावित करती है। ध्यान के अभ्यास से पिट्यूटरी ग्रन्थि प्रमुख रूप से प्रभावित होती है। जिसका प्रभाव पाचन तंत्र पर भी पड़ता है। ध्यान के अभ्यास से वे पाचक रस एवं अन्तःस्रावी हार्मोन्स प्रभावित होते हैं जो भोजन के अच्छी प्रकार पाचन के लिए आवश्यक होते है। ध्यान की प्रक्रिया के फलस्वरूप आमाशय का आकार, आंतों का आकार, लीवर तथा पैन्क्रियाज़ पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत क्रोध, आवेश, भय तथा चिन्ता आदि का पाचन तंत्र पर दुष्प्रभाव पड़ता है। भोजन के पाचन में बाधा उत्पन्न होती है तथा कब्ज, एसीडिटी, अपच, अल्सर आदि रोगों की उत्पत्ति होती है अतः इन सभी रोगों में ध्यान करने से बहुत अच्छे परिणामों की प्राप्ति होती है और इन रोगों में लाभ मिलता है।

इसके साथ-साथ पाचन तंत्र की रोगावस्था में निम्न अपथ्य आहार का त्याग और पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए-

(A) **viF; vkgkj%** नमक, मिर्च, मसाले, वसा, डालडा घी-तेल, चिकनाई युक्त खाद्य पदार्थ, मैदा और मैदे से बनी वस्तुएँ, बासी एवं प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्य पदार्थ, मलाई, मिठाइयां, बर्फ-आईसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक्स आदि का त्याग कर देना चाहिए।

(B) **iF; vkgkj%** हल्का सुपाच्य आहार, गेंहू-जौ और चना मिलाकर चौकर युक्त आटे की रोटियां, दलिया, लौकी, तुरई, टमाटर, नींबू, विटामिन्स और खनिज लवणों युक्त ताजे फल-सब्जियां जैसे सन्तरा] मौसमी, अनार, पपीता, अंगूर, अनानास, नारियल पानी आदि सुपाच्य खाद्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

bdkbZ iz'u&7-1

रिक्त स्थान भरिए–

क) जीभ पर सफेद मैल की परत जमना और श्वासों में बदबू आना .... रोग का लक्षण है।

ख) एसीडिटी रोग को आयुर्वेद शास्त्र में .... कहा जाता है।

ग) मनुष्य का पाचन तंत्र .... लम्बी एक जटिल रचना होती है।

7-3 e=og ra= ls lEcfU/kr iz[kq jksx

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर की सात धातुओं में रक्त अत्यन्त महत्त्वपूर्ण धातु है जिसे जीवन रस कहा जाता है। यह रस रूपी धातु सम्पूर्ण शरीर में प्रतिक्षण परिभ्रमण करती हुई, सभी अंगों को पोषक तत्व प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण कार्य करती रहती है। शरीर की इस महत्त्वपूर्ण धातु का स्वच्छ और निर्मल होना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसे साफ-स्वच्छ बनाने के लिए शरीर की उदरीय पार्श्व गुहा में दो वृक्क प्रतिक्षण क्रियाशील रहते हुए इसे छानकर स्वच्छ बनाने का कार्य करते रहते हैं। इन वृक्कों का कार्य रक्त को छानकर अशुद्धियों को अलग करना होता है। इन रक्त से प्राप्त अशुद्धियों को जल के साथ मिलाकर मूत्र का निर्माण किया जाता है और मूत्र को समय-समय पर शरीर से बाहर उत्सर्जित किया जाता है। शरीर के इस तंत्र को मूत्रवह संस्थान की संज्ञा दी जाती है जिसका महत्त्वपूर्ण कार्य रक्त को स्वच्छ बनाना होता है। इस तंत्र के स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त रहने पर रक्त स्वच्छ और निर्मल बना रहता है, जिससे शरीर की सभी क्रियाएँ सुचारु रूप से चलती रहती हैं। परन्तु, वर्तमान समय में मनुष्य की खान-पान सम्बन्धी गलत आदतों, अव्यवस्थित दिनचर्या, शारीरिक श्रम का अभाव, मानसिक तनाव और यौगिक क्रियाओं का अभ्यास

fVIi.kh

नहीं करने के कारण मानव शरीर का यह महत्त्वपूर्ण तंत्र विभिन्न रोगों से ग्रेस्त हो रहा है। इस तंत्र के प्रमुख रोग इस प्रकार हैं-

7-3-1 uÝkbfVl dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

वृक्क का निर्माण लाखों सूक्ष्म कोशिकाओं के मिलने से होता है। इन वृक्क का निर्माण करने वाली कोशिकाओं को नेफ्रान कहा जाता है। इन नेफ्रान को वृक्क की रचनात्मक और क्रियात्मक इकाई (यूनिट) कहा जाता है क्योंकि, इनके मिलने से ही वृक्क का निर्माण होता है और यही वृक्क में रक्त छानने की प्रक्रिया में लगी रहती हैं। किन्तु, विकृत आहार-विहार और रासायनिक एंटी बायोटिक या पेनकिलर दवाईयों के सेवन से जब इन कोशिकाओं को क्षमता से अधिक कार्य करना पड़ता है तब इनमें दर्द और सूजन उत्पन्न हो जाती है जिसे नेफ्राइटिस रोग कहा जाता है।

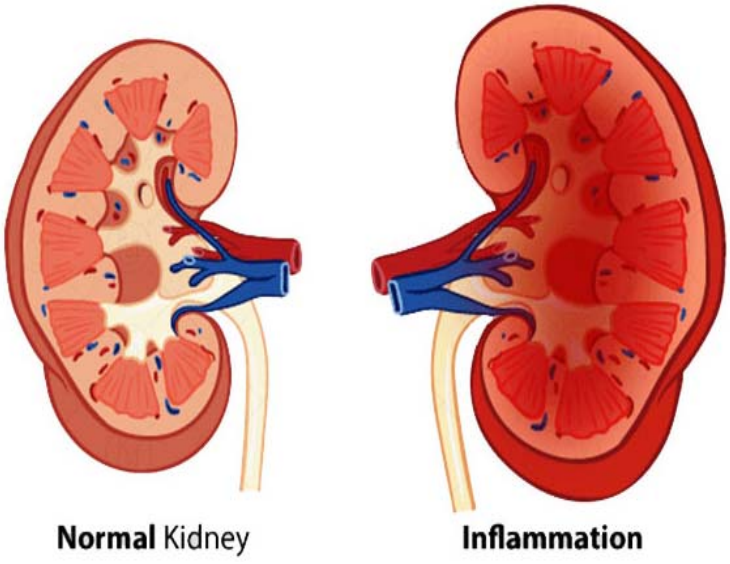

चित्र 7.7 : सामान्य वृक्क व नेफ्राइटिस युक्त वृक्क

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) वृक्कों के आस-पास दर्द होना एवं इस भाग में सूजन होना।

2) बार-बार और अधिक मात्रा में मूत्र आना।

3) मूत्र के रंग में परिवर्तन होना और पस आना।

4) ठंड लगना एवं बुखार आना।

5) असामान्य थकान के साथ मितली होना।

6) मूत्र में जलन होना एवं रक्तचाप बढ़ जाना।

7) शरीर के किसी हिस्से जैसे हाथ, पैर अथवा चेहरे पर सूजन आ जाना।

8) मानसिक स्थिति में बदलाव जैसे बेचैनी अथवा उलझन में रहना।

'kjhj e mijkDr y{k.k e=og lLFkku d uÝkbfVl jkx dh vkj ldr djr gA

7-3-2 e=nkg jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

मूत्रवह संस्थान के किसी भाग में संक्रमण के परिणामस्वरूप मूत्र त्याग में जलन होने लगती है और बार-बार मूत्र त्याग होने लगता है। इस अवस्था को मूत्रदाह रोग कहा जाता है। इसे चिकित्सकीय भाषा में यू0टी0आई0 अर्थात् Urinary Track Infection कहा जाता है। इस रोग से ग्रसित होने पर मूत्र का रंग गहरा पीला हो जाता है और मूत्र त्याग में पीड़ा होने के साथ-साथ जलन होती है। इस अवस्था में रोगी व्यक्ति को रात के समय बार-बार मूत्र त्याग के लिए उठना पड़ता है और मूत्र त्याग में जलन होती है। शरीर के उदरीय पार्श्व भागों में दर्द और जलन होना, मूत्र की मात्रा बढ़ जाना, मूत्र त्याग में दर्द-जलन के साथ रक्त का आना इस रोग के प्रमुख लक्षण होते हैं।

7-3-3 fdMuh LVku dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

मानव शरीर में वृक्क का सबसे मुख्य कार्य रक्त को छानकर रक्त में उपस्थित उत्सर्जित पदार्थों को अलग करना होता है। मनुष्य के दोनों वृक्क प्रतिदिन (24 घन्टों में) 150 से 180 लीटर रक्त को छानकर रक्त में उपस्थित शरीर के लिये अनुपयोगी पदार्थो को मूत्र के रूप में अलग करने का कार्य करते हैं। परन्तु, जब वृक्क कैल्शियम के सल्फेट, क्लोराइड एवं फास्फेटों को रक्त से छानकर अलग तो कर देते हैं किन्तु, उन्हें मूत्र के साथ उत्सर्जित नहीं कर पाते तब ये अकार्बनिक पदार्थ वृक्क में ही इकठ्ठा होकर एक पथरी के समान रचना बना लेते हैं, इसे वृक्क की पथरी (किडनी स्टोन) कहा जाता है। इस अवस्था में वृक्क में बहुत तीव्र सुई की चुभन के समान दर्द की अनुभूति होती है। प्रारम्भिक अवस्था में दर्द हल्का होता है किन्तु आगे चलकर यह दर्द असहनीय हो जाता है जिसमें दर्दनिवारक दवाइयों के सेवन से भी कोई आराम नहीं मिलता है। व्यक्ति को बार-बार मूत्र त्याग की इच्छा होती है और मूत्र का रंग भी गहरा पीला होने लगता है।

7-3-4 e= jkxk dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, सामान्य और स्वस्थ अवस्था में एक मनुष्य प्रतिदिन 1 से 1.8 लीटर स्वच्छ, पारदर्शी, हल्के पीले रंग के द्रव मूत्र का उत्सर्जन करता है। इस मूत्र का हल्का पीला रंग यूरेबिलिन नामक रंजक पदार्थ

के कारण होता है। मूत्र में अपनी एक विशेष एरोमेटिक गन्ध होती है। मूत्र की पी0 एच0 5.0 से 8.0 के बीच होती है, यह पी. एच. ग्रहण किये आहार के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। शाकाहारी एवं सात्विक आहार लेने वाले मनुष्यों का मूत्र उदासीन अथवा हल्का क्षारीय प्रकृति का जबकि, मांसाहारी एवं मिर्च मसाले युक्त अम्लीय प्रकृति का आहार लेने वाले व्यक्तियों में मूत्र अम्लीय प्रकृति का होता है। मूत्र में सबसे अधिक मात्रा में जल होता है जबकि, शेष पदार्थों में कार्बनिक एवं अकार्बनिक पदार्थ होते हैं।

परन्तु, विकृत आहार-विहार, अव्यवस्थित दिनचर्या और अन्य कारकों के परिणामस्वरूप उपरोक्त रोगों की उत्पत्ति होती है। इनके अतिरिक्त कम मात्रा में मूत्र निर्माण होना, अधिक मूत्र उत्सर्जन होना, मूत्र में शरीरोपयोगी तत्वों का आना भी ऐसे लक्षण हैं जिनका सम्बन्ध मूत्रवह संस्थान के रोगों से होता है।

7-4 e=jksxksa dh ;kSfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, यौगिक क्रियाओं का अभ्यास मुख्य रूप से शरीर शोधन और मन को स्वच्छ-निर्मल बनाने का कार्य करता है। अर्थात् ये क्रियाएँ शरीर और मन में स्थित गन्दगियों, विषाक्त पदार्थों एवं अविशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालने का कार्य करती हैं, जबकि, उत्सर्जन तंत्र का भी मूल कार्य शरीर में स्थित इन उत्सर्जित पदार्थों को बाहर निकालने का होता है अर्थात् इन क्रियाओं का उत्सर्जन तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन क्रियाओं के अभ्यास से उत्सर्जन तंत्र पर वर्ज्य पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने का भार कम होता है। जिससे इस तंत्र की क्रियाशीलता और कार्यकुशलता में वृद्धि होती है। इन क्रियाओं के अभ्यास से इकाई (यूनिट) में वर्णित मूत्र रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। मूत्रवह संस्थान पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव को इस प्रकार समझा जा सकता है -

7-4-1 "kV~deksZa dk vH;kl

धौति, बस्ति, नेति, नौली एवं त्राटक नामक षट्कर्म मूत्रवह तंत्र को भली-भाँति प्रभावित करते हैं। इन षट्कर्मों की दूसरी संज्ञा शोधन कर्म ही है। अर्थात् ये क्रियाऐं शरीर की शुद्धि करती है, जिनका सकारात्मक प्रभाव मूत्रवह तंत्र पर पड़ता है। धौति क्रिया में अधिक जल का सेवन किया जाता है। अधिक जल पीने से वृक्कों की क्रियाशीलता बढ़ती है एवं मूत्र निर्माण की क्रिया भी तीव्र होती है। इस क्रिया के तीव्र होने से मूत्र रोग भी दूर होते है। बस्ति क्रिया बड़ी आंत से सम्बन्धित है चूँकि बड़ी आंत शरीर के ठोस मल पदार्थों को उत्सर्जित करती है। अतः यह क्रिया इसकी क्रियाशीलता बढ़ाती हुई उत्सर्जन तंत्र को स्वस्थ एवं मजबूत बनाती है। नेति कर्म का अच्छा प्रभाव उत्सर्जन तंत्र पर पड़ता है। नौली कर्म से वृक्कों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है। नौली क्रिया के अन्तर्गत उदर में स्थित आन्तरिक अंगों की मालिश होती है। अतः इससे वृक्क की कोशिकाएं (वृक्काणु) भी प्रभावित होती है एवं अधिक क्रियाशील होकर अपना कार्य करती हैं। त्राटक कर्म का प्रत्यक्ष प्रभाव उत्सर्जन पर नहीं पड़ता। कपालभाति क्रिया वायु एवं जल के द्वारा शरीर का शुद्धिकरण करती है, जिससे शरीर में स्थित विषाक्त उत्सर्जित पदार्थ बाहर निकालते है। इससे मूत्र रोग दूर होकर शरीर स्वस्थ बनता है।

7-4-2 vkluk dk çHkko

यद्यपि मूत्र रोगों की तीव्र अवस्था में कठिन आसनों का अभ्यास निषेध होता है किन्तु, रोगावस्था सामान्य होने पर आसन उत्सर्जन तंत्र पर बहुत अच्छा प्रभाव रखते हैं। सामान्य अवस्था में उष्ट्रासन, शलभासन, मत्स्य आसन, धुनरासन, भुजंग आसन, उत्तानमण्डुक आसन (सुप्त वज्रासन), सिद्धासन, स्वस्तिकासन और पद्मासन लाभकारी आसन हैं। अर्थात् ये आसन वृक्कों को स्वस्थ, मजबूत, क्रियाशील एवं विकार मुक्त बनाते हैं।

सूर्यनमस्कार के अभ्यास का भी उत्सर्जन तंत्र पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि सूर्यनमस्कार का अभ्यास करने से पहले एक गिलास गुनगुना अथवा गर्म पानी पीने से वृक्कों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है एवं कम मूत्र की उत्पत्ति, वृक्क शोथ (किडनी में सूजन), वृक्क प्रदाह (किडनी में जलन), किडनी स्टोन (पथरी) आदि रोगों पर नियन्त्रण प्राप्त होता है।

7-4-3 eqæk ,o cU/kk dk çHkko

वृक्कों पर मुद्रा एवं बंध का अभ्यास सकारात्मक प्रभाव रखते हैं। मुद्राओं में महामुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, माण्डूकी मुद्रा, पाषिनी मुद्रा एवं अश्विनी मुद्रा मुख्य रूप से उत्सर्जन तंत्र को प्रभावित करती है। इन मुद्राओं के नियमित अभ्यास से वृक्कों की क्रियाशीलता बनी रहती है तथा उत्सर्जन तंत्र स्वस्थ रहता है। इसी प्रकार बन्धों के अभ्यास से वृक्कों की आन्तिरिक क्रियाशीलता में वृद्धि होती है।

7-4-4 çk.kk;ke dk çHkko

प्राणायाम के संदर्भ में महर्षि मनु, मनुस्मृति में लिखते हैं -

ng;Ur /ek;ekukuk /kkrwuk fg ;Fkk eykA
rFksfUæ;k.kk nákUr nk"kk% çk.kL; fuxgkrAA

अर्थात् जैसे अग्नि आदि में तपाने से स्वर्ण आदि धातुओं के मल, विकार नष्ट हो जाते हैं। वैसे ही प्राणायाम से इन्द्रियों एवं मन के दोष दूर होते हैं। प्राणायाम का अभ्यास शरीर एवं मन को स्थिर करता है। प्राणायाम के अभ्यास से प्रॉस्ट्रेट ग्लैण्ड एवं किडनी आरोग्यता को प्राप्त होती है नियमित प्राणायाम का अभ्यास वृक्कों को ऊर्जावान बनाए रखता है एवं बहुमूत्र, अल्पमूत्र, किडनी फेल, किडनी में सूजन एवं किडनी में जलन आदि रोग दूर होते हैं।

प्राणायाम के अभ्यास क्रम में अनुलोम-विलोम, नाड़ी शोधन, भस्त्रिका, भ्रामरी एवं शीतली आदि प्राणायामों का विधिपूर्वक और नियमित रूप से अभ्यास करने का अच्छा प्रभाव वृक्कों की क्रियाशीलता पर पड़ता है।

7-4-5 çR;kgkj dk çHkko

प्रत्याहार से अर्थ इन्द्रियों एवं मन पर संयम से है। इन्द्रियों एवं मन पर संयम से आहार-विहार में अनुशासन

शीलता एवं सात्विकता बढ़ती है जिसके प्रभाव से शरीर में कम उत्सर्जी पदार्थों की उत्पत्ति होती है। रक्त के स्वच्छ होने का सकारात्मक प्रभाव वृक्कों पर पड़ता है।

7-4-6 /;ku dk çHkko

ध्यान का सीधा सम्बन्ध अतः स्राव से है, ध्यान के अभ्यास से वृक्कों के ऊपर स्थित एड्रिनल ग्रथियों के स्राव (हारमोन्स) व्यवस्थित एवं सन्तुलित होते हैं, जिससे वृक्कों की क्रियाशीलता भी सुव्यवस्थित होती है और सम्बन्धित रोग दूर होते हैं।

उपरोक्त योगाभ्यास के साथ रोगी व्यक्ति को निम्न अपथ्य आहार का त्याग और पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए-

viF; vkgkj% नमक, मिर्च, मसाले, वसा, डालडा घी-तेल चिकनाई युक्त खाद्य पदार्थ, मैदा और मैदे से बनी वस्तुएं, बासी एवं प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्य पदार्थ, मलाई, मिठाइयां, बर्फ-आईसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक्स, सोडा वाटर आदि कृत्रिम खाद्य पदार्थों का त्याग कर देना चाहिए।

iF; vkgkj% हल्का सुपाच्य आहार, गेंहू-जौ और चना मिलाकर चौकर युक्त आटे की रोटियां, लौकी, तुरई, टमाटर, नींबू, विटामिन्स और खनिज लवणों युक्त ताजे फल-सब्जियां जैसे सन्तरा] मौसमी, अनार, पपीता, अंगूर, अनानास, नारियल पानी, रसदार फल जैसे तरबूज, खरबूजा आदि सुपाच्य खाद्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

7-5 iztuu jksxksa dh ;kSfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रजनन तंत्र के रोगों में शरीर की क्षमतानुसार षट्कर्म की शुद्धिक्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए। प्रातःकाल सूर्योदयपूर्व उठकर नियमित रूप से योगासनों का अभ्यास करते हुए सूर्यनमस्कार का अभ्यास करना चाहिए। यौगिक मुद्राओं और बन्धों के अभ्यास से आन्तरिक ऊर्जा को जाग्रत करना चाहिए। इसके साथ-साथ इन्द्रियों पर संयम करते हुए राजसिक और तामसिक आहार का त्याग करते हुए शुद्ध-सात्विक और पौष्टिक आहार का सेवन करना चाहिए। भोजन में मिर्च-मसालों का त्याग करते हुए जीवन शक्ति युक्त अंकुरित अन्न और फल-सब्जियों का सेवन करना चाहिए। नियमित रूप से पर्याप्त समय तक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। नाड़ीशोधन और अनुलोम-विलोम प्राणायाम से प्रारम्भ करते हुए उज्जायी, भस्त्रिका और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास पूर्ण सामर्थ्य के साथ करना चाहिए। नियमित रूप से पूर्ण श्रद्धा और निष्ठा के साथ ईश्वर का ध्यान करते हुए सकारात्मक ऊर्जा की प्रार्थना करनी चाहिए। इनके साथ-साथ सभी प्रकार के नकारात्मक विचारों का त्याग करते हुए सकारात्मकता के साथ पूर्ण प्रसन्नता और आनन्द की अनुभूति करने से प्रजनन तंत्र के सभी रोगों से मुक्ति प्राप्त होने के साथ उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

bdkbZxr iz'u&7-2

सही ग़लत बताइए–

क) रक्त को जीवन रस कहा जाता है। ( )

ख) नेफ्रॉन को वृक्क की रचनात्मक और क्रियात्मक इकाई (यूनिट) कहा जाता है। ( )

ग) यू.टी.आई. रोग से ग्रसित रोगी के मूत्र का रंग गहरा पीला हो जाता है। ( )

vkius D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में पाचन तंत्र एवं मूत्र सम्बन्धी रोगों की यौगिक चिकित्सा को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) के प्रारम्भ में पाचन तंत्र के प्रमुख रोगों का सामान्य परिचय देते हुए उनकी यौगिक चिकित्सा का उल्लेख किया गया है और इसके उपरान्त मूत्र सम्बन्धी रोगों का सामान्य परिचय देते हुए उनकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन किया गया है।

इकाई (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि, यौगिक अभ्यासों का पाचन तंत्र एवं वृक्कों की क्रियाशीलता पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियमित रूप से इन क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य का पाचन तंत्र एवं वृक्क सदैव स्वस्थ बने रहते हैं। जबकि, रोगावस्था में भी यौगिक अभ्यास पाचन एवं वृक्क से सम्बन्धित रोगों को दूर करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यौगिक क्रियाओं में यौगिक षट्कर्म के साथ विभिन्न आसनों के साथ-साथ प्राणायामों का अभ्यास पाचन तंत्र एवं वृक्कों को स्वस्थ एवं क्रियाशील बनाते हैं। इन क्रियाओं का अभ्यास पाचन तंत्र से सम्बन्धित अंगों एवं वृक्कों की क्रियाशीलता को बढ़ाता है। इससे भोजन का पाचन, अवशोषण एवं मलों का निष्कासन सुव्यवस्थित होता है। यौगिक क्रियाओं का नियमित अभ्यास करने से भूख अच्छी लगती है तथा ग्रहण किया गया आहार अच्छी प्रकार पचता है। पचे हुए भोजन का अवशोषण भली प्रकार होता है तथा शेष मल पदार्थों का शरीर से अवशोषण भी अच्छी प्रकार होता है। पाचन तंत्र के अनुरूप इन यौगिक अभ्यासों का प्रभाव वृक्कों पर भी पड़ता है। इन क्रियाओं के अभ्यास से वृक्कों की क्रियाशीलता बढ़ती है, जिससे उत्सर्जित पदार्थों का निष्कासन अच्छी प्रकार होता है तथा सम्पूर्ण शरीर स्वस्थ रहता हुआ अपने कार्यों को भली प्रकार करता है। अतः हमें चाहिए कि हम चित्त को काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं ईर्ष्या, द्वेष आदि विकारों से मुक्त रखते हुए सात्विक आहार-विहार के साथ अनुशासित जीवनचर्या को अपनाते हुए रोगमुक्त रहकर सुख-शान्ति और आनन्द की अनुभूति करें।

fVIi.kh

bdkbZ ds vUr esa iz'u

1) पाचन तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार वर्णन कीजिए।

2) मूत्र रोगों की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार व्याख्या कीजिए।

3) कब्ज़ रोग के प्रमुख लक्षण लिखते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन कीजिए।

4) मूत्र प्रदाह रोग के प्रमुख लक्षण समझाते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा लिखिए।

5) टिप्पणियां लिखिए-

   क) अपच रोग के लक्षण

   ख) पाचन तंत्र रोगी का पथ्य आहार

bdkbZxr iz'uksa ds mÙkj

7-1

क) कब्ज

ख) अम्लीय

ग) 28–32 फीट

7-2

क) सही

ख) सही

ग) सही

8

मस्कुलो-स्केलेट्ल संबंधी रोग एवं यौगिक चिकित्सा

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व इकाई (यूनिट) में आपने पाचन तंत्र एवं उत्सर्जन तंत्र से सम्बन्धित रोगों की यौगिक चिकित्सा के विषय में जाना और ज्ञान प्राप्त किया कि यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या के साथ पथ्य आहार का सेवन और अपथ्य आहार का त्याग करने से मानव शरीर के पाचन और उत्सर्जन संस्थानों को स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनाया जा सकता है। अब यहाँ पर महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि जिस प्रकार पाचन तंत्र एवं उत्सर्जन तंत्र को योगाभ्यास के द्वारा रोगमुक्त और सक्रिय बनाया जा सकता है क्या उसी प्रकार अस्थि और मासंपेशीय तंत्र को भी यौगिक चिकित्सा के प्रभाव से स्वस्थ बनाया जा सकता है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) का विषय शरीर के अस्थि और पेशीय तंत्र से सम्बन्धित रोगों की यौगिक चिकित्सा है। मानव शरीर की मूलभूत संरचना का निर्माण विभिन्न आकार की 206 अस्थियों के मिलने से होता है। इसी प्रकार अस्थियां आपस में मिलकर मानव शरीर का आधारभूत ढाँचा तो बना देती है परन्तु, वह यह ढाँचा तब तक गतिहीन रहता है जब तक इसके साथ मांसपेशियाँ नहीं जुड़ती हैं। अर्थात् मांसपेशियाँ शरीर को गतिशील बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य करती हैं।

इस प्रकार अस्थियां और मासंपेशियाँ आपस में मिलकर मानव शरीर की मूल संरचना का निर्माण करती हैं और शरीर को गति प्रदान करने में सहायता करती हैं। इन दोनों तंत्रों के सहयोग से मानव शरीर गतिशील बनकर सभी सरल से लेकर जटिल कार्य करने में सक्षम बनता है। परन्तु, इन तंत्रों में विकार उत्पन्न होने पर शरीर की गतिशीलता प्रभावित होती है और इसी से ही आगे चलकर मांसपेशियों में दर्द, जकड़न, आर्थराइटिस, सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस, कमर दर्द और स्लिप डिस्क आदि रोग उत्पन्न होते है। वर्तमान समय में विकृत आहर-विहार, असंयमित जीवनचर्या, शारीरिक श्रम में कमी, योगाभ्यास की कमी, कम्प्यूटर-टी0वी0 पर अधिक समय बैठना, गलत मुद्राओं में कार्य करने और मानसिक तनाव जैसे कारकों के परिणाम

fVIi.kh

स्वरुप समाज में इन रोगों का प्रभाव बहुत तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। यद्यपि, प्रारम्भिक अवस्था में इन रोगों पर अधिक ध्यान नहीं देते हैं परन्तु, आगे चलकर यह रोग गंभीर रुप धारण कर लेते हैं। इन रोगों में पेनकिलर दवाईयों के प्रयोग से कुछ समय के लिए राहत तो प्राप्त हो जाता है किन्तु, समस्या का स्थाई समाधान नहीं हो पाता है। अतः इन रोगों में यौगिक चिकित्सा उत्तम विकल्प होती है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में पेशीय और अस्थि तंत्र के प्रमुख रोगों का परिचय और लक्षण समझाते हुए इनकी यौगिक चिकित्सा पर सविस्तार विचार किया गया है।

mí';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन के पश्चात् आप -

- मांसपेशियों एवं अस्थि तंत्र के महत्त्व को समझाने में सक्षम हो सकेंगे;
- मांसपेशियों एवं अस्थि तंत्र सम्बन्धी रोगों का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
- मांसपेशियों एवं अस्थि तंत्र सम्बन्धी रोगों के लक्षणों को वर्णित करने में सक्षम हो सकेंगे;
- मांसपेशियों एवं अस्थि तंत्र सम्बन्धी रोगों की यौगिक चिकित्सा को जान सकेंगे;
- मांसपेशियों एवं अस्थि तंत्र सम्बन्धी रोगों के विषय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

8-1 i'kh; r= d ie[k jkx

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर को गतिशील बनाने के लिए ऐच्छिक, अनैच्छिक और हृदय नामक तीन प्रकार की पेशियाँ शरीर में उपस्थित होती हैं। इन पेशियों में संकुचन और विस्तार क्रिया (Contraction & Extension) करने का गुण होता है जिस कारण ये पेशियाँ शरीर को आन्तरिक और बाह्य स्तर पर गतिशील बनाने का कार्य करती रहती हैं। इन पेशियों की गतिशीलता के कारण शरीर विभिन्न कार्यों को करने में सक्षम होता है। इस प्रकार शरीर को क्रियाशील बनाने में मांसपेशियाँ बहुत महत्वपूर्ण भूमिका वहन करती हैं। परन्तु, गलत दिनचर्या, विकृत आहार का सेवन, शारीरिक श्रम का अभाव, योगाभ्यास का अभाव और गलत मुद्राओं में कार्य करने के कारण इन पेशियों में दर्द और जकड़न की रोगावस्था उत्पन्न हो जाती है, जिससे शारीरिक कार्यों को करने में बाधा उत्पन्न होने के साथ रोगावस्था उत्पन्न हो जाती है। इसके प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

8-1-1 ekl if'k;k e nnl ,o tdMu dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

शरीर की मांसपेशियों में दर्द और जकड़न का होना आजकल बहुत सामान्य रोग बनता जा रहा है। पहले वृद्धावस्था में शरीर की मांसपेशियों की क्रियाशीलता कम होने पर यह समस्या उत्पन्न होती थी किन्तु, वर्तमान समय में बच्चों से लेकर युवाओं और वृद्धों अर्थात् सभी आयु वर्ग के लोगों में यह रोग बहुत तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि, पुरुषों की तुलना में महिलाएं इस रोग की चपेट में अधिक आ रही हैं।

eLdyk&Ldyly lc/kh jkx ,o ;kSfxd fpfdRlk

यद्यपि, अधिक कार्य करने के उपरान्त शरीर की मांसपेशियों में दर्द और भारीपन होना एक स्वभाविक प्रक्रिया है जो दैनिक जीवन में प्रायः अनुभव होती है और रात्रिकाल में आराम करने से ठीक हो जाती है। परन्तु, जब शरीर के विभिन्न भागों की मांसपेशियों में दर्द, भारीपन और जकड़न लगातार बनी रहती है और उसमें आराम करने से भी लाभ प्राप्त नहीं होता है बल्कि दर्द के कारण आराम करने में भी बाधा (नींद नहीं आना) उत्पन्न होने लगती है, तब वह रोगावस्था कहलाती है। इस अवस्था में शरीर के सम्बन्धित भाग की पेशियों में दर्द के साथ जकड़न भी उत्पन्न होती है।

चित्र 8.1: मांसपेशियों मे दर्द

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) पेशियों में दर्द, ऐंठन के साथ जकड़न उत्पन्न होना।

2) पेशियों में भारीपन के साथ उस भाग में लालीपन और सूजन आना।

3) आराम करने पर दर्द में आराम के स्थान पर समस्या बढ़ जाना।

4) शरीर के भागों का मूवमेन्ट कम हो जाना और मूवमेन्ट करने पर तीव्र दर्द होना।

5) पेशियों में जकड़न और दर्द के कारण रात्रि की नींद में बाधा उत्पन्न होना और नींद नहीं आना।

'kjhj e mijkDr y{k.k if'k;k e nn ,o tdMu dh vkj ldr djr gA

8-2 eklif'k;k e nn vkj tdMu dh ;kfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, जब शरीर के किसी भाग की मांसपेशी में सिकुड़न उत्पन्न हो जाती है तब उस स्थान पर पेशियों में रक्त संचार बाधित हो जाता है। रक्त संचार बाधित होने से पेशियों को पोषण प्राप्त नहीं होता है जिससे पेशियों में दर्द और जकड़न उत्पन्न हो जाता है। योगाभ्यास करने से शरीर की पेशियों में क्रियाशीलता उत्पन्न होने के साथ रक्त संचार में वृद्धि होती है। प्राण ऊर्जा और जीवन शक्ति उन्नत बनती है, जिससे पेशियों की जकड़न और दर्द में आराम मिलते हुए इनसे सम्बन्धित रोग समूल नष्ट होते हैं। यौगिक चिकित्सा का प्रारम्भ अनुशासित दिनचर्या और सन्तुलित आहार-विहार से होता है। अतः सर्वप्रथम प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व उठकर प्रातःकालीन भ्रमण करते हुए यौगिक क्रियाओं जैसे आसन, प्राणायाम और

fVIi.kh

ध्यान आदि नियमित अभ्यास करने से पेशियों सम्बन्धित रोगों में शीघ्र लाभ प्राप्त होता है। पेशियों में दर्द और जकड़न की रोगावस्था में निम्न यौगिक चिकित्सा से लाभ प्राप्त होता है-

8-2-1 "kV~deZ dk vH;kl

धौति, बस्ति, नेति, नौली एवं त्राटक नामक षट्कर्म की शोधन क्रियाओं का अभ्यास करने से शरीर की पेशियों से विषाक्त विजातीय द्रव्य बाहर निकलता है। इससे शरीर के भीतर पेशियों में आन्तरिक स्वच्छता उत्पन्न होती है और पेशियों में हल्कापन आने के साथ इनकी क्रियाशीलता में अभिवृद्धि होती है। पेशियों को स्वस्थ बनाने एवं वात-पित्त, कफ धातु में सन्तुलन स्थापित करने के उद्देश्य से शरीर की आवश्यकता और क्षमता के अनुसार प्रातःकाल खाली पेट गुनगुने नमकीन जल से नेति, धौति और बस्ति क्रिया का अभ्यास करना चाहिए। इससे उदर और शीर्ष प्रदेश की पेशियाँ स्वस्थ बनती हैं। इसी प्रकार नौली क्रिया के अभ्यास से उदर की मांसपेशियाँ स्वस्थ्य और क्रियाशील बनती हैं। त्राटक क्रिया का अभ्यास नेत्र की मांसपेशियों को बल प्रदान करता है। षट्कर्म की कपालभाति नामक शुद्धिक्रिया का अभ्यास करने से अनुपयोगी विजातीय पदार्थों का शरीर से निष्कासन होता है और कफ दोष का शमन होता है। जिसके फलस्वरुप सम्पूर्ण शरीर में पेशियों की जकड़न और दर्द दूर होने के साथ हल्कापन और क्रियाशीलता में वृद्धि होती है। अर्थ यह है कि षट्कर्म की शोधन क्रिया के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर की पेशियों को लाभ प्राप्त होता है और पेशियों से सम्बन्धित रोग दूर होते हैं।

8-2-2 vkluksa dk çHkko

योगासनों का अभ्यास शरीर की पेशियों पर सीधा प्रभाव ड़ालता है। आसन करने से पेशियों की क्रियाशीलता में अभिवृद्धि होती है जिससे इनसे सम्बन्धित रोगों में लाभ प्राप्त होता है। यहाँ महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि आसनों का अभ्यास धीरे-धीरे करना चाहिए एवं सूक्ष्म अभ्यासों से प्रारम्भ करते हुए पहले सरल आसनों और इसके उपरान्त कठिन आसनों का अभ्यास करना चाहिए। इससे पेशियों के आकार और क्रियाशीलता में धीरे-धीरे वृद्धि होती है।

यद्यपि सभी आसन शरीर की पेशियों पर प्रभाव डालते हैं किन्तु, पेशियों से सम्बन्धित दर्द एवं जकड़न को दूर करने के लिए पहले हाथों और पैरों के सूक्ष्म अभ्यास करने चाहिए। तत्पश्चात् शरीर के विभिन्न भागों जैसे हाथों, पैरों, उदर और वक्ष आदि भागों की पेशियों को प्रभावित करने वाले अभ्यास करने चाहिए। आसनों के क्रमें ताड़ासन, त्रिकोणासन, गरुड़ासन, वातायनासन, वृक्षासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, वक्रासन, भुजंगासन, शलभासन, मत्स्य आसन, धुनरासन, उत्तानमण्डुक आसन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन और पद्मासन आदि आसनों का नियमित रुप से अभ्यास करना चाहिए। इनके साथ-साथ सूर्यनमस्कार का अभ्यास शरीर की क्षमतानुसार करने से मांसपेशियों में बल और शक्ति के साथ लचीलेपन का विस्तार होता है।

8-2-3 eqæk ,oa cU/kksa dk çHkko

घेरण्ड संहिता ग्रन्थ में उपदेश किया गया है कि, मुद्राओं के अभ्यास से शरीर में स्थिरता का विकास होता

है। यहाँ पर सिथरता से अभिप्रायः शरीर की मांसपेशियों पर नियंत्रण प्राप्त करने से है। अर्थात् मुद्राओं का अभ्यास करने से पेशियाँ स्वस्थ्य एवं सक्रिय बनती हैं। वृक्कों पर मुद्रा एवं बंध का अभ्यास सकारात्मक प्रभाव रखते हैं। मुद्राओं में महामुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, माण्डूकी मुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, तड़ाकी मुद्रा एवं अश्वनी मुद्रा का अभ्यास पेशियों की क्रियाशीलता में वृद्धि करता है। मुद्राओं के साथ मूल, उड्डियान और जालंधर बन्धों का अभ्यास करने से मानव शरीर की पेशियाँ स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनती हैं।

8-2-4 çk.kk;ke dk çHkko

शरीर की मांसपेशियों को स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनाने के लिए प्रतिदिन विधिपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। चूंकि पेशियों में प्राण तत्व का अभाव होने पर भारीपन, जकड़न और दर्द आदि की उत्पत्ति होती है इसीलिए प्राणशक्ति का विस्तार एवं रोगों से मुक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से नियमित प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम के अभ्यास क्रम में लम्बे गहरे श्वासों से प्रारम्भ करते हुए, अनुलोम-विलोम, नाड़ीशोधन, सूर्यभेदी, उज्जायी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी और प्रणव उच्चारण अर्थात् ओउम् का जप करना चाहिए। इस अभ्यासक्रम का पेशिय विकारों में अच्छा प्रभाव पड़ता है।

8-2-5 çR;kgkj dk çHkko

प्रत्याहार से अर्थ इन्द्रियों एवं मन पर संयम से है। इन्द्रियों एवं मन पर संयम से आहार सम्बन्धित नियमों में अनुशासन शीलता एवं समय प्रबन्धन के साथ दिनचर्या सुव्यवस्थित बनती है। इससे मन में स्थिरता के साथ चित्त में एकाग्रता बढ़ती है और पेशियों में तनाव दूर होकर स्वास्थ्य का विस्तार होता है।

8-2-6 /;ku dk çHkko

ध्यान की क्रिया का शरीर की पेशियों पर सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ध्यानात्मक आसन में स्थिर होकर ईश्वर का ध्यान करते हुए सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त करने से सम्पूर्ण शरीर में हल्कापन आता है। इससे पेशियाँ ऊर्जावान एवं रोगमुक्त बनती हैं।

8-2-7 lekf/k dk çHkko

सामाधि से तात्पर्य सकारात्मक भावों की अनुभूति करने से होता है। सकारात्मक भावों की अनुभूति का बहुत अच्छा प्रभाव शरीर के सभी तंत्रों पर पड़ता है। सकारात्मक अनुभूतियों से पेशियों का तनाव सन्तुलित होता है और चेहरे पर झुर्रियां और अन्य विकार उत्पन्न नहीं होते हैं। जीवन की समस्त सम-विषम परिस्थितियों का सामना धैर्यपूर्वक और बुद्धिमत्ता के साथ करते हुए आत्मसन्तोष के आनन्द में लीन होकर जीवनयापन करने से समस्त शारीरिक और मानसिक दुखों एवं रोगों का नाश होता है और उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

उपरोक्त योगाभ्यास के साथ शरीर की मांसपेशियों के विकारग्रस्त होने पर रोगी व्यक्ति को निम्न अपथ्य

fVIi.kh

आहार का त्याग और पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए-

i½ **viF; vkgkj½** नमक, मिर्च, मसाले, मैदा और मैदे से बनी वस्तुएं, बासी एवं प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्य पदार्थ, खट्‌टी दही, मठ्‌ठा, बर्फ-आईसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक्स, सोडा वाटर, फ्रिज का ठंडा पानी आदि कृत्रिम खाद्य पदार्थों का त्याग कर देना चाहिए। पेशिय विकारों में बर्फ, फ्रिज और कोल्ड स्टोर में रखे खाद्य पदार्थ, वातवर्धक खाद्य पदार्थ और ए.सी. में वास को पूर्णरुप से त्याग देना चाहिए।

ii) **iF; vkgkj½** हल्का सुपाच्य एवं पौष्टिक आहार, अंकुरित चना, गेंहूँ-जौ और चना मिलाकर चौकर युक्त आटे की रोटियां, दूध एंव दूध से बने पदार्थ, घी-मक्खन, मौसमी फल-सब्जियाँ जैसे लौकी, तुरई, टमाटर, नींबू, विटामिन्स और कैल्शियम और फास्फोरस खनिज लवणों युक्त ताजे फल-सब्जियां जैसे आलू, प्याज, चुकन्दर, गाजर, सन्तरा] मौसमी, अनार, पपीता, अंगूर, अनानास आदि सुपाच्य खाद्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

उपरोक्त यौगिक चिकित्सा से पेशियों में दर्द और जकड़न रोग समूल देर होते हैं और पेशियों की क्रियाशीलता में वृद्धि के साथ उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

8-3 vfLFk r= l lEcfU/kr ie[k jkx

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर के मूल ढाँचे का निर्माण विभिन्न आकार की 206 अस्थियों के मिलने से होता है। शरीर में अस्थियां सन्धियों के रुप में जुड़कर मानव रुपी रचना का निर्माण करती हैं। भारतवर्ष में जब तक व्यक्तियों का आहार-विहार शुद्ध सात्विक एवं दिनचर्या सुव्यवस्थित थी एवं इसके साथ-साथ वह नियमित यौगिक क्रियाओं के अभ्यास के अलावा पर्याप्त शारीरिक श्रम करता था तब तक भारतीय समाज में अस्थि तंत्र के रोगियों की संख्या बहुत कम अथवा नगण्य थी किन्तु, जैसे–जैसे भारतीय समाज के खान-पान एवं रहन सहन में आधुनिकता का प्रवेश हुआ तभी से अस्थि तंत्र के रोगों नें भी समाज में अपना स्थान बनाया। खान–पान में फास्ट फूड (पीज्जा, बर्गर, मैगी), चाइनीज फूड (चाउमिन, मोमो) व जंक फूड (पेप्सी, कोक) के प्रचलन ने अस्थि तंत्र के रोगियों की संख्या तेज़ी से बढ़ाई है। इससे वृद्ध व्यक्ति ही नहीं अपितु, बच्चे भी अस्थि तंत्र के रोग से ग्रस्त हो रहे हैं। इसके साथ-साथ विलासितापूर्ण श्रमहीन जीवनशैली एवं दिनचर्या में यौगिक आसन-प्राणायाम के अभाव ने भी अस्थि तंत्र रोगों के फैलाने में प्रमुख भूमिका निभाई है। वर्तमान समय में विकृत खान-पान एवं दिनचर्या के अभाव में अस्थि तंत्र के रोगों एवं रोगियों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। मानव अस्थि तंत्र के प्रमुख रोगों का वर्णन इस प्रकार हैं-

8-3-1 vkFkjkbfVl jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, आर्थराइटिस अंग्रेजी भाषा का शब्द है जिसकी उत्पत्ति ग्रीक भाषा से हुई है। आर्थराइटिस ग्रीक भाषा के दो शब्दों आथ्रो (Arthro) और आइटिस (Itis) से मिलकर बनता है। ग्रीक भाषा में आथ्रो (Arthro) का अर्थ जोड़ अर्थात् सन्धियां तथा आइटिस (Itis) का अर्थ सूजन होता है अर्थात् शाब्दिक अर्थ में वह रोग जिसमें जोड़ों अथवा सन्धियों में सूजन उत्पन्न होती है, आर्थराइटिस (Arthritis) कहलाता है। चूंकि आर्थराइटिस रोग में सन्धियों में सूजन उत्पन्न होती है अतः हिन्दी भाषा में इसे सन्धि शोथ के नाम

से जाना जाता है। आयुर्वेद शास्त्र में आर्थराइटिस रोग को आमवात का नाम दिया गया हैं।

इस रोग का प्रारम्भ जोड़ों में सूजन के साथ होता है, जोड़ों में सूजन के साथ जोड़ लाल होने लगते हैं एवं इन जोड़ों में सुई सी चुभन उत्पन्न होने लगती है। यही आगे चलकर गठिया में एवं गठिया आगे चलकर आर्थराइटिस रोग का रुप ले लेता है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में आर्थराइटिस रोग के सौ से भी अधिक प्रकारों को वर्णित किया गया है। आर्थराइटिस रोग के प्रकारों में सबसे अधिक व्यापक **#eVk;M vkFkZjkbfVl ¼vkeokfrd lfU/k'kksFk½** है। इसके अतिरिक्त ऑस्टियो आर्थराइटिस, सेप्टिक आर्थराइटिस, सोरियाटिक आर्थराइटिस तथा रिएक्टिव आर्थराइटिस भी आर्थराइटिस रोग के अन्य प्रकार हैं।

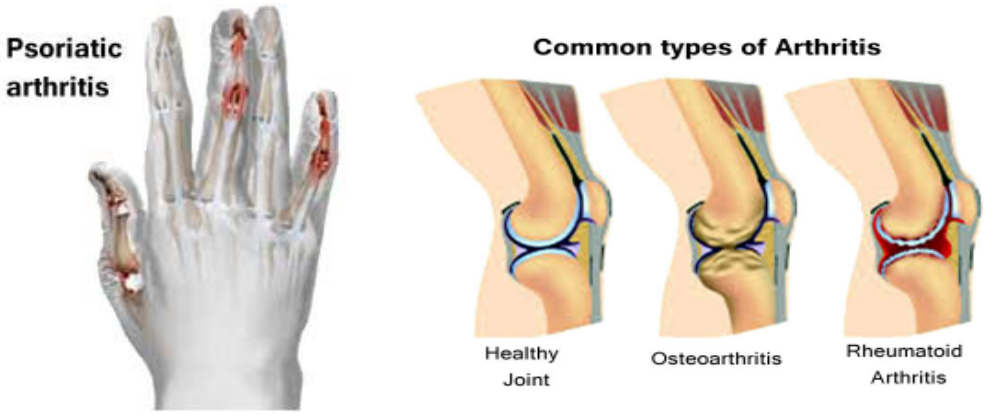

चित्र 8.2 : सोरियाटिक आर्थराइटिस

भारत के अतिरिक्त पश्चिमी विकसित देशों में जहाँ अधिकांश कार्य मशीनों से होता है एवं शारीरिक श्रम का अधिक अभाव है, उन देशों में अस्थि तंत्र के जोड़ों के दर्द से सम्बन्धित रोगियों की संख्या और भी अधिक है। भारत की तुलना में इन देशों में आर्थराइटिस रोगियों की संख्या और भी अधिक है। एक गणना के अनुसार अमेरिका देश में आर्थराइटिस रोग से ग्रस्त रोगियों की संख्या 20 लाख से भी अधिक है। इसी प्रकार कनाडा, इंग्लैण्ड एवं आस्ट्रेलिया आदि ठंडे वातावरण के विकसित देशों में भी आर्थराइटिस रोगियों की संख्या तेज़ी से बढ़ती जा रही है। दुनिया भर में आर्थराइटिस रोग के बढ़ने प्रभाव को दूर करने के उद्देश्य से एवं आर्थराइटिस के प्रति जागरुकता फैलाने के उद्देश्य से 12 अक्टूबर को 'विश्व आर्थराइटिस दिवस' मनाया जाता है।

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) शरीर के जोड़ों में सूजन के साथ तीव्र वेदना होना इस रोग का मूल लक्षण होता है।
2) जोड़ों में कठोरता आने के साथ अस्थियों का टेढ़ा हो जाना।
3) शरीर का तापक्रम बढ़ना एवं शरीर में हल्का बुखार बने रहना।
4) त्वचा पर रेशेज़, झुर्रियां पड़ना और खुरदरी होना।
5) शरीर में भारीपन के साथ हाथ-पैर मोड़ने में दर्द एवं पीड़ा होना।
6) शरीर में हर समय कष्ट और पीड़ा रहने के साथ शरीर का वजन कम हो जाना।

fVIi.kh

7) निद्रा में बाधा उत्पन्न होना या अनिद्रा उत्पन्न होना।

8) स्वभाव में परिवर्तन जैसे चिड़चिढ़ापन, क्रोध, बैचेनी आदि उत्पन्न होना।

'kjhj e mijkDr y{k.k vfLFk r= d vkFkjkbfVl jkx dh vkj ldr djr gA

8-3-2 lokbdy LikfUMykbfVLk dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य की रीढ़ का निर्माण छोटी-छोटी विशेष आकार एवं संरचना की अस्थियों (कशेरुकाओं) के मिलने से होता है। रीढ़ में इन कशेरुकाओं की कुल संख्या 26 होती है। इनमें से ऊपर की (सिर की ओर की) प्रथम सात कशेरुकाओं को सर्वाइकल की संज्ञा दी जाती है। जिन्हें अग्रेंजी भाषा के अक्षर सी-1 से लेकर सी-7 तक से प्रदर्शित किया जाता है। रीढ़ की इन सी-1 से लेकर सी-7 तक की कशेरुकाओं के मूल स्थान, आकृति अथवा संरचना में विकृति ही **lokbdy LikfUMykbfVl (Cervical Spondylitis)** नामक रोग के नाम से जाना जाता हैं।

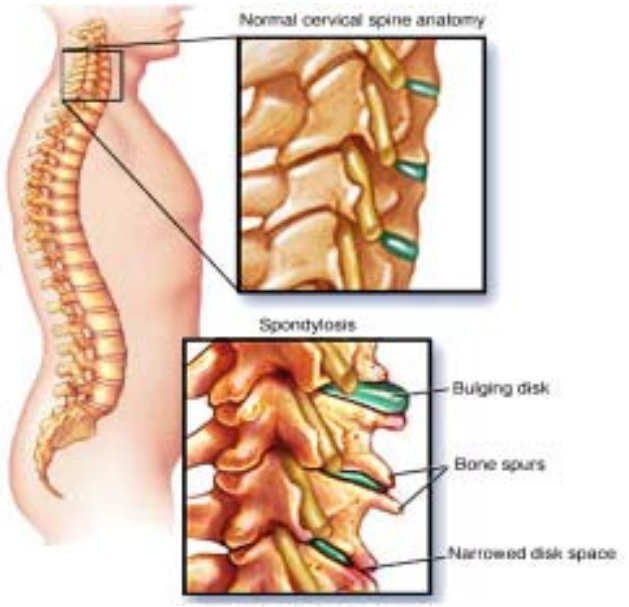

चित्र 8.3 : सर्वाइकल स्पोन्डिलाइटिस

शरीर की गलत मुद्रा अपनाकर देर तक कार्य करने से रीढ़ की उपरोक्त कशेरुकाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है तथा यह रोग उत्पन्न होता है। इसी प्रकार लम्बे समय तक झुककर बैठने से भी यह रोग उत्पन्न होता है। टेढ़े-मेढ़े होकर सोने, अधिक गहरे व लचीले गद्दों पर सोने एवं सोते समय मोटे तकिये को सिराहने के रुप में प्रयोग करने की आदत भी इस रोग को जन्म देती है। इस रोग में गर्दन के भाग में बहुत तीव्र सुई की चुभन के समान वेदना होती है जिसमें दर्द निवारक दवाईयों का सेवन भी प्रभावहीन होता है।

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) गर्दन में तीव्र वेदना और जकड़न के साथ गर्दन का जाम हो जाना एवं गर्दन घुमाने में बहुत तेज़ दर्द होना।

2) गर्दन दर्द बढ़ते हुए कन्धों में दर्द और जकड़न होना।

3) कमर दर्द के साथ आगे को झुकने में तीव्र दर्द होना।

4) हाथों व अंगुलियों में सुन्नपन होना और इन्द्रिय बोध कम होना।

5) आंखों के सामने अंधेरा छाते हुए चक्कर आना एवं सिरदर्द बने रहना ।

6) गर्दन में दर्द के कारण निद्रा में बाधा उत्पन्न होना और अनिद्रा उत्पन्न होना।

7) स्वभाव में परिवर्तन जैसे चिड़चिड़ापन, क्रोध, बेचैनी आदि उत्पन्न होना।

'kjhj e miijkDr y{k.k vfLFk r= d lokbdy LiksfUMykbfVl jkx dh vkj ldr djr gA

8-3-3 ihBnn ,o dfVLuk;'ky jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर के आधर के रुप में रीढ़ का वर्णन आता है। रीढ़ का निर्माण कुल 26 कशेरुकाओं के मिलने से होता है। इसके साथ-साथ रीढ़ से ही 31 जोड़ी मेरुतंत्रिकाएँ निकलती हैं। यह मेरुतंत्रिकाएँ रीढ़ से निकलकर सम्पूर्ण शरीर में फैलकर संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करती है। परन्तु, शरीर की गलत मुद्राओं में देर तक कार्य करने; भारी सामान उठाने अथवा वातवर्द्धक ठंडी प्रकृति के आहार का अधिक सेवन अथवा अधिक गहरे व लचीले गद्दों पर सोने या चोट आदि कारकों के परिणास्वरुप रीढ़ की उपरोक्त कशेरुकाओं एवं तंत्रिकाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है तथा पीठ दर्द एवं कटिस्नायुशूल रोग उत्पन्न होता है।

चित्र 8.4 : कटिस्नायुशूल

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) पीठ की रीढ़ के मध्य भाग में बहुत तेज़ दर्द होना।

2) पीठ दर्द बढ़ते हुए रीढ़ में जकड़न होना।

3) कमर दर्द के साथ आगे को झुकने में तीव्र दर्द होना।

4) कार्य करने में असुविधा एवं दर्द होना।

5) विश्राम करने पर भी दर्द में आराम प्राप्त नहीं होना।

6) पीठदर्द के कारण निद्रा में बाधा उत्पन्न होना और अनिद्रा उत्पन्न होना।

7) स्वभाव में परिवर्तन जैसे चिड़चिड़ापन, क्रोध, बेचैनी आदि उत्पन्न होना।

'kjhj e miijkDr y{k.k vfLFk r= d ihBnn ,o dfVLuk; 'ky jkx dh vkj ldr djr gA

fVIi.kh

8-3-4 fLyi fMLd jkx dk lkekU; ifjp; ,o y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, पीठदर्द ऐसा सामान्य एवं व्यापक रोग है जिसका सामना प्रायः अधिकांश लोगों को अपने जीवन में करना ही पड़ता है। इनमें से जहाँ कुछ व्यक्तियों को यह दर्द कभी-कभी सताता है जो कुछ समय के उपरान्त ठीक हो जाता है किन्तु, कुछ व्यक्ति इस पीठदर्द से स्थाई रुप से ही ग्रस्त रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों में आगे चलकर यह पीठदर्द 'स्लिप डिस्क' नामक रोग में परिवर्तित हो जाता है। इस रोग से ग्रस्त होने पर इस दर्द की गंभीरता इतनी होती है कि इन लोगों का घूमना फिरना एवं कार्य करना लगभग बंद सा हो जाता है और ये लोग बिस्तर पकड़ लेते हैं।

स्लिप डिस्क अग्रेंजी भाषा का शब्द है जिसमें स्लिप का अर्थ फिंसलने से और डिस्क का अर्थ मेरुदण्ड की कशेरुका से होता है अर्थात् वह अवस्था जिसमें मेरुदण्ड की कशेरुका अपने स्थान से फिंसल जाती है, स्लिप डिस्क रोग के नाम से जाना जाता है। इस रोग का सीधा सम्बन्ध हमारी रीढ़ अर्थात् मेरुदण्ड से होता है जिसमें रीढ़ की कशेरुकाएं अपने मूल स्थान से फिंसल जाती हैं।

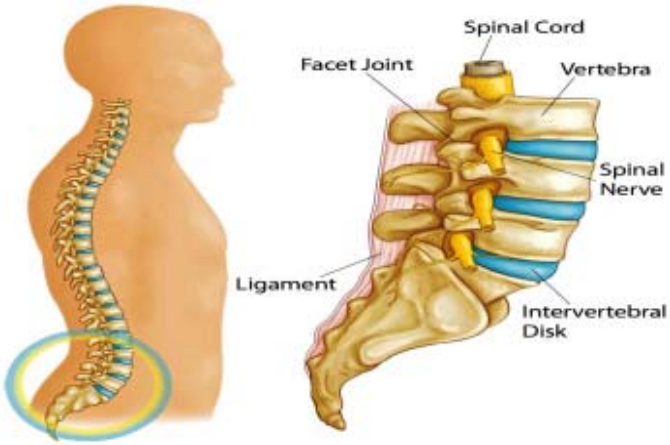

चित्र 8.5 : स्लिप डिस्क

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) कमर के निचले भाग में तेज़ दर्द (लोअर बैक पेन) होना।

2) रीढ़ से निकलने वाली तंत्रिकाओं (नाड़ियों) का दब जाना।

3) शरीर का असन्तुलित होकर एक दिशा में झुक जाना और चलते समय एक ओर झुककर चलना।

4) दैनिक कार्य करने में असुविधा एवं दर्द होना।

5) रोग की गंभीर अवस्था में मल-मूत्र पर नियंत्रण का अभाव होना।

6) पीठदर्द के कारण निद्रा में बाधा उत्पन्न होना और अनिद्रा उत्पन्न होना।

'kjhj e mijkDr y{k.k vfLFk r= d fLyi fMLd jkx dh vkj ldr djr gA

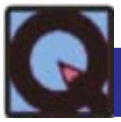

fVIi.kh

bdkbZ iz'u&8-1

रिक्त स्थान भरिए–

क) अर्थराइटि्स रोग का प्रारम्भ जोड़ों में .... के साथ होता है।

ख) ऊपर की प्रथम सात कशेरुकाओं को .... की संज्ञा दी जाती है।

ग) स्लिप डिस्क रोग में रीढ़ की कशेरुकाएँ अपने मूल स्थान से .... जाती है।

8-4 vfLFk jkxka dh ;kfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, अस्थि तंत्र के रोगों में यौगिक क्रियाओं जैसे आसन, मुद्रा-बंध एवं प्राणायाम का अभ्यास रोग दूर करने में अत्यन्त प्रभावी सिद्ध होती है। इन क्रियाओं का अभ्यास कराने से रोगी को तुरन्त लाभ मिलने लगता है तथा लम्बे समय तक इन क्रियाओं का नियमित अभ्यास कराने से रोगी के रोग पर नियंत्रण प्राप्त होने लगता है। इनके साथ योगमय जीवनशैली का पालन करते हुए प्रातःकाल सूर्योदयपूर्व उठते हुए नित्य यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने एवं सकारात्मक मनन चिन्तन करते हुए तनाव से मुक्त रहने पर अस्थि तंत्र के सभी रोग समूल ठीक होते है। अस्थि तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा इस प्रकार है -

8-4-1 "kVdeZ dk iHkko

प्रिय शिक्षार्थियों, षट्कर्मों की छः क्रियाओं धौति, बस्ति, नेति, नौली, त्राटक एवं कपालभाति का रोग की स्थिति एंव रोगी की क्षमतानुसार अभ्यास कराने से रोगी के शरीर का शोधन होता है। इसके साथ-साथ वात-पित्त और कफ नामक त्रिदोषों में सन्तुलन स्थापित होता है, जिससे अस्थि तंत्र के सभी रोगों में लाभ मिलता है। बस्ति क्रिया के अभ्यास से शरीर में कुपित वात दोष पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आयुर्वेद में वात का मुख्य स्थान बड़ी आँत माना गया है यहाँ पर स्थित वायु यदि कुपित हो जाती है तो भिन्न-भिन्न प्रकार के वात रोग पैदा होते है। इस वात को वस्ति कर्म के अभ्यास से बड़ी आसानी से शान्त किया जा सकता है। अतः बस्ति क्रिया के अभ्यास से कमर दर्द, आर्थराइटिस और सर्वाइकल आदि अस्थि तंत्र के रोगों में बहुत लाभ मिलता है। त्राटक क्रिया मानसिक स्थिरता और एकाग्रता उत्पन्न करता है। इसके साथ निम्न अथवा मध्यम गति से कपालभाति क्रिया का अभ्यास करने से विजातीय द्रव्य बाहर निकलते हैं और शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है।

8-4-2 vklu dk iHkko

अस्थि तंत्र के रोगों का उपचार करने में आसनों का अभ्यास अत्यन्त लाभकारी प्रभाव देता है। आसनों के अभ्यास से अस्थि तंत्र के रोगों में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। यहाँ महत्त्वपूर्ण स्मरणीय तथ्य यह है कि रोग की तीव्र अवस्था में रोगी व्यक्ति आसनों का अभ्यास करने में असक्षम होता है तथा रोगी को बलपूर्वक आसन कराने से रोगी का दर्द तेज़ी से बढ़ जाता है अतः रोगी को अत्यन्त सावधानीपूर्वक हल्के–हल्के आसनों और

विशेष रूप से संधि संचालन के सूक्ष्म अभ्यासों को कराना चाहिए। रोगी को पैर की उंगुलियों, पंजों, घुटनों, कुल्हे, हाथ की उंगुलियों, कलाई, कोहनी, कन्धों एवं गर्दन को गतिशील बनाने वाले अभ्यासों को बार–बार सुबह और शाम दोनों समय अभ्यास कराने से रोग में लाभ मिलता है।

उपरोक्त सूक्ष्म अभ्यासों से रोग की तीव्रता कम होने पर रोगी को आसनों के क्रम पर लाते हुए धीरे-धीरे एवं सावधानीपूर्वक आसनों का अभ्यास कराना चाहिए। सबसे महत्त्वपूर्ण सावधानी यह होती है कि, अस्थि तंत्र के रोगों में आगे की ओर झुकने वाले आसन जैसे पश्चिमोत्तान, योगमुद्रा आदि पूर्ण रूप से निषेध होते हैं अतः अस्थि तंत्र के रोगों में रोगी को रीढ़ के पीछे एवं पार्श्व में मुड़ने वाले आसनों जैसे सर्पासन, भुजंगासन, मकरासन, पवनमुक्तासन, उत्तानपादासन, मत्स्यासन, मरकटासन, गोमुखासन, उष्ट्रासन, वक्रासन, अर्द्धचन्द्रासन, वातायन आसन एवं शवासन आदि आसनों का अभ्यास कराना चाहिए। भुजंगासन का अभ्यास अस्थि तंत्र के सभी रोगों में बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। इसी प्रकार मरकट आसन का अभ्यास रीढ़ की सभी कशेरुकाओं पर बहुत लाभकारी प्रभाव डालता है। रोग की अवस्था सामान्य होने पर व्यक्ति की क्षमतानुसार चक्रासन का अभ्यास रीढ़ को सशक्त और बलवान बनाता है। अस्थि तंत्र के रोगों में आसनों के महत्त्व को देखते हुए वर्तमान समय में आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अन्तर्गत अस्थि तंत्र के रोगों की फिजीयोथैरेपी का प्रचलन भी बढ़ता जा रहा है, जिसमें चिकित्सक सहायता देकर रोगी को आसनों का अभ्यास करवाता है।

8-4-3 enk ,o cU/k dk iHkko

अस्थि तंत्र के रोगों का सम्बन्ध वात दोष की विकृति से होता है। शरीर में वात दोष को सम बनाने के लिए मुद्राओं एवं बन्धों का अभ्यास लाभकारी प्रभाव रखता है। रोगी को उसकी क्षमतानुसार काकी, शाम्भवी तथा महामुद्राओं आदि मुद्राओं का अभ्यास कराना चाहिए। इसके साथ–साथ मूल, उड्डियान एवं जालंधर बन्धों का अभ्यास भी रोगी को कराना चाहिए।

8-4-4 iR;kgkj dk iHkko

अस्थि तंत्र के रोगों से मुक्ति प्राप्त करने में प्रत्याहार अर्थात् इन्द्रिय संयम अपनी एक विशेष भूमिका का वहन करता है। प्रत्याहार के अर्न्तगत सुव्यवस्थित दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या का अनुशासन से पालन करने से रोग समूल नष्ट होता है। इसके साथ खानपान सम्बन्धित बुरी आदतों पर नियंत्रण करने से भी रोगों में स्वतः स्थाई लाभ प्राप्त होने लगता है।

8-4-5 ik.kk;ke dk iHkko

अस्थि तंत्र के रोगों में रोगी को प्राणायाम के अभ्यास से प्राण शक्ति को जाग्रत करना चाहिए। प्राणायाम के क्रम में नाड़ी शोधन, अनुलोम–विलोम, सूर्यभेदी, उज्जायी, भस्त्रिका एवं भ्रामरी आदि प्राणायामों का नियमित अभ्यास कराने से रोगों में स्थाई लाभ मिलता है। रोगी को साफ स्वच्छ वातावरण में एकान्त स्थान पर बैठकर स्थिर मन से एवं नियमित रुप से प्राणायामों का अभ्यास करने से अस्थि तंत्र के रोग ठीक होने लगते हैं।

8-4-6 /;ku dk iHkko

ध्यान के द्वारा रोगी अपने मन की नकारात्मक वृत्तियों पर विजय प्राप्त करता है और सम्पूर्ण ऊर्जा को केन्द्रित करता है। रोग की नकारात्मकता से हटकर सकारात्मक विचारों एवं भावों का चिन्तन मनन करने से रोग प्रतिरोधक क्षमता और जीवन शक्ति उन्नत बनती है और अस्थि तंत्र के सभी रोग दूर होते हैं। इसी प्रकार ईश्वर में आस्था को दृढ़ बनाते हुए सकारात्मक अनुभूतियों को धारण करने से अस्थि तंत्र के सभी रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है और समग्र स्वास्थ्य का विकास होता है।

उपरोक्त योगाभ्यास के साथ रोगी व्यक्ति को निम्न अपथ्य आहार का त्याग और पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए-

viF; vkgkj% नमक, चीनी, चाय, मिर्च, मसाले, खट्टी दही, वसा, डालडा घी-तेल चिकनाई युक्त खाद्य पदार्थ, मैदा और मैदे से बनी वस्तुएँ, बासी एवं प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्य पदार्थ, धूम्रपान, एल्कोहल, फास्ट फूड, जंक फूड, बर्फ-आईसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक्स, सोडा वाटर आदि कृत्रिम खाद्य पदार्थों का पूर्णतया त्याग कर देना चाहिए।

iF; vkgkj% हल्का सुपाच्य आहार, अंकुरित चना, गेंहूँ-जौ और चना मिलाकर चौकर युक्त आटे की रोटियां, दूध एंव दूध से बने पदार्थ, घी, मक्खन, मौसमी फल-सब्जियाँ जैसे प्याज, लहसुन, चुकन्दर, गाजर, लौकी, तुरई, टमाटर, नींबू, विटामिन्स और खनिज लवणों (कैल्शियम और फास्फोरस) युक्त ताजे फल- जैसे सन्तरा] मौसमी, अनार, पपीता, अंगूर, अनानास, बादाम, मुनक्का, खजूर आदि सुपाच्य एवं पोषक तत्वों युक्त खाद्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

bdkbxr i'u&8-2

सही ग़लत बताइए–

क) अस्थि तंत्र के रोगों का संबंध वात दोष से होता है। ( )

ख) खानपान संबंधी बुरी आदतों पर नियंत्रण करने से भी अस्थि तंत्र के रोगों से स्वतः स्थाई लाभ प्राप्त होने लगता है। ( )

ग) अस्थि तंत्र के रोगों में रोगी को प्राणयाम के अभ्यास से प्राण शक्ति को जाग्रत नहीं करना चाहिए। ( )

vkiu D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में पेशीय तंत्र एवं अस्थि तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) के प्रारम्भ में शरीर की मांसपेशियों के प्रमुख रोगों का सामान्य परिचय देते हुए उनकी यौगिक चिकित्सा का उल्लेख किया गया है और इसके उपरान्त अस्थि तंत्र के रोगों का

fVIi.kh

सामान्य परिचय देते हुए उनकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन किया गया है। इकाई (यूनिट) (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि यौगिक अभ्यासों का शरीर की मांसपेशियों और अस्थियों की क्रियाशीलता पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियमित रूप से इन क्रियाओं का अभ्यास करने से मानव शरीर की सभी अस्थियां और मांसपेशियाँ सदैव स्वस्थ बनी रहती हैं। जबकि, अस्थियों और मांसपेशियों में रोग उत्पन्न होने पर भी यौगिक अभ्यास इनसे सम्बन्धित रोगों को दूर करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यौगिक क्रियाओं में षट्कर्म शरीर का शोधन करने के साथ वात-पित्त और कफ दोषों को सम बनाते हैं जिससे इन रोगों में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। योगासनों का अभ्यास रक्त संचार में वृद्धि करने के साथ रीढ़, अस्थियों और मांसपेशियों को लचीला और दृढ़ बनाते हैं। इनके दृढ़ और लचीला बनने से इनके समस्त रोग समूल नष्ट होते हैं। मुद्रा और बन्धों के अभ्यास से आन्तरिक ऊर्जा की उत्पत्ति होती है और प्राणायाम का अभ्यास प्राण तत्व को सबल बनाता है। इससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता और जीवन शक्ति उन्नत बनती है और रोगावस्था से मुक्ति प्राप्त होती है। इन्द्रियों पर संयम से अच्छी आदतों का विकास होता है और दिनचर्या एवं आहार सम्बन्धी अनुशासन की प्राप्ति होती है। ध्यान और समाधि के अभ्यास से सम-विषम परिस्थितियों में अनुकूलन क्षमता का विकास होता है और ईश्वर में आस्था दृढ़ होने के साथ श्रेष्ठ आत्मबल प्राप्त होता है। यह रोगावस्था पर विजय प्राप्त करने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। इसके साथ-साथ अपथ्य आहार का त्याग करते हुए पथ्य आहार का सेवन करने से अस्थि और पेशियों के रोगों से पूर्ण मुक्ति प्राप्त होती है।

bdkb d vUr e i'u

1) पेशीय रोगों की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार वर्णन कीजिए।

2) स्लिप डिस्क रोग के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए यौगिक चिकित्सा लिखिए।

3) सर्वाइकल स्पोण्डोलाइटिस रोग के प्रमुख लक्षण लिखते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन कीजिए।

4) पीठदर्द रोग की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार वर्णन कीजिए।

bdkbxr i'uk d mÙkj

8-1

क) सूजन ख) सर्वाइकल ग) फिसल

8-2

क) सही ख) सही ग) गलत

9

तंत्रिका तन्त्र सम्बन्धी रोग एवं यौगिक चिकित्सा

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व इकाई (यूनिट) में आपने मस्कुलोस्केलेटल तंत्र से सम्बन्धित रोगों की यौगिक चिकित्सा के विषय में अध्ययन किया और ज्ञान प्राप्त किया कि अस्थियों के साथ-साथ पेशियों के गतिशील होने पर हमारा शरीर विभिन्न कार्यों को करने में सक्षम होता है अथवा दूसरे शब्दों में हमारे शरीर को क्रियाशील एवं गतिमान बनाने में अस्थियों के साथ-साथ मांसपेशियाँ बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करती हैं। मांसपेशियों में विकृति उत्पन्न होने पर शरीर भारी होकर एक गतिहीन पुतला बन जाता है जबकि, मांसपेशियों के सही प्रकार क्रियाशील होने पर शरीर हल्का, गतिशील एवं कार्य करने में सक्षम बना रहता है। पूर्व की इकाई (यूनिट) से यह भी स्पष्ट हुआ कि गलत दिनचर्या, विकृत आहार का सेवन, शारीरिक श्रम का अभाव, योगाभ्यास का अभाव और गलत मुद्राओं में कार्य करने के कारण शरीर की अस्थियों और पेशियों में दर्द और जकड़न की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिससे शारीरिक कार्यों को करने में बाधा उत्पन्न होने के साथ रोगावस्था उत्पन्न हो जाती है इसी से जोड़ों में दर्द, गठिया, आर्थराईटिस आदि रोग जन्म लेते हैं जबकि, इसके विपरित योगमय जीवनशैली को अपनाते हुए नियमित षट्कर्म की शोधन क्रियाओं का अभ्यास करते हुए योगासन, प्राणायाम और ध्यान आदि का अभ्यास करने एवं सम्यक श्रम करने से एवं आहार-विहार पर संयम करने से शरीर की पेशीयां स्वस्थ एवं क्रियाशील बनी रहती हैं। अब यहाँ पर महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन शरीर की पेशीयों का मनुष्य के तंत्रिका तंत्र के साथ भी सीधा सम्बन्ध होता है और शरीर की समस्त ऐच्छिक एवं अनैच्छिक पेशीयों पर तंत्रिका तंत्र का नियंत्रण रहता है, अतः प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित प्रमुख रोगों एवं उनके यौगिक उपचार पर विचार करते हैं।

मानव शरीर के सभी 11 तंत्रों में तंत्रिका तंत्र का अपना विशिष्ट स्थान होता है क्योंकि, तंत्रिका तंत्र ही अन्य

सभी तंत्रों पर नियंत्रण करता है। इसलिए तंत्रिका तंत्र के स्वस्थ होने पर शरीर के सभी तंत्र अपना कार्य सुचारु रूप से करने में सक्षम बने रहते हैं जबकि, तंत्रिका तंत्र में विकार उत्पन्न होने पर शरीर के अन्य तंत्र भी अपना कार्य सही प्रकार से करने में सक्षम नहीं रह पाते हैं। वास्तव में यह तंत्रिका तंत्र ही होता है जो मनुष्य को श्रेष्ठ चिन्तन प्रदान करता हुआ इस संसार के सभी जीवों में सबसे उच्च कोटि की पदवी पर स्थापित करता है। इस प्रकार तंत्रिका तंत्र का मनुष्य के जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में तंत्रिका तंत्र के प्रमुख रोगों माइग्रेन (सिरदर्द), वर्टिगो, अनिद्रा, आत्मकेन्द्रिता, पक्षाघात, पार्किंसंस, अल्जाईमर, मेन्जाइटिस और मिर्गी आदि का परिचय और लक्षण समझाते हुए इनकी यौगिक चिकित्सा पर सविस्तार विचार किया गया है।

mís';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन के पश्चात् आप -

- तंत्रिका तंत्र सम्बन्धी रोगों का सामान्य परिचय देते हुए उनके लक्षणों को वर्णित करने में सक्षम हो सकेंगे;
- तंत्रिका तंत्र सम्बन्धी रोगों की यौगिक चिकित्सा को व्यवहार में ला सकेंगे।

9-1 rf=dk rU= ds izeq[k jksx

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य मानव शरीर में अनेक स्थूल एवं सूक्ष्म क्रियाएँ प्रतिक्षण चलती रहती हैं। इन क्रियाओं में कुछ ऐच्छिक रूप से सम्पन्न होती हैं तो कुछ क्रियाएँ अनैच्छिक रूप से चलती रहती हैं। शरीर की इन सभी क्रियाओं का नियंत्रण और नियमन तंत्रिका तंत्र के द्वारा किया जाता है। मस्तिष्क और सुषुम्ना तंत्रिका तंत्र के दो प्रमुख अंग होते हैं। इसके साथ-साथ मस्तिष्क और सुषुम्ना से निकलकर अनेक तंत्रिकाएँ सम्पूर्ण शरीर में एक अविच्छन्न जाल के रूप में फैली होती है। इन सभी रचनाओं के मिलने से तंत्रिका तंत्र का निर्माण होता है। जिससे शरीर की सभी क्रियाओं का नियंत्रण होता है।

वर्तमान समय में मनुष्य का तनावपूर्ण एवं प्रतिस्पर्धात्मक चिन्तन, गलत जीवनशैली, विकृत आहार का सेवन एवं नकारात्मक सोच-विचार आदि कारक तंत्रिका तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव रखते हैं, जिनके परिणामस्वरूप तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित रोग उत्पन्न होते हैं। वर्तमान समय में तंत्रिका तंत्र से ग्रसित रोगियों की संख्या बहुत तेज़ी से बढ़ती जा रही है। तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित प्रमुख रोग निम्न होते हैं-

9-1-1 ekbxzsu jksx (Migrane)

माइग्रेन तंत्रिका तंत्र का एक जटिल रोग है। माइग्रेन रोग से ग्रस्त होने पर मनुष्य के सिर के आधे भाग में बहुत तीव्र वेदना रहती है इसलिए इसे हिन्दी भाषा में अधकपारी रोग भी कहा जाता है। इस अवस्था में सिर के किसी एक स्थान पर अथवा आधे भाग में बहुत तेज़ दर्द अथवा छनछनाहट रहती है। यह दर्द 2

घंटे से लेकर 72 घंटों तक लगातार बना रहता है और महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि, इस अवस्था में दर्द निवारक दवाईयों का प्रयोग भी प्रभावहीन रहता है। कुछ समय यह दर्द रहने के उपरान्त स्वतः ही ठीक हो जाता है, इस अवस्था को माइग्रेन रोग कहा जाता है। इस रोग से ग्रस्त होने पर निश्चित समयावधि पर रोगी को तीव्र सिरदर्द होने लगता है जो स्वतः ही ठीक होता है।

चित्र 9.1 माईग्रेन

हमें इस प्रकार समझना चाहिए कि सिर दर्द तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित एक सामान्य (Common Disorder) विकृति है जिससे ग्रसित मनुष्यों की संख्या बहुत अधिक है। वास्तव में यह एक बिमारी अथवा रोग नहीं हैं अपितु, यह शरीर में हो रही किसी असहज अथवा प्रतिकूल घटना या क्रिया की प्रतिक्रिया होती है जो यह सूचना देती है कि कुछ ऐसा घटित हो रहा है ''जो शरीर अथवा मन के लिये प्रतिकूल, अनुपयुक्त, असामान्य एवं अस्वाभाविक है और जिसके प्रभाव से शरीर की सामान्य क्रियाएँ बाधित हो रही हैं''। इस अवस्था का परिणाम **fljnnZ** के रूप में प्रकट होता है। कभी यह सिरदर्द कम समय के लिए होता है तो कभी यह लम्बे समय तक चलता रहता है जिसे माइग्रेन की संज्ञा दी जाती है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

ekbxsu jksx ds izeq[k y{k.k -

1) सिर में भारीपन अथवा तेज़ दर्द होना।
2) शरीर की चयापचय दर, रक्तचाप, हृदय गति एवं श्वसन दर सामान्य से अधिक होने के साथ बेचैन एवं उग्र रहना।
3) सदैव स्वयं को तनावग्रस्त, समस्याओं एवं कठिनाइयों से घिरा अनुभव करना।
4) स्वभाव असामान्य रूप से चिड़चिढ़ा, क्रोधी, परेशान एवं ईर्ष्यायुक्त हो जाना।
5) अधिक समय नकारात्मक चिन्तन, उलझनों और तनाव से ग्रस्त रहने के साथ रात्रि की नींद बाधित हो जाना।
6) समस्याओं के समक्ष स्वयं को असहज एवं असक्षम अनुभव करना और निर्णय क्षमता कमज़ोर हो जाना।
7) शरीर तेज़हीन एवं ऊर्जाहीन होने के साथ शरीर का वजन कम हो जाना।

bl izdkj mijksDr y{k.k ekbxsu jksx ds y{k.k gksrs gSA

fVIi.kh

9-1-2 ofVZxks jksx (Vertigo)

चित्र 9.2 वर्टिगो रोग

यह तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित एक गंभीर रोग किन्तु सामान्य रोग है। गंभीर से अर्थ है कि इस रोग से ग्रस्त होने पर मस्तिष्क की क्रियाविधि बाधित हो जाती है और मस्तिष्क का शरीर पर नियंत्रण कम हो जाता है। जबकि, सामान्य से अभिप्राय यह है कि चिकित्सकों की मान्यता के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत व्यक्ति अपने जीवन में इस अवस्था को अनुभव करते हैं। इस प्रकार इस रोग की समाज में व्यापकता बहुत है। 'वर्टिगो' लैटिन भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ होता है घूमना अथवा चक्कर आना। अर्थात् वह अवस्था जिसमें रोगी व्यक्ति को चक्कर आने लगते हैं और दिमागी असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, वर्टिगो रोग कहलाता है।

यद्यपि, यह रोग वृद्धावस्था में अधिक पाया जाता है किन्तु, वर्तमान समय में अधिक चिन्ता, तनाव, उच्चरक्तचाप, अनिद्रा और तनाव आदि कारकों के फलस्वरूप कम उम्र के व्यक्तियों और विशेष रूप से शिक्षार्थियों में भी यह रोग बहुत तेज़ी से बढ़ता जा रहा है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

ofVZxks jksx ds izeq[k y{k.k %

1) चक्कर आने के साथ मस्तिष्क घूमने लगता है और आँखों के सामने अंधेरा छा जाना।
2) शरीर में अचानक बहुत अधिक पसीना आना।
3) मस्तिष्क का सही प्रकार से कार्य नहीं करना और चेतनाहीन हो जाना।
4) व्यक्ति का स्वयं को असन्तुलित एवं अस्थिर अनुभव करना।
5) अचानक भय से ग्रस्त हो जाना।
6) आवाज देने पर भी सुनाई ना देना और प्रतिउत्तर नहीं करना।

bl izdkj mijksDr y{k.k ofVZxks jksx dks izdV djrs gSaA

9-1-3 vfunzk (Insomnia)

निद्रा को मनुष्य के लिए ईश्वर का दिया एक वरदान माना जाता है। रात्रि में भली प्रकार निद्रा का आना एक स्वस्थ व्यक्ति की प्रमुख पहचान होती है। निद्रा इस संसार के किसी भी प्राणी के लिए थकान से मुक्ति प्राप्त करने का सबसे सरल किन्तु, प्रभावशाली साधन होता है। मनुष्य भी निद्रा के द्वारा दिनभर की समस्याओं और थकान से मुक्ति प्राप्त करते हुए एक नई ऊर्जा प्राप्त करता है। किन्तु, अत्यधिक मानसिक तनाव, मन में दबी हुई इच्छाएँ, कुंठा अथवा दिनभर के कटु अनुभव के कारण जब रात्रिकाल में मनुष्य गहरी निद्रा से वंचित होने लगता है अथवा उसकी निद्रा में बार-बार बाधा उत्पन्न होती है, वह अवस्था 'अनिद्रा रोग' कहलाती है।

वर्तमान समय में यह रोग बहुत तेज़ी से समाज में फैलता जा रहा है। इस रोग को उत्पन्न करने में एवं बढ़ाने में उत्तेजक आहार का सेवन, पाचन अथवा तंत्रिका तंत्र की विकृति, प्रतिकूल स्थान जैसे बहुत गर्मी-सर्दी,

ध्वनि, दुर्गन्ध, मानसिक तनाव, दबी इच्छाएं एवं कुंठा आदि महत्त्वपूर्ण कारण होते हैं। इस रोग से ग्रस्त होने पर सिरदर्द, तनाव, थकान, उच्चरक्तचाप और मधुमेह आदि गंभीर रोगों की संभावनाएं बढ़ जाती है। इस रोग से मुक्ति प्राप्त करने के लिए मनुष्य नशीली दवाइयों अथवा पदार्थों का सेवन भी करने लगता है किन्तु, इनके सेवन से समस्या अधिक जटिल और गंभीर हो जाती है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

1) रात्रिकाल में निश्चित समय पर गहरी निद्रा न आना।

2) एक बार निद्रा आने पर जल्दी ही निद्रा टूट जाना और पुनः प्रयास करने पर भी निद्रा नहीं आना।

3) प्रातःकाल उठने पर ताज़गी, स्फूर्ति और ऊर्जा की कमी अनुभव करना।

4) दिनभर थकान, कमज़ोरी, सुस्ती और आलस्य बना रहना।

5) एकाग्रता का अभाव, सिरदर्द, स्मरण शक्ति कमज़ोर होना और कार्यों में अरुचि उत्पन्न होना।

bl idkj mijkDr y{k.k vfunk jkx dh vkj lidr djr gA

9-1-4 vkRedfUnrk] Loyhurk (Autism)

यह तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित एक विकार है जो, प्रमुख रूप से विद्यार्थियों और छात्र जीवन में अधिक होता है। इसे आत्मविमोह और स्वपरायणता आदि नामों से भी जाना जाता है। इस अवस्था में व्यक्ति का सामाजिक व्यवहार बहुत सीमित हो जाता है और वह अधिक समय स्वयं में ही खोया रहता है। इस रोग से ग्रस्त होने पर मस्तिष्क की रचनात्मक क्रियाविधि बाधित हो जाती है और बुद्धि का रचनात्मक विकास रुक जाता है। इस रोग के प्रति जागरुकता बढ़ाने के लिए प्रतिवर्ष 2 अप्रैल को विश्व स्वलीनता जागरुकता दिवस मनाया जाता है।

यह रोगावस्था आगे चलकर गंभीर रूप धारण करने लगती है, जिसमें व्यक्ति स्वयं की बात दूसरों से कह पाने में असक्षम होने लगता और ना ही दूसरों के बात सही प्रकार समझ पाता है। इससे ग्रस्त व्यक्ति दूसरों से सही प्रकार संवाद नहीं कर पाता है और अजीब क्रियाएँ करने लगता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

vkRedfUnrk jkx d ieq[k y{k.k %

1) अधिक समय तक स्वयं में ही खोया रहना।

2) सामाजिक निष्क्रियता होना।

3) अपनी समस्याओं को दूसरों के साथ साझा नहीं करना।

4) बौद्धिक क्रियाशीलता कम होने के साथ रचनात्मकता का अभाव होना।

5) अर्थहीन क्रियाएँ करना और उन्हें दोहराते रहना।

6) आवाज देने पर भी सुनाई ना देना और प्रतिउत्तर नहीं करना।

bl idkj mijkDr y{k.k vkRedfUnrk jkx dk lidr djr gA

9-1-5 i{kk?kkr ;k ydok jkx (Paralysis)

चित्र 9.3 अर्दित (Facial Paralysis)

यह तंत्रिका तंत्र और मांसपेशियों से सम्बन्धित रोग है। इस रोग में शरीर के किसी एक भाग अथवा अधिक भागों की मांसपेशियाँ क्रियाहीन होकर कार्य करने में असमर्थ हो जाती है जिसके कारण शरीर का वह भाग कार्य करने अथवा घूमने-फिरने में असमर्थ हो जाता है।

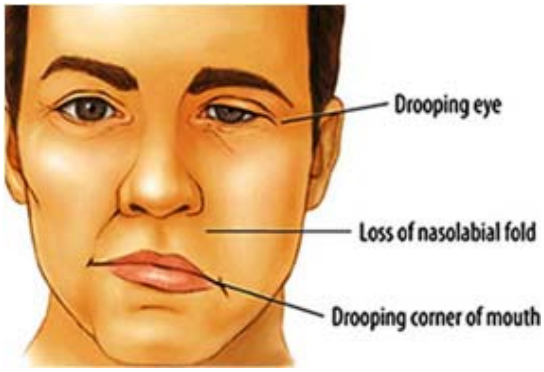

वर्तमान समय में यह रोग समाज में बहुत तेज़ी से फैल रहा है, जिसमें अचानक शरीर के किसी एक भाग अथवा सम्पूर्ण शरीर पर मस्तिष्क का नियंत्रण समाप्त हो जाता है। यद्यपि कुछ अवस्था एवं कुछ सीमा तक यह नियंत्रण पुनः प्राप्त भी हो जाता है किन्तु, पूर्णरूप से नियंत्रण प्राप्त नहीं होता है, यह रोगावस्था पक्षाघात अथवा लकवा कहलाती है। इस रोग में निम्न लक्षण प्रकट होते हैं-

i{kk?kkr ;k ydok jkx ds izeq[k y{k.k %

1) शरीर के किसी भाग में सुन्नपन होना और उस भाग पर मस्तिष्क का नियंत्रण हट जाना।

2) सिर में तेज़ दर्द के साथ किसी भाग में अजीब अनुभूति होना।

3) सांस लेने में कठिनाई और मुँह से लार टपकना।

4) सोचने-समझने, पढ़ने-लिखने और देखने-बोलने में कठिनाई होना।

5) व्यवहार में बदलाव के साथ असामान्य व्यवहार करना।

bl izdkj mijksDr y{k.k i{kk?kkr vFkok ydok jkx dk ladsr djrs gSaA

9-1-6 ikfdZlu jkx (Parkinson's)

चित्र 9.4 पार्किंसन रोग

पार्किंसन रोग तंत्रिका और पेशीय तंत्र से जुड़ा एक गंभीर रोग होता है। इस रोग का आरम्भ बहुत धीरे-धीरे होता है जिससे रोगी को यह पता ही नहीं चल पाता है कि कब वह इस रोग की चपेट में आ गया है। जब चिकित्सक रोगी से पूर्व की घटनाओं के विषय में पूछते हैं तो उन्हें लगता है कि रोग के लक्षण उनमें पिछले काफी समय से आ रहे हैं परन्तु, इन पर गंभीरता से ध्यान नहीं दिया गया। इसलिए इस रोग को चुपके से आने वाला रोग (Silent Disease) की संज्ञा दी जाती है।

इस रोग का आरम्भ कम्पन से होता है जो पहले यदा-कदा ही होता है और धीरे-धीरे बढ़ता हुआ गंभीर रूप धारण कर लेता है। इस रोग

की चपेट में आने के उपरान्त रोगी व्यक्ति का शरीर के अंगों पर नियंत्रण कम हो जाता है और अंगों में प्रतिक्षण तीव्र कम्पन बना रहता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

ikfdlu jkx d ie[k y{k.k %

1) इस रोग का सबसे प्रमुख लक्षण हाथों-पैरों व शरीर के अन्य अंगों में सूक्ष्म कम्पन होना होता है जो धीरे-धीरे बढ़ता हुआ शरीर के अन्य अंगों में फैलने लगता है।

2) लिखने में कठिनाई होना, सुई में धागा पिरोने में कठिनाई होना और हाथों को स्थिर करने में कठिनाई होना।

3) शरीर के अन्य भागों की मांसपेशियों में सूक्ष्म कम्पन प्रारम्भ होने के साथ इन अंगों पर मस्तिष्क का नियंत्रण कम होना।

4) पाचन क्रिया अव्यवस्थित होने के साथ लम्बे समय तक कब्ज़ रोग से ग्रस्त होना।

5) शरीर की कार्यक्षमता में कमी आने के साथ श्रम करने में श्वास फूलना, चक्कर आना और खड़े होने पर अचानक आँखों के सामने अंधेरा छा जाना।

bl idkj mijkDr y{k.k 'kjhj e ikfdlu jkx dk ldr djr gA

9-1-7 vYtkbej jkx (Alzieimers')

यह तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित एक ऐसा रोग जिसमें व्यक्ति की स्मरण शक्ति बहुत कमज़ोर हो जाती है और उसे कुछ भी स्मरण नहीं रह पाता है, एल्जाइमर रोग कहलाता है। यद्यपि, पूर्वकाल में इसे वृद्धावस्था का लक्षण माना जाता था किन्तु, वर्तमान समय में अनियमित दिनचर्या, विकृत खान-पान और तनाव आदि कारकों के फलस्वरूप यह रोग शिक्षार्थियों और युवाओं में भी बहुत तेज़ी से बढ़ रहा है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं-

vYtkbej jkx d ie[k y{k.k %

1) स्मरण शक्ति बहुत कमज़ोर होना, इस रोग का सबसे प्रमुख लक्षण है।

2) समय प्रबंधन का अभाव अर्थात् किसी भी कार्य करने में समय का ध्यान न रहना।

3) किसी भी कार्य के परिणाम का सही अनुमान नहीं कर पाना।

4) बौद्धिक एवं सामाजिक क्रियाशीलता कम हो जाना।

5) नये कार्य को सीख पाने में असमर्थ होना।

6) असामान्य व्यवहार करना जैस अचानक रोना, हँसना अथवा क्रोधित होना।

bl idkj mijkDr y{k.k vYtkbej jkx dk ldr djr gA

fVIi.kh

9-1-8 efuUtkbfVl jksx

यह तंत्रिका तंत्र से सम्बन्धित एक गंभीर रोग होता है जिसे, सामान्य भाषा में **fnekxh cq[kkj ;k efLr"dk&oj.k'kksFk** कहा जाता है। चिकित्सकीय मान्यता के अनुसार जब बैक्टीरिया, वायरस अथवा अन्य सूक्ष्म जीवों के संक्रमण के कारण मस्तिष्क एवं मेरुरज्जू को ढकने वाली झिल्लियों में सूजन आरम्भ हो जाती है, वह अवस्था **efuUtkbfVl** अथवा मस्तिष्कावरण शोथ अथवा दिमागी बुखार कहलाती है।

चूंकि मस्तिष्क मानव शरीर का सबसे महत्त्वपूर्ण एवं कोमल अंग होता है, अतः यह अवस्था शरीर के लिए बहुत गंभीर हाती है। इस अवस्था में व्यक्ति का स्वयं पर नियंत्रण नहीं रह पाता है और ग्रसित मनुष्य के लिए भ्रम की स्थिति उत्पन्न होने लगती है। इस रोग में निम्न लक्षण प्रकट होते हैं-

efuUtkbfVl jksx ds izeq[k y{k.k%

1) गर्दन में जकड़न व सिर में भारीपन के साथ तेज़ दर्द होना।
2) शरीर का तापक्रम बढ़ने के साथ बुखार आना।
3) मस्तिष्क का सही कार्य नहीं करना और भ्रम की स्थिति उत्पन्न होना।
4) ऊँची ध्वनि एवं प्रकाश को सहन करने में असक्षम होना।
5) स्वभाव में चिड़चिड़ापन, बेचैनी एवं अनिद्रा उत्पन्न होना।
6) शारीरिक कमज़ोरी के साथ मानसिक शिथिलता उत्पन्न होना।

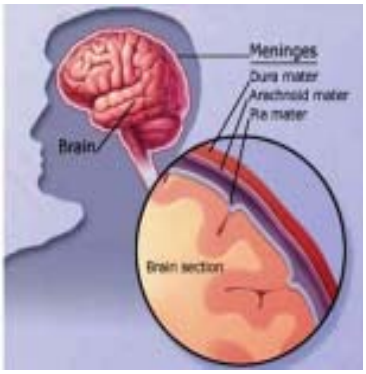

चित्र 9.5 मस्तिष्क के आवरण

bl izdkj mijksDr y{k.k efuUtkbfVl jksx dk ladsr djrs gSaA

9-1-9 fexhZ jksx (Epilepsy)

मनुष्य के मस्तिष्क की अनियंत्रित अवस्था मिर्गी रोग कहलाती है, जिसमें मनुष्य असामान्य व्यवहार करने लगता है। वास्तव में मस्तिष्क की तंत्रिकाएं, जिन्हें न्यूरॉन कहा जाता है, एक-दूसरे के साथ विद्युत आवेगों से संचार करती हैं किन्तु, जब इन तंत्रिकाओं के विद्युत आवेग बाधित हो जाते हैं तब मस्तिष्क असामान्य एवं अजीब व्यवहार करने लगता है, जिसे मिर्गी रोग की संज्ञा दी जाती है। इसमें दौरे पड़ने लगते हैं जो कभी कम समय के लिए होते हैं तो कभी लम्बे समय तक चलते हैं।

चित्र 9.6 मिर्गी

वास्तव में हमारे शरीर के सभी अंगों एवं अंगों की सभी क्रियाओं पर मस्तिष्क का प्रतिक्षण नियंत्रण रहता है। परन्तु, वह अवस्था जब शरीर के अंग और क्रियाओं पर मस्तिष्क का नियंत्रण नहीं होता है और मनुष्य की चेतना असन्तुलित होने से वह अजीब व्यवहार करने लगता है, वह अवस्था मिर्गी रोग कहलाती है। इस रोग में निम्न लक्षण प्रकट होते हैं-

fexh jkx d iie[k y{k.k %

1) मनुष्य का कुछ समय के लिए बेसुध अथवा चेतनाहीन हो जाना।

2) हाथों-पैरों अथवा सिर को असामान्य रूप से झटकना अथवा पटकना।

3) मस्तिष्क का सही कार्य नहीं करने के कारण मनुष्य के द्वारा असामान्य व्यवहार करना।

4) शरीर की मांसपेशियों का बहुत कड़ा अथवा बिल्कुल ढीला हो जाना और मनुष्य का अचानक गिर जाना।

5) स्वभाव में अस्थिरता आ जाना, भय-चिन्ता से ग्रस्त रहना और आत्मविश्वास का अभाव आदि लक्षण प्रकट होना।

इस प्रकार उपरोक्त लक्षण मिर्गी रोग का संकेत करते हैं।

bdkbZ ikB iz'u&9-2

रिक्त स्थान भरिए–

क) माइग्रेन .... तंत्र का एक जटिल रोग है।

ख) .... रोग होने पर अचानक शरीर के किसी एक भाग या संपूर्ण शरीर पर मस्तिष्क का नियंत्रण समाप्त हो जाता है।

ग) स्मरण शक्ति बहुत कमज़ोर होना .... रोग का एक प्रमुख लक्षण है।

9-2 rf=dk r= d jkxk dh ;kSfxd fpfdRlk

तंत्रिका तंत्र के प्रमुख रोगों जैसे माइग्रेन (सिरदर्द), वर्टिगो, अनिद्रा, आत्मकेन्द्रिता, पक्षाघात, पार्किंसंस, अल्ज़ाईमर, मेन्ज़ाइटिस और मिर्गी आदि के उपचार में अंग्रेज़ी दवाईयों का सेवन करने से विशेष लाभ प्राप्त नहीं हो पाता है अपितु, कुछ समय के लिए लक्षण कम होने से आराम की अनुभूति होती है किन्तु, रोग से स्थाई मुक्ति प्राप्त नहीं होती है। इसके साथ-साथ अंग्रेज़ी दवाईयों का शरीर एवं मन पर दुष्प्रभाव भी पड़ता है। इसके स्थान पर योग चिकित्सा के द्वारा तंत्रिका तंत्र के इन रोगों का स्थाई उपचार किया जा सकता है। तंत्रिका तंत्र के इन रोगों की योग चिकित्सा में मन को भी स्वस्थ एवं सकारात्मक बनाया जाता है।

मानव तंत्रिका तंत्र का मन के साथ बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। मन के स्वस्थ और सकारात्मक रहने से तंत्रिका तंत्र भी स्वस्थ एवं सक्रिय रहता है जबकि, मन में नकारात्मक विचार एवं भावनाएं उत्पन्न होने से तंत्रिका तंत्र के विभिन्न रोग जैसे माइग्रेन (सिरदर्द), वर्टिगो, अनिद्रा, आत्मकेन्द्रिता, पक्षाघात, पाकिंसंस, अल्ज़ाईमर, मेन्जाइटिस और मिर्गी आदि उत्पन्न हो जाते हैं। वर्तमान काल में इन रोगों की समाज में एक बाढ़ सी आयी हुई है। छोटी उम्र के बच्चों से लेकर व्यस्क और वृद्ध सभी आयु वर्ग के मनुष्यों में ऐसी समस्याएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। वर्तमान समय में मन की चंचलता बढ़ने के साथ मनुष्य में धैर्य का स्तर और भाव-संवेदनाएं समाप्त सी होती जा रही हैं। आपसी मतभेद दिनों दिन तेज़ी से बढ़ते जा रहे

fVIi.kh

हैं और सामंजस्य कम होता जा रहा है। मानवीय गुणों- सहानुभूति, क्षमा, दया और सरलता के ह्रास के साथ तामसिक वृत्तियां- क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या और द्वेष बढ़ते जा रहें हैं। इस क्रम में नई पीढ़ी अपने अलग सपनों की दुनिया के साथ नशे के जंजाल में जकड़ती जा रही है। ऐसी अवस्था में योग चिकित्सा बहुत लाभकारी प्रभाव रखती है। वास्तव में यौगिक क्रियाएँ मनुष्य के मन, मस्तिष्क और सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र को बहुत सकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं। तंत्रिका तंत्र रोगों की योग चिकित्सा इस प्रकार होती है-

9-2-1 ;e-fu;e dk ikyu djuk

योगसूत्रों के रचनाकार महर्षि पतंजलि अष्टांग योग का प्रारम्भ यम-नियम के साथ करते हुए कहते हैं-

;efu;ekluik.kk;keiR;kgkj/kkj.kk/;kulek/k;k·"Vko³xkfuAA

(पा0 यो0 सूत्र 2/29)

अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्टांग योग के आठ अंग हैं। यम मनुष्य को सामाजिक स्तर पर सकारात्मक बनाता है तो वहीं दूसरी ओर नियम का पालन करने से मनुष्य व्यक्तिगत स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बनता है। यम-नियम का पालन मनुष्य को हिंसा, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष एवं संग्रह की वृत्ति से मुक्त बनाता है। यम और नियम का जीवन में पालन करने से मनुष्य का मन स्वच्छ एवं मस्तिष्क शान्त-स्थिर बनता है। यम-नियम के पालन से मनुष्य के चारों ओर सकारात्मक ऊर्जा का घेरा बनने लगता है। वाणी में प्रभाव, आचरण में श्रेष्ठता और व्यवहार में दिव्यता आने लगती है। ऐसे साधक पुरुष की शारीरिक और मानसिक ऊर्जा सकारात्मक कार्यों की ओर उन्मुख होने लगती है तथा नकारात्मक भाव एवं तामसिक राक्षसी वृत्तियां स्वतः ही नष्ट होने लगती हैं। यम-नियम को व्रत के रूप में धारण कर पालन करने वाले मनुष्य का तंत्रिका तंत्र पूर्ण रूप से स्वस्थ, विकारमुक्त एवं उन्नत अवस्था में बना रहता है तथा ऐसे व्यक्ति का जीवन समाज के लिए एक आर्दश होता है और इससे सिरदर्द, माइग्रेन और मिर्गी आदि तंत्रिका तंत्र के रोगों में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। इस प्रकार यम-नियम का पालन करने से तंत्रिका तंत्र के रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है।

9-2-2 "kVde dk vH;kl

षट्कर्म की छः शोधन क्रियाएँ भी मानव तंत्रिका तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव रखती हैं। शोधन क्रियाओं में नेति, त्राटक और कपालभाति का अभ्यास अधिक लाभकारी प्रभाव रखता है।

चित्र 9.7 जल नेति क्रिया

नेति क्रिया से मस्तिष्क प्रदेश का शोधन होता है और नाड़ियाँ स्वच्छ होने का सकारात्मक प्रभाव तंत्रिका तंत्र पर पड़ता है। सिरदर्द एवं माइग्रेन रोग में नेति क्रिया का नियमित अभ्यास करने से विशेष लाभ प्राप्त होता है। इसी प्रकार पेरालइसिज़ एवं पार्किन्सन रोगी को भी नेति क्रिया का अभ्यास करने से नाड़ियों पर मस्तिष्क का सन्तुलन बढ़ने से लाभ प्राप्त होता है। अर्थ यह है कि नेति क्रिया तंत्रिक तंत्र के रोगों में विशेष लाभ प्रदान करता है।

त्राटक मानसिक एकाग्रता और स्थिरता प्राप्त करने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। मनुष्य की बिखरी ऊर्जा

एवं शक्तियाँ त्राटक क्रिया के अभ्यास से केन्द्रित होने लगती है। मस्तिष्क का अचेतन भाग भी जाग्रत अवस्था में आने लगता है। मानसिक तनाव, अनिद्रा, अस्थिरता, कमज़ोर स्मरण शक्ति एवं एकाग्रता का अभाव आदि विकारों में भी त्राटक क्रिया बहुत लाभकारी प्रभाव देती है। कपालभाति क्रिया का अभ्यास करने से प्रश्वास के रूप से गन्दगियां शरीर से बाहर निकलती है। इसके साथ-साथ सम्पूर्ण शरीर से सूक्ष्म स्तर पर प्राण ऊर्जा का प्रवाह होता है। कपालभाति का अभ्यास मस्तिष्क की न्यूरॉन सैल्स की क्रियाशीलता में भी वृद्धि करता है। इस प्रकार शोधन क्रियाओं के अभ्यास से तंत्रिका तंत्र स्वच्छ और क्रियाशील बनता है तथा इससे सम्बन्धित सभी रोग दूर होते हैं।

9-2-3 ;kxklukas dk vH;kl

योगासनों के अभ्यास का फल महर्षि पतंजलि द्वंद्व सहन करने की क्षमता में वृद्धि के रूप में वर्णित करते हुए कहते हैं-

rrks }U}kufHk?kkr%AA

(पा0 यो0 सूत्र 2/48)

यहाँ पर समझने का विषय यह है कि, आसन का अभ्यास मस्तिष्क की सहन शक्ति और धैर्य क्षमता में वृद्धि करता है। इससे एक ओर जहाँ शरीर की क्षमता विकसित होती है तो वहीं दूसरी ओर मन तथा बुद्धि में धैर्य का विकास होता है। इसके परिणामस्वरूप सांवेगिक स्थिरता (Emotional Balance) प्राप्त होती है और विपरीत परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता विकसित होती है। ताड़ासन, तियर्क ताड़ासन, वृक्षासन, वातायनासन, सर्वांगासन, शीर्षासन, भुजंगासन, मत्स्यासन, सिंहासन, वृक्षासन, गरुड़ासन आदि आसनों का अभ्यास तंत्रिका तंत्र के रोगों में बहुत लाभ प्रदान करता है। विभिन्न शोध यह स्पष्ट करते हैं कि सिंहासन का अभ्यास तंत्रिका तंत्र के रोगों में विशेष लाभकारी प्रभाव रखता है। इनके साथ-साथ मंत्रों का वाचन करते हुए सूर्यनमस्कार का नियमित अभ्यास करने से सम्पूर्ण शरीर एवं मस्तिष्क में रक्त संचार भली-भांति होता है और तंत्रिका तंत्र के रोग दूर होते हैं।

चित्र 9.8 सूर्य नमस्कार

सूर्यनमस्कार का अभ्यास करने से मेरुदण्ड स्वस्थ एवं लचीली बनती है, साथ ही साथ सम्पूर्ण शरीर में फैली तंत्रिकाएँ सक्रिय एवं स्वस्थ बनती है जिसके परिणामस्वरूप मनुष्य के तंत्रिका तंत्र के सभी रोग दूर होते हैं और तंत्रिका तंत्र ऊर्जावान एवं रोगमुक्त बनता है।

इसके साथ-साथ ध्यानात्मक आसनों जैसे- पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन और शवासन का अभ्यास करने से मस्तिष्क एवं तंत्रिकाओं को आराम के साथ-साथ स्थिरता और ऊर्जा भी प्राप्त होती है, जिसका मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन

fVIi.kh

आसनों के अभ्यास से मानसिक तनाव, सिर दर्द, माइग्रेन, बेचैनी और अनिद्रा जैसे मानसिक रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है। ताड़ासन और त्रिकोणासन आदि आसनों के अभ्यास से तंत्रिका तंत्र के रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है।

9-2-4 ik.kk;ke dk vH;kl

प्राणायाम का अभ्यास मनुष्य के तंत्रिका तंत्र को बहुत सकारात्मक रूप में प्रभावित करता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से अधिक मात्रा में शुद्ध प्राणवायु अर्थात् ऑक्सीजन शरीर की कोशिकाओं को प्राप्त होती है। नियमित प्रातःकाल प्राणायाम का अभ्यास करने से मस्तिष्क की न्यूरॉन सैल्स को पर्याप्त ऑक्सीजन प्राप्त होती है, जिससे एक ओर जहाँ मस्तिष्क की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है तो वहीं दूसरी ओर इन महत्त्वपूर्ण कोशिकाओं की औसत आयु में वृद्धि होती है। सार रूप में स्पष्ट करें तो नियमित प्राणायाम के अभ्यास से मस्तिष्क की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता में वृद्धि होती है, स्मरण शक्ति तीव्र और दीर्घ बनती है, मानसिक एकाग्रता बढ़ने के साथ कठिन और जटिल विषयों को समझना आसान हो जाता है और सिरदर्द, माइग्रेन, मिर्गी, पक्षाघात और पार्किंसन आदि रोगों में शीघ्र लाभ प्राप्त होता है। प्राणायाम के लाभों को स्पष्ट करते हुए महर्षि पतंजलि योगसूत्र में कहते हैं-

rr% {kh;rs izdk'kkoj.keA

(पा0 यो0 सूत्र 2/52)

अर्थात् प्राणायाम का अभ्यास करने से अज्ञानता का आवरण नष्ट होता है और ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न होता है। चूंकि मनुष्य के अधिकांश रोगों, समस्याओं और दुखों की जननी अविद्या के साथ नकारात्मक चिन्तन करना होता है जिससे सिर दर्द, माइग्रेन, मिर्गी और पार्किन्सन जैसे गंभीर रोग उत्पन्न होते हैं। जबकि, प्राणायाम का अभ्यास करने से प्राणऊर्जा में वृद्धि के साथ-साथ अविद्या का नाश और आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है अतः प्राणायाम का अभ्यास इन सभी विकारों में बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। योग ग्रन्थों के अनुसार भस्त्रिका प्राणायाम का नियमित अभ्यास करने से शरीर में स्थित 72 हजार सूक्ष्म नाड़ियों की शुद्धि होती है और इड़ा-पिगंला नाड़ी में सन्तुलन स्थापित होने के साथ-साथ प्राण का प्रवाह सुषुम्ना नाड़ी में होने लगता है। यह स्वास्थ्य के साथ-साथ अध्यात्म की भी एक उच्चतम् अवस्था होती है। इसी प्रकार भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास मस्तिष्क में सकारात्मक स्पंदन उत्पन्न करता है। नाड़ी शोधन प्राणायाम का अभ्यास तंत्रिका तंत्र के रोगों में बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। नाड़ी शोधन, अनुलोम-विलोम, शीतली, शीत्कारी, उज्जायी और भ्रामरी आदि प्राणायामों का विधिपूर्वक और नियमित अभ्यास करने से सिरदर्द, माइग्रेन, मिर्गी और पार्किन्सन जैसे रोग जीवन में नहीं आते हैं।

9-2-5 iR;kgkj dk ikyu

इन्द्रियों पर संयम का मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन्द्रियों पर असंयम अथवा प्रज्ञापराध से तंत्रिका तंत्र विभिन्न प्रकार के विकारों से ग्रस्त हो जाता है। इन्द्रियों पर संयम करते हुए प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्योदयपूर्व उठने, प्रातःकालीन भ्रमण, नियमित योगाभ्यास, सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्त्विक आहार का सेवन करने से मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र स्वस्थ बना रहता है। इन्द्रियों पर संयम

करते हुए साप्ताहिक अथवा शुक्ल-कृष्ण पक्ष में एक बार विधिपूर्वक उपवास करने से सिरदर्द, अनिद्रा, माइग्रेन, मिर्गी और पार्किन्सन आदि तंत्रिका तंत्र के रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है।

9-2-6 /kkj.kk ,oa ifHkko

योग में धारणा, ध्यान और समाधि को एक साथ सम्मिलित रूप से 'संयम' की संज्ञा दी जाती है। मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर धारणा एवं ध्यान सीधे और स्पष्ट रूप से अनुकूल प्रभाव डालती हैं। सकारात्मक सोच-विचार को धारण करने एवं अच्छे विषयों का ध्यान करने से तंत्रिका तंत्र स्वस्थ एवं विकारमुक्त बनता है जबकि, नकारात्मक सोच-विचार एवं गलत संगत तंत्रिका तंत्र को रोग ग्रस्त बना देती है। वर्तमान काल में बढ़ते तंत्रिकीय रोगों का मूल कारण नकारात्मक चिन्तन के साथ नकारात्मक वातावरणीय दशाएं है। वर्तमान काल में समाज में बढ़ती हिंसात्मक घटनाओं के दुष्प्रभाव से मन और मस्तिष्क दोनों ही विकारों से ग्रस्त हो रहे हैं। ऐसी अवस्था में ही सिरदर्द, माइग्रेन, मिर्गी और पार्किन्सन आदि रोग उत्पन्न होते हैं, जबकि, इसके विपरीत सकारात्मक धारणा, ध्यान सकारात्मक अनुभूतियाँ करने से मस्तिष्क और सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र स्वस्थ एवं ऊर्जावान बनने के साथ सभी रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है।

इसके साथ-साथ तंत्रिका तंत्र के रोगों में निम्न अपथ्य आहार का त्याग करते हुए पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए -

d½ viF; vkgkj- चाय, कॉफी, चीनी, नमक आदि उत्तेजक एवं तामसिक पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। मैदा और मैदे से बने सभी खाद्य पदार्थों, कृत्रिम रंगों एवं रसायनों से युक्त बाजार की मिठाईयों व खाद्य पदार्थों का प्रयोग त्याग देना चाहिए। धूम्रपान, मद्यपान और नशीली दवाईयों को संकल्पशक्ति के साथ पूर्णरूप से त्याग देना चाहिए।

[k½ iF; vkgkj- प्रातःकाल उषापान करते हुए प्रातःकालीन भ्रमण और नियमित योगाभ्यास करने के साथ अंकुरित आहार का सेवन, जौ, चना, गेहूँ को मिलाकर चौकर सहित रोटियों का सेवन, गाय का घी, बादाम, अखरोट, अंजीर, मुनक्का, पिस्ता आदि सूखे मेवे, मौसम के अनुसार हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे मैथी, पालक, लौकी, तुरई, परवल, करेला, नींबू आदि का सेवन करना चाहिए। मौसमी ताजे फलों जैसे मौसमी, सन्तरा, अनार, आम, पपीता, अंगूर आदि का पर्याप्त सेवन करना चाहिए।

bdkbZxr iz'u&9-2

सही/ग़लत बताइए–

क) यौगिक क्रियाएँ मनुष्य के मन, मस्तिष्क और संपूर्ण तंत्रिकातंत्र को बहुत सकारात्मक रूप से प्रभावति करती है। ( )

ख) प्राणायाम का अभ्यास करने से मस्तिष्क की न्यूरॉन सैल्स को पर्याप्त ऑक्सीजन प्राप्त होती है। ( )

ग) तंत्रिका तंत्र रोग में साप्ताहिक उपवास नहीं करना चाहिए। ( )

vkiu D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में तंत्रिका तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) के प्रारम्भ में तंत्रिका तंत्र के प्रमुख रोगों का सामान्य परिचय देते हुए इनके लक्षणों का उल्लेख किया गया है और इसके उपरान्त इन रोगों की यौगिक चिकित्सा का वर्णन किया गया है। इकाई (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि यम-नियम का पालन करने से मनुष्य का आचरण श्रेष्ठ बनता है और अच्छी आदतों का सकारात्मक प्रभाव सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र पर पड़ता है। यौगिक षट्कर्म का नियमित अभ्यास करने से शरीर का शोधन होता है जिससे तंत्रिकाओं की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है और तंत्रिका तंत्र स्वस्थ एवं रोग मुक्त बनता है। तंत्रिका तंत्र को स्वस्थ, सक्रिय और रोग मुक्त बनाने में योगासन और सूर्यनमस्कार बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका वहन करते हैं। शरीर संर्वधनात्मक आसनों का अभ्यास करने से मस्तिष्क की ओर रक्त तीव्र बनता है जबकि, रीढ़ लचीली बनती है। इसके साथ-साथ ध्यानात्मक आसनों का अभ्यास करने से मस्तिष्क की कार्यकुशलता और क्रियाशीलता में अभिवृद्धि होती है। इसका सकारात्मक प्रभाव सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र पर पड़ता है।

इकाई (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि, तंत्रिका तंत्र के रोगों में प्राणायाम का अभ्यास विशेष लाभ प्रदान करता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से एक ओर जहाँ शुद्ध प्राणवायु तंत्रिका कोशिकाओं (न्यूरॉन) को प्राप्त होती है तो वहीं दूसरी ओर चित्त शान्त और स्थिर बनता है। इसी प्रकार इन्द्रियों पर संयम करते हुए सुव्यवस्थित दिनचर्या का पालन करना और सकारात्मक विषयों को ग्रहण करने से इन रोगों में शीघ्र लाभ प्राप्त होता है। सकारात्मक चिन्तन के साथ विचारों में स्थिरता और अपने चारों ओर वातावरण में सकारात्मक अनुभूतियाँ करने से तंत्रिका तंत्र के सभी रोग समूल नष्ट होते हैं। इकाई (यूनिट) में यह भी समझाया गया है तंत्रिका तंत्र के रोगों में आहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए और रोगावस्था से मुक्त होने के लिए रोगी व्यक्ति को सदैव अपथ्य आहार का त्याग करते हुए पथ्य आहार का ही सेवन करना चाहिए।

bdkbZ d vUr e i'u

1) तंत्रिका तंत्र के रोगों की यौगिक चिकित्सा का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2) अनिद्रा रोग के प्रमुख लक्षण लिखते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन कीजिए।
4) पार्किन्सन रोग के प्रमुख लक्षण समझाते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा लिखिए।
5) टिप्पणियां लिखिए-
   क) माइग्रेन की यौगिक चिकित्सा ख) तंत्रिका तंत्र के रोगों में यम-नियम का महत्त्व

bdkbZxr i'uksa d mÙkj

9-1 क) तंत्रिका, ख) पक्षाघात, ग) अल्जाइमर

9-2 क) सही, ख) सही ग) गलत

10

योग एवं स्वास्थ्य

शिक्षार्थियों, आपने अब तक वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक, योग के स्वरूप एवं उसके अस्तित्व को समझा। मुख्य उपनिषद् श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार जीवन कैसा हो जाना। साथ ही आपने जाना कि भारतीय परम्परा में योग का स्परूप एक जीवनशैली है जिसके अन्तर्गत मनुष्य दिव्य जीवन जीता हुआ धर्म, अर्थ काम और अंत में मोक्ष को प्राप्त कर लेता है और वास्तव में मनुष्य जीवन का सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य भी कदाचित् यही है कि वह योगमयी जीवन जीते हुए, परमात्मा को प्राप्त करे। योग का व्यक्ति के स्वास्थ्य के साथ परस्पर सम्बंध है। यदि मनुष्य को योगमयी जीवनशैली की शिक्षा प्राप्त है, तो वह निस्संदेह शारीरिक मानसिक सामाजिक और आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ एवं सुखी रह सकता है। इस इकाई (यूनिट) में हम स्वास्थ्य, प्रभावित करने वाले कारक, स्वस्थ वृत्त, साफ सफाई स्वच्छता आदि पर चर्चा करेंगे और जानेंगे कि किस प्रकार योग के माध्यम से समग्र स्वास्थ्य प्राप्त कर सकेंगे।

mí';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन के पश्चात् आप :

- स्वास्थ्य का अर्थ बता सकेंगे और अवधारणा सहित विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों का वर्णन कर सकेंगे;
- साफ, सफाई एवं स्वच्छता पर प्रकाश डाल सकेंगे तथा स्वच्छता का स्वास्थ्य के साथ परस्पर सम्बंध समझा सकेंगे;
- स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों को सूचीबद्ध कर, संक्षिप्त में उल्लेख कर सकेंगे;

टिप्पणी

- स्वस्थवृत्त, दिनचर्या एवं रात्रिचर्या आदि को समझा सकेंगे और जीवन में अपनाने में सक्षम होंगे;
- ऋतुचर्या का वर्णन कर सकेंगे और जीवन में अनुप्रयुक्त कर सकेंगे।

10-1 LokLF; dh vo/kkj.kk

शिक्षार्थियों, स्वास्थ्य का सामान्य अर्थ है– स्वयं में स्थित होने की स्थिति अर्थात् वह व्यक्ति, जो प्रसन्नचित्त है रोगों से मुक्त है, शारीरिक रूप से सुदृढ़ है और अपने सभी कार्यों को उचित ढंग से सम्पदित कर रहा है, स्वस्थ है और उसकी इस स्थिति को स्वास्थ्य कहते हैं।

स्वास्थ्य जीवन का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। आपने यह कहावत अवश्य सुनी होगी– 'पहला सुख निरोगी काया'। यह कहावत भले ही पुरानी हो गई है, किन्तु स्वास्थ्य आज भी हमारी सबसे पहली आवश्यकता है। यदि हम स्वस्थ हैं, तो जीवन में स्वतः ही प्रसन्नता बनी रहती है तथा हमारे जीवन के दैनिक व विशेष कार्यों में कठिनाई का आभास नहीं होता।

स्वास्थ्य हम सभी के लिए अनिवार्य है। क्या आप जानते है, कि आप स्वस्थ हैं? आइये निम्नांकित बिंदुओं के आधार पर इसका पता लगाएँ–

- आप स्वयं को प्रसन्न महसूस कर रहे हैं।
- शरीर के सभी अंग उचित ढंग से बिना किसी दर्द के कार्य कर रहे है।
- शरीर पूर्णतः सामान्य है।
- मन मानसिक तनाव व चिंता से रहित है।
- शरीर में स्फूर्ति एवं ऊर्जा है।
- किसी कार्य का निर्देश पाते ही तुरंत उस कार्य का करने के लिए तैयार हो जाते है।
- अपने कर्त्तव्यों का उचित पालन कर रहे हैं आदि।

यदि उपरोक्त बिंदुओं पर आपका उत्तर हाँ है, तो आप निश्चित ही स्वस्थ हैं।

क्या आप जानते हैं कि स्वस्थ होना क्यों आवश्यक है? इसे हम निम्नांकित बिंदुओं से समझ सकते हैं :

- सुखमय जीवन जीने के लिए स्वस्थ होना आवश्यक है।
- स्वस्थ होने पर ही शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक क्षमताओं का सर्वाधिक उपयोग किया जा सकता है।
- स्वस्थ व्यक्ति एक स्वस्थ समाज और स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण कर सकता है।
- अपने आसपास स्वस्थ वातावरण तैयार सकता है, जहाँ अमन–चैन व शान्ति के साथ परिवार तथ अन्य लोग रह सकते हैं।

उपर्युक्त बिंदुओं के आधार पर आप स्वास्थ्य की महत्वता को भलीभांति समझ गये होंगे।

10-1-1 LokLF; dh ifjHkk"kk

समय–समय पर वैज्ञानिकों अपने–अपने मतों के अनुसार स्वास्थ्य को परिभाषित किया है। यहाँ पर हम चिकित्सा की प्राचीन पद्धति–आयुर्वेद में आचार्य सुश्रुत के अनुसार दी गई परिभाषा पर विचार करेंगे और वर्तमान में विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा दी गई सर्वमान्य परिभाषा को समझेंगे, तो आइये पहले प्राचीन चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद में आचार्य सुश्रुत की परिभाषा पर विचार करें–

lenk"k% lekfXu'p le/kkr% ey% fØ;kA
ilUukRefn;euk LoLFk bR;Hkh/kh;rAA

अर्थात् व्यक्ति की वह स्थिति, जिसमें उसके सभी दोष धातु, अग्नि, मल क्रिया आदि सम हों और इन्द्रिय, मन व आत्मा प्रसन्न हो, स्वास्थ्य कहलाती है। व्यक्ति के सभी दोष सम, इन्द्रियाँ, मन व आत्मा प्रसन्न हो तो– ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ माना गया है।

आइये इस परिभाषा का संक्षिप्त में विवेचन करें–

1. **lenk"k%** शरीर की सभी क्रियाओं को संचालित करने वाले तीन दोष (वात, पित्त तथा कफ) की सम अवस्था।
2. **lekfXu%** मानव शरीर में पाँच भूताग्नि– (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व आकाश), सात धातुएँ– (रक्त, मांस, मेष, अस्थि, मज्जा तथा शुक्र) और जठराग्नि अर्थात् 13 अग्निओं की सम अवस्था।
3. **le/kkr%** सात धातुएँ, जो शरीर को पुष्ठ एवं बलवान बनाती हैं।
4. **le eyfØ;k%** शरीर से मल, मूत्र, पसीने का सतत् नियमित निर्माण तथा निष्कासन।
5. **bfUn;k dh ilUurk%** मानव शरीर की पाँच कर्मेन्द्रियां और पाँच ज्ञानेद्रियां सभी अपने कार्य को प्रसन्नतापूर्वक करें।
6. **eu%** मन में प्रसन्नता का भाव हो।
7. **vkRek%** आत्मा भी प्रसन्न हो, संतोष का भाव हो।

fo'o LokLF; laxBu dk vuqlkj LokLF; dh ifjHkk"kk% आयुर्वेद हमारी प्राचीन चिकित्सा पद्धति है। इसमें दी गई परिभाषा पर हमने विचार–विमर्श किया। अब वर्तमान में सर्वमान्य स्वास्थ्य की परिभाषा पर चर्चा करते हैं जिसे विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दिया गया है।

According to WHO, "Health is a state of complete physical, mental and social well being, not merely the absence of disease or infirmity."

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार स्वास्थ्य सिर्फ रोग, दुर्बलता की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि एक पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वस्थता की स्थिति है।

टिप्पणी

शिक्षार्थियों, यहाँ एक बात ध्यान से समझना अति आवश्यक है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दी गई इस परिभाषा की विभिन्न विद्वानों द्वारा बहुत आलोचना की गई और कहा कि कोई भी व्यक्ति पूर्ण स्वस्थ नहीं है। किन्तु आलोचना के बाद भी सबसे अधिक मान्यता इसी परिभाषा की है। हालांकि इसमें आध्यात्मिक पक्ष को और जोड़े जाने की आवश्यकता है। यदि इसी प्रकार परिभाषित किया जाये कि स्वास्थ्य सिर्फ रोग या दुर्बलता की अनुपस्थिति नहीं बल्कि पूर्ण शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक सुख की स्थिति है तो यह निस्संदेह बेहतर होगा।

10-1-2 LoLFk 0;fDr d y{k.kk dk o.ku

शिक्षार्थियों, आप यह कैसे जानेंगे कि कोई व्यक्ति स्वस्थ है। अथवा नहीं। सामान्य तौर पर एक चिकित्सक व्यक्ति के लक्षणों के आधर पर यह पता लगा लेते हैं कि वह स्वस्थ है या फिर अस्वस्थ। एक सामान्य व्यक्ति या हम कैसे पता लगाएं कि हम या अन्य व्यक्ति स्वस्थ है? आइये स्वस्थ पुरूष के मुख्य लक्षणों को जानें:

1. मुख पर प्रसन्नता हो और मन बेचैन न हो।
2. आत्म विश्वास हो, सहनशील, धैर्यवान, साहसी तथा जीवन के प्रति उत्साही हो।
3. स्मरण शक्ति अच्छी हो।
4. अपनी क्षमताओं का ज्ञान हो।
5. शरीर के सभी अंग व समस्त प्रणाली ठीक से काम कर रहे हों।
6. मन व ज्ञानेन्द्रियां सशक्त हो।
7. व्यवहार सौम्य एवं सभ्य हो, क्रोधयुक्त न हो।
8. दिनचर्या संयमित, नियमित और नियंत्रित हो।

उपयुक्त लक्षणों के आधार पर यह कह सकते हैं कि ऐसा व्यक्ति स्वस्थ है।

स्वथ्य व्यक्ति के लक्षणों पर अलग–अलग विद्वानों ने प्रकाश डाला है। यहाँ पर हम कुछ विद्वानों के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों को समझने का प्रयास करेंगे–

vkpk;Z Jhjke 'kekZ d vuqlkj LoLFk iq:"k d y{k.k % आचार्य श्रीराम शर्मा ने स्वस्थ पुरूष के निम्नांकित लक्षण बताएँ हैं :

1. मन प्रसन्न हो।
2. मुख मण्डल पर तेज और आशा की झलक हो।
3. आँख की ज्योति व श्रवण शक्ति ठीक हो।
4. मन कार्यों में रूचि रखें।

5. कार्य करने में किसी प्रकार की तकलीफ न हो।

6. पेट संबंधी किसी प्रकार के विकार न हों।

vkpk;Z okXHkV d vuqlkj LoLFk iq:"k d y{k.k % शिक्षार्थियों आचार्य वाग्भट्ट ने स्वस्थ पुरूष के निम्नांकित लक्षणों का वर्णन किया है :

1. स्वस्थ पुरूष नित्य हितकारी आहार और विहार करने वाला होता है।

2. वह देख–भाल और सोच–समझकर कार्य करने वाला होता है।

3. सबको समान भाव से देखने वाला होता है।

4. सत्य वृत्त वाला होता है।

5. बलवान होकर भी क्षमा करने वाला होता है।

6. बुद्धिमानों की संगति करने वाला होता है।

7. विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि) में आसक्त अर्थात् फंसने वाला नहीं होता।

इस प्रकार उपर्युक्त लक्षणों को आपने पढ़ा और आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों को जाना।

vkpk;Z prqjlsu d vuqlkj LoLFk 0;fDr d y{k.k % आपने स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों का अध्ययन किया, साथ ही दो विद्वानों– आचार्य श्रीराम शर्मा एवं आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार भी अलग–अलग स्वस्थ व्यक्तियों के लक्षणों को जाना। अब हम आचार्य चतुरसेन के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति के लक्षण जानेंगे :

1- {k/kk % जिसकी क्षुधा अर्थात् भूख ठीक हो, भोजन में रूचि हो, मिर्च मसाले से रहित, फल–फूल वाला भोजन प्रिय हो।

2- l;k l % जिसकी प्यास ठीक हो अर्थात् प्यास लगती हो और वह निर्मल जल तथा फलों के रस से तृप्त हो जाए।

3- nkr % दांत स्वच्छ हो, जीवन पर्यन्त बने रहें।

4- vk[k % साफ, पानीदार व निर्मल हो।

5- Ropk % त्वचा अर्थात् चमड़ी चिकनी व नर्म हो। अंगुली से दबाने पर तत्काल गड्ढ़ा भर जाए।

6- uk[ku % नाखून उज्ज्वल, गुलाबी रंग के हो। दाग व लकीरों वाले न हो।

7- cky % बाल स्वाभाविक रंगवाले, पूरे भरावदार हो। गंजे न हो।

टिप्पणी

8- **KkusfUnz;k¡ %** ज्ञानेन्द्रियां स्वाभाविक और सचेतन हो।

9- **uhan %** नींद भरपूर आती हो, थकान मिटाने वाली हो।

10- **eu %** मन सदा स्वाभाविक आनन्द में मग्न रहने वाला हो।

11- **ew= %** स्वच्छ, उज्ज्वल, सुनहरी रंग युक्त, गंधरहित हो।

12- **i lhuk %** पसीना गंधरहित हो।

10-1-3 LokLF; j{kk ds N% fu;e

स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों का अध्ययन करने के पश्चात् अब आप अपने स्वस्थ होने और लक्षणों के विषय में अवश्य सोच रहे होंगे। यहाँ हम यह स्पष्ट कर दें कि एक स्वस्थ व्यक्ति का यह पहला कर्त्तव्य है कि वह अपने आपको स्वस्थ बनाए रखे। स्वास्थ्य रक्षा के लिए छः ऐसे मुख्य नियम हैं जिनका पालन करने से स्वास्थ्य की रक्षा हो सकती है—

1. शरीर के पोषण हेतु संतुलित आहार;
2. उचित मात्रा में शुद्ध वायु और प्रकाश;
3. समय—समय पर नियमानुसार मल, मूत्र और पसीने का शरीर से निष्कासन;
4. सर्दी व गर्मी से शरीर की रक्षा;
5. उचित व्यायाम, परिश्रम और विश्राम;
6. विषाक्त द्रव्यों और कीटाणुओं से बचाव, साफ सफाई, स्वच्छता।

bdkbZxr iz'u&10-1

सही/गलत बताइए —

1. मुख पर प्रसन्नता और मन में बेचैनी स्वस्थ व्यक्ति का लक्षण है। ( )
2. आचार्य चतुरसेन के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति का एक लक्षण ये भी है कि उसका मन सदा स्वाभाविक आनन्द में मग्न रहने वाला होता है। ( )
3. स्वास्थ्य रक्षा के छः नियमों में से एक नियम यह भी है कि व्यक्ति के शरीर से शुद्ध वायु और प्रकाश का निष्कासन हो। ( )

10-2 LoLFkoÙr] fnup;kZ ,oa jkf=p;kZ

शिक्षार्थियों, स्वस्थ रहने के लिए 'स्वस्थवृत्त' को समझना अति आवश्यक है सबसे पहले यह जानते हैं कि स्वस्थवृत्त से क्या तात्पर्य है?

स्वस्थवृत्त दो शब्दों से मिलकर बना है– स्वस्थ + वृत्त ''स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक कर्म करना या नियम पालन करना स्वस्थ वृत्त कहलाता है। स्वस्थ का अर्थ है–निरोगी जीवन और वृत्त का अथ है– कर्म। अर्थात् निरोगी जीवन जीने के लिए, जो कर्म किये जाते हैं या नियमों का पालन किया जाता है उसे स्वस्थवृत्त कहते हैं। सुखमय जीवन जीने के लिए स्वस्थवृत्त को अपनाना आवश्यक है। अब आप समझ गये होंगे कि स्वस्थवृत्त हम सभी के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यदि हम सभी स्वस्थवृत्त का पालन करें तो निश्चित ही स्वस्थ व सुखमय जीवन जी सकते हैं। ये निम्नांकित तीन प्रमुख नियम और जीवन के उपस्तम्भ भी हैं :

(i) आहार

(ii) निद्रा

(iii) बह्मचर्य।

आइये, अब स्वस्थवृत्त की परिभाषा जानें–

10-2-1 LoLFkoÙk dh ifjHkk"kk

स्वस्थवृत्त वह विज्ञान है जिसके द्वारा मनुष्य का शारीरिक तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य उन्नत रहता है और स्वस्थ मनुष्य का स्वास्थ्य स्थिर बना रहता है।

> "It may be defined as the science of preserving and improving health."
>
> ''स्वास्थ्य रक्षण एवं सुधार संबंधी विज्ञान– स्वस्थवृत्त विज्ञान कहलाती है।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में स्वस्थवृत्त को हाइजीन (Hygiene) कहा गया है। हाइजीन वह विज्ञान है जिसमें मानव स्वास्थ्य को उन्नत रखने और स्वस्थ मनुष्य के स्वास्थ्य को स्थिर बनाने का अध्ययन किया जाता है।

इस प्रकार स्वस्थवृत्त के दो प्रायोजन हैं–

(i) स्वस्थ मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षा करना

(ii) रोगी के रोगों को दूर करना।

LoLFkoÙk dh vko';drk ,oa egRo % शरीर में सदैव जैव–भौतिक व जैव–रासायनिक क्रियाएँ निरन्तर क्रियाशील रहती हैं। इन क्रियाओं में परस्पर संबंध बनाए रखना स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य है। शिक्षार्थियों जब हानिकारक जीवाणु व विजातीय द्रव्य शरीर में प्रवेश कर जाते है तो वे हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करने की चेष्टा करते हैं। इस प्रकार अनिष्ट प्रभावों से रक्षा करने के लिए, हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रमादी

टिप्पणी

हो जाती है। जिससे हम स्वस्थ बने रहते हैं। इन अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों से निकलने के लिए हमारे आहार–विहार और आचार–विचार कैसे हों यह ज्ञान स्वस्थवृत्त से लिया जा सकता है।

10-2-2 fnup;k

शिक्षार्थियों, आपने स्वस्थवृत्त, इसकी आवश्यकता एवं महत्व को स्वास्थ्य के परिप्रेक्ष्य में जाना। स्वस्थवृत्त आयुर्वेद का सबसे महत्वपूर्ण अंग है, इसके दो प्रयोजन हैं :

(i) स्वस्थ के स्वास्थ्य की रक्षा करना

(ii) रोगी के रोगों को दूर करना

दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या स्वस्थवृत्त का ही एक अंग है– आइये अब दिनचर्या को समझने का प्रयास करें। दिनचर्या क्या है?

दिनचर्या शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– दिन + चर्या। दिन का अर्थ है– दिवस और चर्या का अर्थ है– चरण अथवा आचरण। अर्थात् प्रतिदिन किये जाने वाले आचरणों को दिनचर्या कहा जाता है। अब आप समझ गये होंगे कि दिनचर्या एक आदर्श समय सारणी है जो प्रकृति की क्रमबद्धता को अपनाती है तथा उसी का अनुसरण करने का निर्देश प्रदान करती है। दिनचर्या के अन्तर्गत हितकर आहार–विहार व आचार विचारों को रखा गया है।

संस्कृत में दैनिक कार्यक्रम को दिनचर्या कहते हैं। आयुर्वेद के अनुसार दिनचर्या शरीर और मन का अनुशासन है, इससे रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत होती है। शरीर में समयानुसार विजातीय द्रव्यों का निष्कासन होता है, जिससे शरीर शुद्धि होती है।

fnup;k dh ifjHkk"kk

नित्य किये जाने कर्मों की एक क्रमबद्ध श्रृंखला दिनचर्या कहलाती है।

किसी व्यक्ति के द्वारा प्रतिदिन नियमित रूप से किये जाने वाले आचरण जिनसे वह समग्र स्वास्थ्य प्राप्त करता है दिनचर्या कहलाते हैं।

प्रातःकाल जागरण से लेकर सोने के पूर्व तक के सभी आवश्यक आचरण अथवा कर्म दिनचर्या के अंतर्गत आते हैं।

fnup;k dk egRo

1. **lexz LokLF; dh izkfIr %** दिनचर्या के नियम पालन से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। व्यक्ति निश्चित भाव से रहता है क्योंकि उसका प्रत्येक कार्य समयानुसार निश्चित है।

2. **lEHkkfor jksxksa ls iwoZ lqj{kk %** दिनचर्या के पालन से सम्भावित रोगों को होने से पहले रोका जा सकता है क्योंकि नियम पालन में जीवनी शक्ति प्रबल है।

टिप्पणी

3. **fnup;k }kjk 0;fDrRo dk ifj"Ñr gkuk %** दिनचर्या के पालन से मन, शरीर, इन्द्रियों पर नियंत्रण स्थापित होता है जिससे व्यक्तित्व परिष्कृत होता है।

4. **ikphu ijEijk dk lajf{k.k %** प्राचीन चिकित्सा पद्धति– आयुर्वेद में स्वस्थवृत्त के अंतर्गत दिनचर्या का वर्णन आता है। यह ऋषि मुनियों द्वारा पालन करने वाली प्राचीन परम्परा है। इसके नियम पालन से जहाँ हमें समग्र स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। वहीं हमारी वर्षों पुरानी संस्कृति का भी संरक्षण होता है।

fnup;k % रोगों से दूर रहने, असमय बुढ़ापे से बचने, स्वस्थ और तरोताजा रहने के लिए किसी व्यक्ति की दिनचर्या में प्रतिदिन कौन–कौन से कर्म अथवा नियम शामिल हैं आइये जाने :

- **ikr%dky tkxj.k %** स्वस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन ब्रह्म मुहूर्त सूर्योदय से दो घण्टे पूर्व में जागने का समय बताया गया है। अतः ब्रह्म मुहूर्त में जागना चाहिए। इस समय में वातावरण स्वच्छ, शान्त, सात्विक और मधुर सुगन्धित वायु वाला होता है। ऐसे समय जागने से मन प्रसन्नता से भर जाता है। शरीर को नई ताजगी स्फूर्ति और ऊर्जा प्राप्त होती है।
  - ब्रह्म मुहूर्त में जागकर बिस्तर पर बैठे।
  - ईश्वर अथवा अपने ईष्ट देव का ध्यान करें।
  - मन ही मन प्रार्थना करें कि अब तक के जीवन के लिए हे ईश्वर आपका धन्यवाद आगे के लिए शुभ मार्ग प्रशस्त करें ताकि सबका मंगल हो और हमारा भी जीवन सार्थक हो, ऐसा संकल्प लें।

- **Hkw ueu %** बिस्तर से धरती पर पैर रखने से पूर्व धरती माता को नमन करें, जो हमारा माता की तरह पालन करती हैं।

- **eq[k /kou %** सभी ऋतुओं में स्वच्छ जल से मुख धोएं। इससे नींद खुल जाती है और ताजगी आ जाती है।

- **m"kkiku %** प्रतिदिन प्रातः शौच से पूर्व जल पीने को उषापान कहते हैं। मुख धोने के पश्चात् कम से कम एक गिलास जल पीएँ। धीरे–धीरे इसे बढ़ाकर चार गिलास किया जा सकता है। उषापान के लिए
  - खालीपेट उकड़ बैठकर उषापान करना चाहिए।
  - गर्मियों के दिनों में रात्रि को तांबे के पात्र में भरकर रखे गये जल का पान करना चाहिए।
  - अन्य ऋतुओं में गुनगुने गर्म जल का सेवन उपर्युक्त माना जाता है।
  - उषापान सदैव बिना कुल्ला किये करना चाहिए।

- उषापान के हम सभी के लिए बहुत लाभदायक है। इससे कब्ज नहीं रहती; शौच खुलकर आता है। उत्साह में वृद्धि होती है; काम विकार व वीर्य संबंधी रोग दूर होते हैं; उदर रोग ठीक हो जाते हैं; सिर दर्द व नेत्र विकार दूर हो जाते हैं।

टिप्पणी

- **'kkp %** उषापान के पश्चात् शौच जाना चाहिए। सदैव सूर्योदय से पूर्व मलत्याग (शौच) करना। दीर्घायु प्रदान करता है। शौच में बैठने के लिए भारतीय विधि सर्वोत्तम है।

  शौच के पश्चात् हाथ, पैर, मुँह धोना चाहिए। इससे सारा आलस्य भाग जाता है। थकावट दूर होती है।

  मुख में पानी भरकर कुल–कुल करते हुए नेत्रों में स्वच्छ जल के छींटें मारकर नेत्रों को धोना चाहिए। इससे नेत्रों व आसपास की मांसपेशियां स्वस्थ व मजबूत होती हैं। नेत्रों की ज्योति बढ़ती है।

  इस प्रकार आचमन से मुखशुद्धि हो जाती है। हालांकि निम्न स्थितियों में हमेशा आचमन करना चाहिए–

  - भोजन करने के पूर्व तथा भोजन के पश्चात्।
  - सोकर उठने के पश्चात्।
  - छींकने के पश्चात्।
  - देव पूजन के पूर्व।

- **nUr /kkou %** दांतों को साफ–स्वच्छ रखने के लिए सदैव प्रातः और सोने से पूर्व सफाई करनी चाहिए। इसके लिए दातून, मंजन, पेस्ट आदि व्यवहार में ला सकते हैं।

  यदि दंत धावन में नीम की एक पेन/पेंसिल के बराबर लम्बी व मोटी स्वस्थ, ताजा दातून प्रतिदिन की जाय तो दांत मसूड़े व मुख को आसानी से स्वस्थ रखा जा सकता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने अपने मुख स्वास्थ्य (Oral Health) में यह कहा है कि यदि नियमित रूप से नीम की दातुन की जाती रहे तो अन्य रोगों के साथ–साथ मुख गुहा के कैंसर जैसे महा विनाशकारी रोग की संभावना खत्म हो जाती है।

  दंत धावन में मुख की दुर्गंध दूर होती है, दांत व मसूड़े स्वस्थ होते हैं। कफ का नाश होता है और मुख व जिव्हा संबंधी रोग नहीं होते।

  दंत धावन के दौरान ही जिव्हा को भी दातून से, उल्टे पेस्ट ब्रुश से या अपने हाथ की दो–तीन अंगुलियों से साफ कर लेना चाहिए।

  समय–समय पर या सप्ताह में कम से कम एक बार रात्रि को सोने से पूर्व दंत धावन के लिए पिसा नमक हल्दी व सरसों के तेल का उपयोग करना चाहिए। इसके लिए आधा चम्मच पिसा नमक, चम्मच का दसवां भाग हल्दी और दो–तीन बूंद सरसों के तेल का मिश्रण बनाकर धीरे–धीरे अपने दांतों और मसूड़ों में लगाते हुए मालिश करें। यदि संभव हो तो बिना कुल्ला किए सो जाएँ सुबह नियमानुसार कुल्ला करें तो इसका लाभ दस गुना बढ़ जाता है। दांत और मसूड़े मजबूत चमकदार, स्वस्थ बने रहते हैं। पायरिया रोग भी हो तो खत्म हो जाता है।

> **ukV %** जिनका रक्तचाप उच्च (High Blood Pressure) रहता है वे तुरन्त गुनगुने पानी से कुल्ला कर लें।

;kx ,o LokLF;

- **vH;x ¼ekfy'k½** ¾ प्रतिदिन शरीर की मालिश करना बहुत आवश्यक है। प्रतिदिन तेल मालिश करने से:
  - शरीर स्वस्थ, सुन्दर व दृढ़ होता है।
  - त्वचा सुन्दर व चमकदार होने लगती है।
  - असामयिक बुढ़ापा दूर होता है।
  - आलस्य दूर होता है, निद्रा ठीक आती है।

- **;kfxd vH;kl ¼0;k;ke ,o ;kx½** ¾ वह अभीष्ट कर्म या अभ्यास जो शरीर को स्वस्थ, सुन्दर और निरोगी बनाता है, बल–वृद्धि कर दृढ़ता और स्थिरता प्रदान करता है, शारीरिक व्यायाम एवं योग कहलाता है।

  यदि प्रतिदिन कम से कम 30 मिनट का यौगिक अभ्यास किया जाए तो जहाँ फेफड़े, हृदय, मस्तिष्क आदि पूर्ण स्वस्थ व ऊर्जावान बने रहते हैं, वहीं दूसरी ओर जीवनशैली संबंधी होने वाले रोग मोटापा, मधुमेह, कोलेस्ट्रॉल, श्वास, दमा, रक्तचाप, तनाव, एलर्जी आदि समाप्त हो जाती है और रोगी ठीक हो जाते हैं।

  - व्यक्ति को नियमित रूप से यौगिक अभ्यास करना चाहिए।
  - रोग की अवस्था, मन की अवस्था और खाना खाने के पश्चात्, अभ्यास बिल्कूल न करें। अथवा योग अनुदेशक के निर्देशन में ही करना चाहिए।

- **Luku** ¾ प्रतिदिन स्नान करना बहुत आवश्यक है। स्नान से शरीर शुद्धि हो जाती है, रोमकूप खुल जाते हैं, आलस्य व निद्रा रोग दूर भाग जाते हैं। चित्त शांत एवं मन प्रसन्न हो जाता है। स्वाध्याय में रूचि बढ़ती है। भूख में वृद्धि होती है।

  क्या आप प्रतिदिन स्नान करते हैं? यदि हाँ, तो आपको उपर्युक्त लक्षणों का अनुभव भी होता होगा।

  लेकिन एक बड़ा प्रश्न भी है, क्या कभी आपके मन में स्नान न करने की इच्छा भी उत्पन्न हुई है। जी हाँ शिक्षार्थियों ऐसे समय में जब आप किसी रोग से ग्रसित हो, विशेष चिंता में हो, परेशान हो, मन उग्र व अशांत हो, तो स्नान की इच्छा नहीं होती और स्नान करना भी नहीं चाहिए। अन्यथा रोग बढ़ने की संभावना रहती है।

  स्नान कैसे हो? यह जानना भी आवश्यक है। स्नान जल, वायु व प्रकाश से किया जाता है। शरीर के समस्त अंगों को जल के द्वारा धोकर शुद्ध करना जलीय स्नान कहलाता है। इसमें सर्वथम जल सिर पर डालने हेतु सिर नवाकर दो–तीन लोटा जल सिर पर डालना प्रारम्भ करना चाहिए। ऐसा करने से मस्तिष्क की गर्मी पैरों के माध्यम से निकल जाती है। तत्पश्चात् पूरे शरीर पर जल डालते हुए शोधन करना चाहिए।

  वायु/पवन स्नान में पूरे शरीर को वायु का सेवन कराना चाहिए।

टिप्पणी

- **/kwi Luku %** धूप स्नान के लिए धूप में नंगे बदन बैठकर या लेटकर धूप लेनी चाहिए।

  प्रातःकाल सूर्योदय के बाद की धूप स्नान के लिए सर्वोतम मानी जाती है। लेकिन बहुत तेज या जलती हुई धूप में स्नान नहीं करना चाहिए अन्यथा त्वचा झुलस जाती है।

  वैसे जलीय स्नान प्रतिदिन नियमित रूप से करना चाहिए।

- **oL= /kkj.k** : स्नान के पश्चात् सदैव साफ–स्वच्छ, सुन्दर और ऋतु के अनुकूल और आरामदायक वस्त्रा धारण करने चाहिए। अच्छे वस्त्र पहनने से सुन्दरता एवं प्रसन्नता में वृद्धि होती है, आकर्षण व्यक्तित्व में बढ़ोतरी होती है।

  सामान्यतः गर्मियों में सफेद व हल्के रंग के और सर्दियों में गहरे रंग के तथा ऊनी वस्त्र धारण करने चाहिए।

- **d'k ilk/ku** : स्नान व वस्त्र धारण करने के बाद बालों में कंघा कर, बाल संवारने चाहिए। बाल हमारी सुन्दरता में वृद्धि करते हैं और व्यक्तित्व को प्रभावी बनाते हैं। आवश्यकतानुसार सरसों का तेल भी उपयोग में लाना चाहिए।

- **b= o lx/k dk i;kx** : मनुष्य को समय व ऋतु अनुसार सुगन्धित पुष्पों और प्राकृतिक इत्र का प्रयोग करना चाहिए। आप अपने वस्त्रों पर इत्र का प्रयोग कर सकते हैं और अपने घर व कार्य स्थलों पर पुष्प गुच्छ रख सकते हैं। इनकी सुगन्ध से मन प्रसन्न रहता है। परिणामस्वरूप आयु में वृद्धि होती है तथा एक विशेष आकर्षण उत्पन्न होता है।

- **vkHkw"k.k] ef.k] ekyk vkfn /kkj.k djuk** : स्त्रियां सोने व चांदी के तरह–तरह के आभूषण, मणि, मालाएँ पहनती हैं। कुछ पुरूष भी कुछ आभूषण जैसे चेन, अंगूठी, कलाई में घड़ी, माला आदि पहनने के शौकीन होते हैं। इनके पहनने से सुन्दरता बढ़ जाती है, चेहरे पर चमक आ जाती है, आकर्षण बढ़ जाता है। इन सबके परिणामस्वरूप मनुष्य की जीवन शक्ति में वृद्धि होती है और आयु बढ़ जाती है।

- **vtu de** : अंगुली या शलाका से नेत्रों में औषधि (काजल) लगाने को अंजन कर्म कहते हैं। अंजन से नेत्र प्रक्षालन अर्थात् आँखों में दिनभर की भरी धूल, मिट्टी गन्दगी सब बाहर निकल जाती है और स्वच्छ, निर्मल व चमकदार दिखते हैं। जिससे सुन्दरता स्वतः ही बढ़ जाती है।

  थके होने पर, भोजन के तुरंत बाद, उल्टी होने पर, रात्रि जागरण के पश्चात् ज्वर व सांस रोग में अंजन का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

- **Hkkstu** : स्वास्थ्य को उत्तम बनाए रखने, शरीर के विकास और वृद्धि के लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक है। भोजन सदैव सही मात्रा में, उचित समय पर ऋतु अनुसार लेना चाहिए। दिनचर्या के अंतर्गत प्रातः 9.00 बजे तक नाश्ता (जलपान) दोपहर 1.00 बजे तक भोजन सायं 4.00 बजे तक पुनः जलपान और रात्रि 8.00 बजे तक रात्रि भोजन ले लेना चाहिए।

  आयुर्वेद में भोजन के संबंध में कहा गया है कि (i) पौष्टिक, सात्विक, संतुलित तथा प्रकृति के अनुकूल भोजन करना चाहिए। (ii) भोजन सदैव भूख लगने और पहले से किये गये भोजन के पचने के बाद

ही करना चाहिए। (iii) हल्का एवं सुपाच्य भोजन सदैव आधे पेट खाना चाहिए। इसका 1/4 भाग पानी और शेष 1/4 भाग वायु के लिए खाली रखना चाहिए।

शिक्षार्थियों, उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यदि भोजन किया जाता है तो शरीर पुष्ट होता है, उसमें वृद्धि होती है, रंग में निखार आता है, साथ ही शरीर में तीनों दोष व धातुएँ भी संतुलित बने रहते हैं और आरोग्यता प्राप्त होती है।

भोजन संबंधी सामान्य नियम और विस्तृत जानकारी आप अपने विषय सं. 2 के यौगिक आहार इकाई (यूनिट) में पहले ही पढ़ चुके हैं।

- **iku lsou** : भोजन के पश्चात् मुख में भुनी सौंफ व मिश्री डाल सकते हैं। यह पाचन के लिए भी उत्तम मानी जाती है और मुँह में ताजगी लाती है। यदाकदा आप सादे पान, मीठे पान का सेवन भी कर सकते हैं। पान के सेवन से मुख में निर्मलता, सुगंधि आती है और चेहरे पर कांति व सुन्दरता छाने लगती है। गले की व्याधियाँ नष्ट होती हैं।

  लेकिन ध्यान रहे पान सेवन की रोजाना आदत न डालें।

10-2-3 jkf=p;k

शिक्षार्थियों, सूर्य अस्त होने के उपरांत और रात्रि होने से पूर्व के समय को ही संध्याकाल कहते हैं। जो भी आवश्यक क्रियाएँ इस काल से प्रारम्भ होती हैं वे सभी रात्रिचर्या के अंतर्गत ही आती हैं। इसमें मुख्यता संध्योपासना, रात्रि भोजन, भोजन पश्चात् टहलना, रात्रि शयन आदि सम्मिलित हैं। आइये अब रात्रिचर्या के अंतर्गत आने वाले कर्मों अथवा नियमों को जानने का प्रयास करें–

- **lè;kikluk** : सूर्य अस्त होने के उपरांत, शरीर शुद्धि (गर्मी में स्नान और अन्य ऋतुओं में मुँह, हाथ पैर आदि धोकर) व जल आचमन कर अपने ईष्ट देव की पूजा अर्चना करनी चाहिए और फिर प्राणायाम एवं ध्यान करना चाहिए। नियमित और दीर्घकाल तक संध्योपासना से मनुष्य यश, बुद्धि, कीर्ति और संयम को प्राप्त करता है। सायंकाल में निद्रा, भोजन, मैथुन पठन–पाठन तथा मार्ग गमन को वर्जित माना गया है। इसकी आयुर्वेद में भी विस्तार से वर्णन मिलता है।

- **jkf= Hkkstu** : शिक्षार्थियों, अधिकांशतः लोग दिन में दो बार भोजन करते हैं और दो बार जलपान करते हैं, किन्तु कुछ लोग जो कड़ी मेहनत करते हैं, पसीना बहाते हैं, वे तीन बार भोजन करते हैं। खेत खलियानों में काम करने वाला किसान और कड़ी मेहनत करने वाला मजदूर ये दोनों वर्ग के लोग कार्य के दौरान, चूंकि बहुत अधिक कैलोरी ऊर्जा व्यय करते हैं अतः यह स्वाभाविक ही है कि उन्हें इसकी आपूर्ति के लिए तीन बार भोजन की आवश्यकता होगी।

  सामान्यतः रात्रि के प्रथम पहर में अर्थात् सोने से कम से कम दो घण्टे पूर्व हल्का और सुपाच्य भोजन कर लेना चाहिए। यदि आप अपने निर्धारित समय से लेट है तो रात्रि भोजन न लें बल्कि एक गिलास दूध, जौ का दलिया, सूप, फल आदि लेकर शयन करें।

टिप्पणी

- **Vgyuk] e[k o nkrk dh lQkbZ** : शयन करने से पूर्व कुछ नियमों को जानना अति महत्वपूर्ण है। आइये इन्हें जानें :

  (i) शयन के समय में और रात्रि भोजन के समय में दो से तीन घण्टे का अन्तर रखें।

  (ii) रात्रि भोजन के पश्चात् कुछ देर अवश्य टहलें, इससे भोजन पाचन आसानी से हो जाता है।

  (iii) शयन कक्ष में जाने से पूर्व एक बार अपने मुख व दांतों की सफाई अवश्य कर लें ताकि दांतों में फंसे भोजन के सूक्ष्म कण, मुख में दुर्गन्ध उत्पन्न न करें और दांत भी स्वच्छ व स्वस्थ रह सकें।

- **'kkfr 'k;u** : इसके पश्चात् शयन करने के लिए शांत भाव से, सभी विचारों से मुक्त होकर, शयन शैय्या पर बैठकर कोमलता से आँखे बंद करें और अपने जीवन के लिए ईश्वर को धन्यवाद दें। पूरे दिन में जो कुछ कार्य किया उस गलत और सही का चिंतन करें।

  यदि कुछ गलत व्यवहार या कर्म का आप अनुभव करते हैं, तो प्रण लें कि आगे भविष्य में इस प्रकार का व्यवहार अथवा कृत्य नहीं करेंगे और ईश्वर से सन्यार्ग पर चलने की प्रार्थना करें।

  इसके पश्चात् शवासन की स्थिति में बायीं करवट से लेटें और नेत्रों को कोमलता से बंद कर ईश्वर का ध्यान करते हुए सो जाएँ।

  - शयन स्थान पवित्र, साफ–स्वच्छ तथा हवादार होना चाहिए।
  - बिस्तर व पलंग आरामदायक होना चाहिए।
  - सोते समय सिर सदैव पूर्व अथवा दक्षिण दिशा की ओर रखना चाहिए।

bdkbZxr i'u&10-2

रिक्त स्थान भरिए :

1. स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक कर्म करना या नियम पालन करना ..... कहलाता है।
2. स्वस्थवृत्त के दो प्रयोजन हैं–

   (i) स्वस्थ मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षा करना।

   (ii) ..... के रोगों को दूर करना।

3. जब हानिकारक रोगाणु हमारे शरीर के अन्दर प्रवेश कर स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं, तो अनिष्ट प्रभावों से रक्षा के लिए हमारी ..... प्रभावी हो जाती है।
4. प्रतिदिन किये जाने वाले आचरणों को ..... कहते हैं।

टिप्पणी

5. स्वस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन ..... में जागना चाहिए।

6. प्रतिदिन प्रातः शौच से पूर्व जल पीने को ..... कहते हैं।

7. शयन स्थान पवित्र, साफ–स्वच्छ तथा ..... होना चाहिए।

10-3 _rp;k

ऋतुचर्या शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– ऋतु और चर्या अर्थात् ऋतु के अनुसार आहार विहार का पालन ऋतुचर्या कहलाता है।

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में ऋतुचर्या पर भी विशेष बल दिया गया है। यदि हम वर्ष भर देशभर में मनाए जाने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रमों, परम्पराओं और त्योहारों पर विचार करें तो यह देखेंगे कि हमारे पूर्वजों ने आहार–विहार व आचार–विचारों को उक्त परम्पराओं व त्योहारों के साथ जोड़ दिया है। यह वैज्ञानिक दृष्टि से उपयुक्त पाया गया है।

चित्र 10.1: मौसमी फल एवं सब्जी का उपयोग

आइये इसे अब ऋतु के अनुसार समझे। आयुर्वेद के अनुसार ऋतुचर्या के अंतर्गत कुल छः ऋतुएँ हैं–

(i) वर्षा

(ii) शरद

(iii) हेमन्त

(iv) शिशिर

(v) वसन्त

(vi) ग्रीष्म।

टिप्पणी

प्रत्येक ऋतु के अनुसार आहार–विहार का पालन कैसा हो, आइये जानें–

1. **o"kk _r|** : श्रावण–भाद्र पद मास (सामान्यतः जुलाई–अगस्त) का समय वर्षा ऋतु का है।

vkgkj	fogkj	lHkkfor jkx
• पुराने साठी चावल एवं जौ का सेवन करे।	• स्नेहन (शारीरिक अंगों पर तेल लगाना), स्वेदन (पसीना निकालना) और स्नान करना।	• पाचन शक्ति का क्षीण होना।
• जल उबालकर पिएँ।	• स्वच्छ वस्त्र धारण करें	• रक्त विकार
• भोजन के साथ घी, दूध का प्रयोग करें	• वस्त्रों को धूप में सुखाएँ।	• शारीरिक कमजोरी
• करेले, कद्दू, परवल लौकी, तोरई, मैथी, लहसुन आदि का प्रयोग करें।	• व्यायाम एवं सहवास अधिक न करें।	• त्वचा विकार
• पूति आहार का सेवन न करे।	• दिन में न सोए, रात्रि में ही सोएँ।	• जोड़ों का दर्द
• वर्षा या तालाब का जल सेवन न करें।	• अधिक पैदल न चलें।	• सूजन
• नये अन्न व शीतल जल व पेय का प्रयोग न करें।		• वायरस के रोग
• बासी भोजन का प्रयोग न करे।		

2. **'kjn _r|** % यह आश्विन एवं कार्तिक मास (सामान्यतः सितम्बर व अक्टूबर) का समय शरद ऋतु कहलाता है।

vkgkj	fogkj	lHkkfor jkx
• शाली एवं साठी चावल मूंग, जौ तथा गेहूं का सेवन करें।	• हल्के व स्वच्छ वस्त्र धारण करें।	• इस ऋतु में पित्त प्रधान वाले रोग जैसे बुखार, शरीर में जलन, सिर दर्द, चक्कर आना, एसिडिटी, कब्ज, त्वचा अधिक प्यास, के रोग होने की संभावनारहती है।
• आंवला, अंगूर आदि का सेवन करें।	• चन्दन आदि का लेप करें।	

• मीठे, हल्के, शीतल एवं तीखे रस वाले द्रव्यों का सेवन करें। • फलों का रस, नारियल पानी, सूखे मेवे का सेवन करें।	• चन्द्रमा की सौम्य किरणों का सेवन करें। • तेल मालिश और नियमित व्यायाम करें।	

चित्र 10.2: शरद ऋतु में सूखे मेवे का सेवन करे

• गो घृत का सेवन करें। • अधिक भोजन, तीक्ष्ण व अम्लीय पदार्थों का सेवन न करें। • अधिक तेल व वसायुक्त पदार्थों का सेवन न करें। • मैदा से बने भोज्य पदार्थों का सेवन न करें। • मद्यपान न करें। • दही व खीरा एक साथ व अधिक मात्रा में न खाएँ।	• धूप का सेवन न करें। • दिन में न सोएँ और रात्रि में न जागें। • क्रोध न करें। • धूप में न चलें।	

3. **geUr _r|½** मार्गशीर्ष– पौष मास (सामान्यतः नवम्बर एवं दिसम्बर) का समय हेमन्त ऋतु का है। शीतल हवाएँ चलती हैं।

vkgkj	fogkj	lHkkfor jkx
• घी, तेल, चिकनाईयुक्त, मीठा व भारी भोजन ग्रहण करें। • सूखे मेवे व इनसे बने पदार्थों का सेवन करें।	• आतप स्नान (धूप) का सेवन करें। • व्यायाम, योग, अभ्यास एवं अभ्यंग (मालिश) करें।	• शीतल हवा से त्वचा शुष्क हो जाती है। होंठ फट जाते हैं। हाथ व पैर शुष्क हो जाते हैं, एड़िया फट जाती हैं।

टिप्पणी

टिप्पणी

• नवीन धान्य; चावल, गेहूं आदि का सेवन करें।	• शिरो अभ्यंग, स्वेदन तथा अंजन करें।	
• पुष्टिकारक व बलवर्धक आयुर्वेदिक रस–रसायनों जैसे– च्यवनप्राश, अश्वगंध पाक, कोंचपाक आदि का सेवन करें।	• शीतल वायु का सेवन न करें।	
• वातवर्धक व हल्का आहार न करें।	• दिन में शयन न करें।	
• भूखे न रहे तथा अधिक उपवास न करें।	• मौसम के अनुसार वस्त्र पहनें।	

4. **f'kf'kj _rq¼** माघ–फाल्गुन (सामान्यतः जनवरी–फरवरी) मास का समय शिशिर ऋतु का है। वायु ठण्डी होती है। आकाश बादलों से आच्छादित रहता है। इसी कारण घना कोहरा छा जाता है।

vkgkj	**fogkj**	**lHkkfor jkx**
• चिकनाईयुक्त, घी, तेल युक्त मीठा, भारी गरम भोजन सेवन करें।	• आतप स्नान (धूप का सेवन) करें।	• सामान्यतः रोगों की संभावना नहीं होती।
• शक्तिवर्धक भोज्य पदार्थों का सेवन करें।	• व्यायाम, योग अभ्यास तथा अभ्यंग (मालिश) करें।	
• सूखे मेवे और इनसे बने पदार्थों का सेवन करें।	• ठंड से बचने के लिए मोटे एवं ऊनी वस्त्र पहनें।	
• दूध का सेवन विशेष रूप से करें।	• गर्म पानी से स्नान करें।	
• वातवर्धक, हल्का आहार न लें।	• शीतल वायु का सेवन न करें।	
• भूखे न रहें तथा अधिक उपवास न करें।	• शीत, वर्षा, शीत लहर और कोहरे से बचें।	

5. **olUr _rq¼** चैत्र–बैसाख (सामान्यतः मार्च–अप्रैल) मास का समय वसन्त ऋतु का है। इस ऋतु में नाना प्रकार के सुगन्धित पुष्पों की बहार आ जाती हे। सभी दिशाएँ रमणीय और पुष्पों से सुशोभित होती है। हल्की–शीतल, मन्द सुगन्धित वायु बहती है। पुष्पों पर भौंरे गुन्जार करते हैं। नाना प्रकार के पक्षी कूंजते, विहार करते फिरते हैं। वृक्ष नये–नये कोमल पत्ते धारण करते हैं। इस प्रकार नाना प्रकार के रंग–बिरंगे पुष्पों और हरे भरे पेड़–पौधे से सुशोभित प्रकृति के सौन्दर्य के कारण इसे ऋतुराज भी कहा जाता है। इस ऋतु में वातावरण स्वच्छ व निर्मल रहता है।

vkgkj	fogkj	l Hkkfor jkx
• साठी चावल, मूंग, गेहूं, दलिया आदि का सेवन करें।	• व्यायाम, यौगिक अभ्यास करें।	• खांसी, श्वास रोग, बदन दर्द भूख में कमी, पेट में भारीपन कब्ज और कफजन्य विकार आदि।
• कटु, तिक्त एवं कषाय रस प्रधान आहार का सेवन करें।	• बाग बगीचे में प्रातः और सायं भ्रमण करें।	
• जल में शहद डालकर सेवन करें।	• शरीर शुद्धि के लिए वमन, जलनेति तथा कुंजल करें।	
• पुराना जौ, गेहूं व चावल का सेवन करें।	• शीतल वायु का सेवन न करें।	
• नीम पत्तों का सेवन करें।	• दिन में न सोएँ।	
• शीतल पेय न पिएँ।		
• भूखे न रहें। देर से पचने वाला आहार न करें।		
• उपवास अधिक न करें।		
• अरबी, कचालू, उड़द का सेवन न करें।		

6. **xh"e _r|** : ज्येष्ठ–आषाढ़ (सामान्यतः मई–जून) मास का समय ग्रीष्म ऋतु का है। इस समय प्रचण्ड गर्मी होती है। वातावरण एवं भूमि गर्म रहती है। बहुत गर्म एवं तीक्ष्ण वायु बहती है।

vkgkj	fogkj	l Hkkfor jkx
• मधुर रस का सेवन करें	• ब्रह्ममुहूंत में उठें।	• रूखापन तथा कमजोरी, लू लगना, हैजा, खसरा, चेचक, उल्टी दस्त, ज्वर, नकसीर पीलिया, एनीमिया आदि।
• शुष्क शीत द्रव्य एवं स्निग्ध आहार लें।	• उषापान करें।	
• शालि चावल, जौ, मूंग, मसूर का सेवन अधिक करें।	• हल्के व सफेद रंग के कपड़े पहनें।	

टिप्पणी

• नारंगी, अनार, नीबूं एवं गन्ने का रस पिएँ।	• शीतल जल से स्नान करें।	

चित्र 10.3: ग्रीष्म ऋतु में फलों के रस का अधिक सेवन करे

• खरबूज, तरबूज, शहतूत आदि रसदार फलों का सेवन करें। • नारियल पानी व जलजीरा का सेवन करें। • भारी भोजन का सेवन न करें। • मद्यपान न करें। • उष्ण आहार न लें।	• भय व क्रोध से बचें। • धूप में नंगे सिर यात्रा न करें। • तीक्ष्ण गर्म वायु से बचें।	

अब आप समझ गये होंगे कि यदि आहार–विहार ऋतु के अनुसार रखा जाय तो आदर्श जीवनचर्या का पालन सुनिश्चित किया जा सकता हैं।

bdkbZxr iz'u&10-3

रिक्त स्थान भरिए :

1. ऋतु के अनुसार आहार–विहार का पालन .... कहलाता है।
2. वर्षभर में कुल .... ऋतुएँ होती हैं।
3. वसंत ऋतु का समय .... मास का है।
4. प्रचण्ड गर्मी किस ऋतु में आती है ....।

आपने क्या सीखा

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आपने –

- स्वास्थ्य और इसके विभिन्न पहलुओं को समझा।
- स्वस्थ व्यक्ति के लक्षणों को जाना।
- स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों को सूचीबद्ध करना सीखा और उनके विषय में संक्षिप्त में जाना।
- साफ–सफाई, स्वच्छता को जाना और इसके परस्पर सम्बन्ध को समझा।
- स्वस्थवृत्त, दिनचर्या एवं रात्रिचर्या को समझा और इनके महत्व को जाना।
- ऋतुचर्या के विषय में समझा और स्वास्थ्य के अंतर्गत इसकी भूमिका को जाना।
- स्वास्थ्य और इसके विभिन्न पहलुओं को समझने में सक्षम हो चुके हैं।
- जीवन में स्वस्थवृत्त, दिनचर्या, रात्रिचर्या और ऋतुचर्या को जीवन में अनुप्रयुक्त करने में सक्षम हो चुके हैं।

इकाई के अंत में प्रश्न

1. स्वास्थ्य की परिभाषा देते हुए, स्वास्थ्य की अवधारणा पर प्रकाश डालिए।
2. स्वस्थ व्यक्ति लक्षणों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों को सूचीबद्ध कर, संक्षिप्त में प्रकाश डालिए।
4. साफ–सफाई और स्वच्छता का स्वास्थ्य के साथ परस्पर संबंध है। इस तथ्य की विस्तार से विवेचना कीजिए।
5. स्वस्थवृत्त से क्या तात्पर्य है? दिनचर्या एवं रात्रिचर्या का जीवन में किस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है।
6. ऋतुचर्या से आप क्या समझते हैं? इसका विस्तार से वर्णन करते हुए महत्व का वर्णन कीजिए।

टिप्पणी

bdkbZxr iz'uksa ds mÙkj

10-1

1. ग़लत
2. सही
3. ग़लत

10-2

1. स्वस्थ वृत्त
2. रोगी
3. रोग प्रतिरोधक क्षमता
4. दिनचर्या
5. ब्रह्ममुहूर्त
6. उषापान
7. हवादार

10-3

1. ऋतुचर्या
2. छः
3. चैत्र–बैसाख (सामान्यतः मार्च–अप्रैल)
4. ज्येष्ठ–आषाढ़ (सामान्यतः मई–जून)

11

व्यावहारिक मनोविज्ञान

शिक्षार्थियों, व्यावहारिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान का व्यावहारिक (प्रयोगात्मक) स्वरूप है जिसके सिद्धान्तों से विभिन्न मानवीय समस्याओं को सुलझाने में सहायता मिलती है। सर्वप्रथम 'पैटर्सन' ने व्यावहारिक मनोविज्ञान के विकास पर प्रकाश डाला। उन्होंने इसके विकास के चार चरण बताए–गर्भावस्था, जन्मकाल, बाल्यावस्था और युवावस्था।

इस इकाई (यूनिट) में आप व्यावहारिक मनोविज्ञान, इसके विकास एवं व्यापक क्षेत्र के बारे में अध्ययन करेंगे और योग में इसके महत्व को समझेंगे।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- व्यावहारिक मनोविज्ञान के अर्थ को बता सकेंगे तथा मुख्य परिभाषाओं को समझा सकेंगे;
- व्यावहारिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा विकास पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- मानव जीवन में व्यावहारिक मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का उल्लेख कर सकेंगे और योग के साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे।

11-1 0;kogkfjd eukfoKku dk vFk ,oa ifjHkk"kk,a

व्यावहारिक मनोविज्ञान = व्यावहारिक + मनोविज्ञान। व्यावहारिक मनोविज्ञान दो शब्दों से मिलकर बना है– व्यावहारिक + मनोविज्ञान।

टिप्पणी

व्यावहारिक मनोविज्ञान के सही अर्थ को समझने से पूर्व हमें मनोविज्ञान की परिभाषा पर विचार करना होगा। आओ पहले मनोविज्ञान की परिभाषा समझें–

मनोविज्ञान अर्थात् मन का विज्ञान। वह विज्ञान, जिसमें मन का अध्ययन किया जाता है, मनोविज्ञान कहलाता है।

अब यदि वैज्ञानिक दृष्टि से मनोविज्ञान को परिभाषित किया जाय तो–

> **^^euksfoKku og foKku gS ftlesa] izk.kh dk ekufld izfØ;kvksa] vuqHkoksa rFkk mudk 0;Dr o v0;Dr 0;ogkjksa dk ,d Øec) rjhds ls vè;;u fd;k tkrk gSA****

आपने उपर्युक्त परिभाषा को समझा, आइये अब व्यावहारिक मनोविज्ञान को समझें। मनोविज्ञान के सिद्धांतों का अनुप्रयोग कर प्राणी के व्यवहार में कल्याण हेतु परिवर्तन लाया जाता है। यह मनोविज्ञान, व्यावहारिक मनोविज्ञान कहलाता है। अर्थात् व्यावहारिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान का ही व्यावहारिक (प्रयोगात्मक) पक्ष है जिसमें मानवीय विचारों, कथनों और उसकी क्रियाओं पर नियंत्रण कर, जीवन को कल्याणप्रद बनाने की दिशा में कार्य किया जाता है।

अब आप समझ गये होंगे कि मानवीय कल्याण के लिए, व्यावहारिक मनोविज्ञान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

11-2 0;kogkfjd euksfoKku dh ifjHkk"kk,¡

शिक्षार्थियों अभी तक आपने व्यावहारिक मनोविज्ञान का अर्थ समझा, आइये अब व्यावहारिक मनोविज्ञान की परिभाषा पर विचार करें–

सामान्य रूप से ''व्यावहारिक मनोविज्ञान'' सामान्य मनोविज्ञान, औद्योगिक मनोविज्ञान, नैदानिक मनोविज्ञान एवं सामाजिक मनोविज्ञान का व्यावहारिक अध्ययन ही है। मनोवैज्ञानिकों ने व्यावहारिक मनोविज्ञान की विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं। इनमें से कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई परिभाषाएँ इस प्रकार हैं–

1. ''व्यावहारिक मनोविज्ञान का लक्ष्य मानव क्रियाओं का वर्णन, भविष्य कथन एवं नियंत्रण है ताकि हम स्वयं अपने जीवन को, बुद्धिमतापूर्ण, सही ढंग से समझ सकें तथा अन्य व्यक्तियों को प्रभावित कर सके।''
   &,p- MCyw- gsiuj

2. ''व्यावहारिक मनोविज्ञान, सामान्य प्रौढ़ व्यक्तियों के व्यावहारिक पक्षों का अध्ययन करता है।''
   &vkj-MCyw gtcS.M

3. ''व्यावहारिक मनोविज्ञान के उद्देश्य, विभिन्न प्रकार की योग्यताओं एवं क्षमताओं से युक्त व्यक्तियों को प्रशिक्षित करने तथा उनके पर्यावरण का चयन एवं नियंत्राण करने के बाद, उन्हें उनके कार्यों में इस प्रकार समायोजित करना है कि वे अधिक से अधिक सामाजिक एवं व्यक्तिगत सुख तथा संतोष पा सकें।''
   &ikiQu cktj

टिप्पणी

कहने का तात्पर्य यह है कि ''अपने या दूसरों के व्यवहार एवं व्यावहारिक समस्याओं का अध्ययन करने तथा उनमें आवश्यकतानुसार वांछित परिवर्तन लाने वाले मनोविज्ञान को व्यावहारिक मनोविज्ञान कहा जाता है।''

11-3 0;kogkfjd eukfoKku dk bfrgkl ,oa fodkl

शिक्षार्थियों, अब तक व्यावहारिक मनोविज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् आपको यह स्पष्ट अवश्य हो गया होगा कि व्यावहारिक मनोविज्ञान, विभिन्न मानवीय समस्याओं को सुलझाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वास्तव में व्यावहारिक मनोविज्ञान का लक्ष्य, मानव क्रियाओं वर्णन, भविष्य कथन और उसकी क्रियाओं पर नियंत्रण है, ताकि उसकी समस्याओं का समाधन करके उसका जीवन, सकारात्मक एवं कल्याणमयी बनाया जा सके। आइये अब इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास पर चर्चा करें–

व्यावहारिक मनोविज्ञान का इतिहास बहुत पुराना नहीं है, अपितु मनोवैज्ञानिक पैटर्सन के अनुसार, जब द्वितीय विश्व युद्ध चल रहा था, उस समय इसकी उत्पत्ति हुई। सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक पैटर्सन ने ही व्यावहारिक मनोविज्ञान के इतिहास व विकास का वर्णन किया।

उन्होंने अपना एक लेख लिखा जिसका नाम था– "Applied Psychology comes of Age" इस लेख में उन्होंने व्यावहारिक मनोविज्ञान के विकास को चार चरणों में बताया है, जिसे निम्नांकित आरेख के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं–

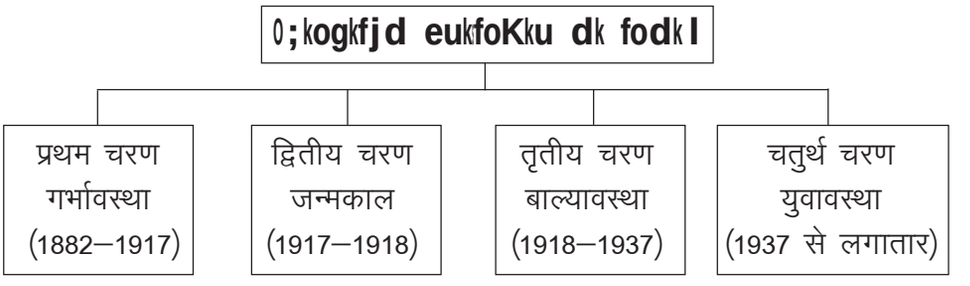

iFke pj.k % प्रथम चरण व्यावहारिक मनोविज्ञान का गर्भावस्था काल है जो सन 1882 से लेकर 1917 तक का है। पैटर्सन के अनुसार, इस समय में कई मनोवैज्ञानिकों जैसे–गाल्टन केटेल, बिने आदि ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

f}rh; pj.k % सन 1917 से 1918 तक के काल को पैटर्सन ने जन्मकाल माना है। यह वह काल था जब कई मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का निर्माण हुआ। इसी काल में अमेरिका जैसे शक्तिशाली देशों ने अपनी सेना में भर्ती के लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग शुरू किया, जिसमें आर्मी एल्फा व आर्मी बीटा के परीक्षणों का निर्माण हुआ। इसमें एल्फा परीक्षण, आर्मी अधिकारी वर्ग के लिए और बीटा परीक्षण, जवानों और अनपढ़ स्टाफ के लिए किया गया।

r`rh; pj.k % यह चरण बाल्यावस्था का है। पैटर्सन के अनुसार सन 1918 से लेकर 1937 तक व्यावहारिक मनोविज्ञान अपनी बाल्यावस्था में रहा। यह वह महत्वपूर्ण समय था जिसमें, व्यावहारिक मनोविज्ञान का विकास

टिप्पणी

हो रहा था। इसी दौरान 1937 में अमेरिका में व्यावहारिक मनोविज्ञान पर एक राष्ट्रीय स्तर के संस्थान की स्थापना हुई, जिसका लक्ष्य राष्ट्र के सुधार में व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग करना था।

prFk pj.k% सन् 1937 के बाद व्यावहारिक मनोविज्ञान ने युवावस्था में प्रवेश किया। मानव ने इस विज्ञान का अनुप्रयोग, एक के बाद एक क्षेत्र में करना प्रारम्भ कर दिया, जिसके महत्वपूर्ण परिणाम आने लगे और इस प्रकार सन 1937 से आज तक इसका क्षेत्र, लगातार बढ़ता ही जा रहा है। वर्तमान में मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में इसका सदुपयोग बढ़ता ही जा रहा है।

शिक्षार्थियों, आज स्वस्थ रहने के लिए योग का उपयोग चिकित्सा जगत में किया जा रहा है, जिसे यौगिक चिकित्सा या योग थिरैपी कहते हैं। रोगी को उपयुक्त चिकित्सा देने के लिए पहले रोग का परीक्षण करना आवश्यक है ताकि रोगी को उचित चिकित्सा दी जा सके। किसी भी रोगी की रोग परीक्षा (रोगी परीक्षण) करने के लिए विभिन्न प्रेक्षण विधियाँ, चिकित्सकों द्वारा प्रयोग में लायी जाती हैं– जैसे–रोगी की जिव्हा देखना, नेत्र देखना, नाड़ी देखना आदि। इसके साथ ही कभी–कभी रोगी के व्यवहार का भी परीक्षण किया जाता है। इस परीक्षण में व्यावहारिक मनोविज्ञान की आवश्यकता होती है।

bdkbxr i'u&11-1

सही विकल्प चुनिए :

1. व्यावहारिक मनोविज्ञान के विकास पर, सर्वप्रथम प्रकाश डालने वाले वैज्ञानिक हैं–

   (क) फ्रायड (ख) पैटर्सन

   (ग) डेविड (घ) युंग

2. व्यावहारिक मनोविज्ञान सामान्य प्रौढ़ व्यक्तियों के व्यावहारिक पक्षों का अध्ययन करता है। उक्त परिभाषा निम्न में से किस वैज्ञानिक ने दी–

   (क) पैटर्सन (ख) फ्रायड

   (ग) आर.डब्लू. हजबैण्ड (घ) युंग

3. व्यावहारिक मनोविज्ञान के विकास के चारों चरणों का सही क्रम है–

   (क) जन्मकाल, बाल्यावस्था, युवावस्था और गर्भावस्था

   (ख) गर्भावस्था, बाल्यावस्था, युवावस्था और जन्मकाल

   (ग) गर्भावस्था, जन्मकाल, बाल्यावस्था और युवावस्था

   (घ) जन्मकाल, गर्भावस्था, बाल्यावस्था और युवावस्था

टिप्पणी

4. रिक्त स्थान भरिए–

1. पैटर्सन ने सन ..... से ..... तक के समय को व्यावहारिक मनोविज्ञान का जन्मकाल माना है।
2. पैटर्सन ने अपने लेख में व्यावहारिक मनोविज्ञान के विकास को चार चरणों – गर्भावस्था, जन्मकाल, ..., युवावस्था बताया है।
3. सन 1937 के बाद व्यावहारिक मनोविज्ञान ने अपनी ..... में प्रवेश किया।

11-1 0;kogkfjd eukfoKku d {k=

शिक्षार्थियों, आपने व्यावहारिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और उसके विकास के बारे में जाना। इसमें हमने चर्चा की कि, पैटर्सन ने इसके विकास को चार चरणों में विभाजित किया था। अपने चौथे चरण–युवावस्था में पहुँचते ही व्यावहारिक मनोविज्ञान ने अपना क्षेत्र, व्यापक और विस्तृत कर लिया। वर्तमान में व्यावहारिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में, लगातार वृद्धि होती जा रही है। आइये जाने कि, किन क्षेत्रों में मुख्य रूप से व्यावहारिक मनोविज्ञान का अनुप्रयोग किया जा रहा है–

चित्र 11.1 : मानव द्वारा व्यावहारिक मनोविज्ञान के अनुप्रयोग

1. मानसिक स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में
2. परामर्श एवं निर्देशन में
3. समाज के क्षेत्र में
4. शिक्षा के क्षेत्र में
5. अपराध के क्षेत्र में

टिप्पणी

6. अभ्यर्थियों के चयन में
7. उद्योग एवं व्यापार में
8. सैनिक क्षेत्र में
9. राजनैतिक क्षेत्र में
10. खेल जगत में
11. यौन शिक्षा में
12. विश्व शान्ति में

उपर्युक्त कुछ ऐसे मुख्य क्षेत्र हैं जिनमें व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग बहुत कारगर सिद्ध हो रहा है। आइये जानें कैसे–

1- ekufld LokLF; ,o fpfdRlk d{k= e% यह एक ऐसा महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जिसमें व्यावहारिक (नैदानिक) मनोविज्ञान से व्यक्तियों के असमान्य व्यवहार से संबंधित समस्याओं को समझने, उनके कारणों का पता लगाने और समाधन करने में सहायता मिलती है। पहले मानसिक विक्षिप्त रोगियों को बांध कर रखा जाता था। उन पर झाड़–फूंक करने वाले तरह–तरह के अत्याचार करते थे। उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। आज विकसित मानसिक चिकित्सालयों में विक्षिप्तों की बेड़ियां कटवाकर, मनोरोगों के कारणों का विश्लेषण कर, उनकी चिकित्सा शुरू की है। जिन मनोरोगियों को भूत–चुड़ैल समझा जाता था उन मनोरोगियों के कारणों का विश्लेषण करके, मनोवैज्ञानिकों ने मानसिक रोगों की सफलतापूर्वक चिकित्सा की और इस प्रकार फ्रायड, युंग एवं एडलर जैसे– मनोविश्लेषणवादियों ने इस क्षेत्र में, कई महत्वपूर्ण अन्वेषण किये। उन्होंने यह पता लगाया कि, मानव शरीर तथा मन का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। अतः रोगियों में शारीरिक व्याधियों के साथ–साथ मानसिक व्याधियाँ भी लगीं हो सकती हैं। अतः आधुनिक चिकित्सक, मनोचिकित्सकों की सहायता लेकर, रोगी को स्वस्थ करते हैं।

मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य को उत्तम बनाए रखने के लिए, योग की विशेष पद्धतियाँ जैसे–भावातीत ध्यान, प्रेक्षाध्यान, विपश्यना तथा अष्टांग योग, अत्यंत महत्वपूर्ण कारगर सिद्ध होती हैं। ध्यान योग से, मानसिक रोगों की चिकित्सा की जा सकती है। तनाव के प्रबन्ध में, डिप्रेशन को खत्म करने और विक्षिप्त अवस्था से बचाने के लिए, योग का महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार योग मनोविज्ञान (योग आसनों और ध्यान की विशेष पद्धतियों) से मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को उत्तम बनाए रखा जा सकता है।

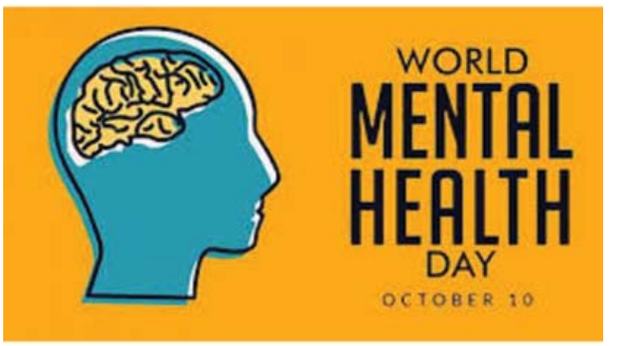

चित्र 11.2: विश्व मानसिक स्वास्थ्य दिवस

टिप्पणी

2. परामर्श एवं निर्देशन में : वर्तमान काल में व्यक्ति का जीवन प्रतिस्पर्धा एवं संघर्ष से भरा पड़ा है। नौकरियाँ कम मिलने के कारण, बेरोजगारों में तनाव व्याप्त है, जिससे काफी लोग डिप्रेशन के शिकार हो जाते हैं। विकासशील देशों में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की सहायता से लोगों को उचित परामर्श व निर्देश देकर, समस्या का समाधान करते हैं। वे उनके अन्दर की आन्तरिक शक्ति तथा छिपे कौशल क्षमता और कार्य करने की क्षमता को समझाते हैं, जिससे समस्याओं का समाधान भी हो जाता है।

व्यवसाय में आने वाली समस्याओं के समाधान के अतिरिक्त, मनोवैज्ञानिक लोगों की व्यक्तिगत, घरेलू और सामाजिक समस्याओं का भी समाधान करते हैं। इस प्रकार व्यक्ति अपने व परिवार सदस्यों के व्यवहार में वांछित सुधार ला सकता है और प्रगति कर सकता है।

3. समाज क्षेत्र में : सामाजिक समस्याओं को सुलझाने में, व्यावहारिक मनोविज्ञान महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है। सामाजिक बुराइयों, कुप्रथाओं रूढ़िवादिता, जातिवाद भेदभाव, बालविवाह, कुपोषण आदि समस्याओं का मनोवैज्ञानिक तरीके से समाधान किया जा सकता है। समाज सेवाओं, सामाजिक शिक्षा और समाज कल्याण में भी व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग किया जा सकता है। समाज को समृद्ध और प्रगतिशील बनाने के लिए व्यावहारिक मनोविज्ञान उपयोगी सिद्ध हुआ है।

4. शिक्षा क्षेत्र में : व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग, शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ता ही जा रहा है। एक स्वतंत्र विषय के रूप में भी मनोविज्ञान विषय को संचालित किया जा रहा है। शिक्षा के क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं, स्मृति चिन्तन तर्क आदि अनेक मानसिक प्रक्रियाओं पर मनोवैज्ञानिक नियमों की खोज की जा रही है। शिक्षार्थियों की रूचि योग्यता और सर्वांगीण विकास के लिए विभिन्न शोध कार्य किये जा रहे हैं।

- शिक्षकों को उचित प्रशिक्षण देने व व्यवहार कुशल बनाने में;
- बालकों में अनुशासन व स्वस्थ आदतें उत्पन्न करने में;
- बुरी आदतें छुड़ाने में;
- शिक्षार्थियों की अभिरूचि तथा मानसिक परीक्षा से उनके अध्ययन विषयों को सुनिश्चित करने में;
- उच्च शिक्षा के उपरांत उचित व्यवसाय चुनने में।

5. अपराध क्षेत्र में : जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी और गरीबी जैसे– मुख्य कारणों की वजह से, आज समाज में अपराधियों की संख्या बढ़ती जा रही है। एक भयमुक्त व अपराध मुक्त समाज की स्थापना के लिए, मनोविज्ञान बहुत सहायक है। मनोविज्ञान के अनुसार अपराधी को दंड देने की अपेक्षा, उसके दोषों को समझाकर और भविष्य का परिणाम बताकर, उसमें सुधार लाया जा सकता है। इसमें वह अपराध नहीं करेगा और एक अच्छे नागरिक का फर्ज अदा करेगा।

आज सुधार गृह, खुले जेल, बाल सुधार गृह आदि इसी के परिणाम हैं। मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि, अपराधी अपराधों के लिए अकेले ही जिम्मेदार नहीं हैं। उनकी परिस्थितियाँ, वातावरण और समाज भी उस अपराध के लिए जिम्मेदार है और मनोविज्ञान इन सभी का उपचार करता है।

इस प्रकार अपराध निरोध मे, मनोविज्ञान एक बड़ी भूमिका निभाती है। साथ ही अपराध, अपराधी और

टिप्पणी

परिस्थितियों को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से समझने में, न्यायाधीश को सहायता मिलती है, जिससे उचित न्याय हो जाता है।

6- ukSdjh gsrq vH;fFk;ksa dk p;u esa प्रत्येक देश में सरकारी व गैर सरकारी सेवाओं के लिए अभ्यर्थियों का चयन किया जाता है। वर्तमान में लगभग सभी देशों में अब, इस चयन के लिए चयन समिति में एक या दो मनोवैज्ञानिक अवश्य जोड़े जाते हैं, जो मनोवैज्ञानिक परीक्षण के आधार पर योग्य व्यक्ति का चुनाव करते हैं। सार्वजनिक सेवा आयोग, लोक सेवा आयोग, थल सेना, नौ सेना, वायु सेना तथा अन्य महत्वपूर्ण नियुक्ति संस्थाएँ, इन मनोवैज्ञानिकों की सहायता से योग्य व्यक्तियों का चयन करती हैं और इनके लिए जो योग्यता परीक्षा आयोजित की जाती है वे वास्तव में मनोवैज्ञानिक आधारित परीक्षाएँ भी हैं।

चित्र 11.3: नौकरी हेतु अभ्यर्थियों के चयन

7- m|ksx ,oa 0;kikj esa औद्योगिक क्षेत्रों में उद्योगों की सही ढंग से स्थापना, उन्हें आधुनिक रूप देना कर्मचारियों का उचित चयन, मशीनों का चयन और प्रबंधन को दुरुस्त करने आदि में मनोविज्ञान का बहुत बड़ा हाथ है। इसके अध्ययन के लिए अलग से मनोविज्ञान की शाखा–औद्योगिक मनोविज्ञान और संगठन मनोविज्ञान (Organisational Psychology) की स्थापना हुई है।

औद्योगिक मनोविज्ञान में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि कम से कम लागत में अधिक से अधिक अच्छी किस्म का उत्पादन किस प्रकार किया जाय। जबकि संगठन मनोविज्ञान के अंतर्गत कर्मचारियों की व्यक्तिगत समस्याओ, उनकी औद्योगिक समस्याओं, कर्मचारियों के चयन की समस्याओं, उनके प्रशिक्षण, कारखानों, मशीनों की दशा संबंधित समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। इससे निम्नांकित उद्देश्यों को पूरा करने में सहायता मिलती है–

- मजदूरों कर्मचारियों और प्रबन्धकों के बीच मतभेदों को दूर करने में।
- कर्मचारियों की रूचि, अभिवृत्ति, बुद्धि एवं विशेष योग्यता की जांच करने में।
- कार्य के प्रति कमचारियों में प्रोत्साहित करने में।
- उद्योग के बेहतर उत्पादन, वितरण विनियम आदि कार्यों में।

इस प्रकार उद्योग एवं व्यापार को वैज्ञानिक स्तर पर लाने और बेहतर उत्पादन वितरण और विनियम में व्यावहारिक मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

8. **lU; {k= e‚** किसी भी देश के लिए उसका मजबूत सैन्य क्षेत्र उसके लिए काफी महत्वपूर्ण है और इसके लिए न केवल सैन्य अस्त्र–शस्त्रों का आधुनिक होना आवश्यक है अपितु सैनिक धैर्यवान, साहसी, पराक्रमी और युद्ध के दौरान डटे रहने वाले होना भी आवश्यक है। उक्त गुणों को विकसित करने के लिए व्यावहारिक मनोविज्ञान की मदद ली जाती है। निम्नांकित तरीके से सैन्य क्षेत्र में व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग किया जा रहा है–

- सैन्य भर्ती के दौरान उपयुक्त सैनिक के चयन में;
- जल, थल व वायु सेना के अधिकारियों के चयन मनोवैज्ञानिक परीक्षण द्वारा;
- युद्धकाल में शत्रु को भयभीत करने और सैनिकों का मनोबल बढ़ाने हेतु मनोवैज्ञानिकों की सहायता लेने में;
- सैनिकों में स्थिरता, दृढ़ता, देशभक्ति बनाएँ रखने में;
- युद्ध तथा अन्य विषम परिस्थितियों के दौरान मानसिक रोगी बने सैनिकों की मनोचिकित्सा में।

9- **jktufrd {k= e‚** कोई भी देश चाहे वह तानाशाही हो या जनतंत्रात्मक हो, उसमें व्यापक रूप से मनोविज्ञान का प्रयोग किया जाता रहा है। हालांकि मनोविज्ञान को व्यवहार में लाने की बात बहुत पुरानी नहीं है, किन्तु राजा हमेशा अपने विश्वसनीय मंत्रियों के कहे गये वाक्यों को ध्यान में रखकर फैसला किया करते थे। इसका तात्पर्य सीधा है कि राजा के विश्वास पात्रों ने, जो भी कहानी राजा के समक्ष पेश कर दी, राजा ने उसी मनोवैज्ञानिक व्यवहार को ध्यान में रखकर, फैसला कर दिया और आज भी स्थिति यही है। आज भले ही हमारा देश लोकतंत्रात्मक है मगर सामान्य जनता की मांग, उसकी आवाज संबंधित मंत्रियों तक नहीं पहुँच पाती। अतः ऐसे में यह आवश्यक है कि राजनैतिक क्षेत्र में मनोवैज्ञानिकों का सहारा लिया जाए। इस क्षेत्र में निम्नांकित तरीकों से व्यावहारिक मनोविज्ञान की सहायता ली जा सकती है–

- कानून का पालन कराने के लिए जनता के साथ, मनोवैज्ञानिक ढंग से व्यवहार किया जाए।
- जनता की मनोदशा जानकर, संबंधित क्षेत्र में काम किये जाए।
- मनोवैज्ञानिकों की सहायता लेकर, जनहित में कुछ विशेष कार्य किये जाएँ।
- चुनाव के दौरान, जनता की मन की बात समझकर, मनोवैज्ञानिक तरीके से चुनाव प्रचार करें।
- मनोवैज्ञानिक ढंग से किया गया चुनाव प्रचार, व्यक्ति को सफलता प्रदान करता है। ऐन वक्त पर कभी–कभी इसी कारण, मतदाताओं का रूख बदल जाता है।
- राजनैतिक पार्टियों का मनोबल उठाने व गिराने में भी व्यावहारिक मनोविज्ञान की अहम भूमिका रहती है।
- प्रशासन के प्रबंधन में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

टिप्पणी

टिप्पणी

10- [ksy txr esa आजकल खेल जगत में व्यावहारिक मनोविज्ञान का पर्याप्त उपयोग किया जा रहा है। किस प्रकार इसका उपयोग किया जा रहा है, आइये जानें–

- खिलाड़ियों की टीम के चयन में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग करके;
- खेलकूद प्रतियोगिताओं में खिलाड़ियों का मनोबल बढ़ाने के लिए;
- किसी कारणवश हतोत्साहित खिलाड़ी को मनोवैज्ञानिक तरीके से उसको परामर्श देकर और उसकी छिपी क्षमता को याद दिलाकर;
- खिलाड़ियों के मन से भय, शंका, चिंता, अवसाद आदि दूर करके;
- खिलाड़ियों को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रशिक्षण देकर।

11- ;kSu f'k{kk ds {ks= esa यौन क्रिया सभी प्राणियों में एक आवश्यक जैविक क्रिया है, जिससे प्राणी संतान उत्पत्ति कर वंश वृद्धि करते हैं। मानव एक बुद्धिमान प्राणी है, जो नैतिक आचरण से, एक सभ्य समाज की स्थापना करता है। परन्तु जब समाज में यौन क्रिया समय से पूर्व शुरू हो जाए या यह कुकृत्य बनने लगे तो निश्चित रूप से यह विकट सामाजिक समस्या बन जाती है।

क्या आप जानते हैं कि, हमारे कानून में विवाह के समय लड़के की न्यूनतम उम्र 21 वर्ष और लड़की की न्यूनतम उम्र 18 वर्ष निश्चित की गई है। संस्कृति में मनुष्य आयु 100 वर्ष मानकर उसे चार आश्रमों–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संयास में विभाजित कर दिया गया ताकि मनुष्य अपने जीवन को यश–कीर्ति को प्राप्त करते हुए, सम्मान के साथ समाज में जी सके। इस प्रथम आश्रम की आयु 25 वर्ष रखी गई, जिसमें बालक, बाल्यावस्था, खेलकूद, गुरू आश्रम में विद्‌या प्राप्त करना और गृहस्थ आश्रम के योग्य बनना आदि शामिल थे। अर्थात् इस आश्रम में 25 वर्ष की अवस्था तक इस प्रकार की शिक्षा गुरूकुलों में दी जाती थी कि बालक ब्रह्मचर्य का भी पालन करता था और उसका सुचरित्र होता था।

आज पाश्चात्य शैली और यौन स्वच्छन्दता का लोगों पर दुष्प्रभाव पड़ा है, जिसमें विशेष रूप से किशोर व अव्यस्क व्यक्ति इस समस्या के शिकार हुए हैं। साथ ही टी.वी., मीडिया, अश्लील कॉमिक्स आदि चरित्र विकृति उत्पन्न करने में सहायक है, जिससे आए दिन बलात्कार जैसे घिनौने कृत्य समाज में घट रहे हैं। अतः इन अपराधिक भावनाओं से बचाना, सम्भोग का सही अर्थ समझाना और मनोनपुसंगता या यौन विकृति पर प्रकाश डालना आवश्यक है और इसकी समस्याओं का समाधान करने में व्यावहारिक मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

मनोविज्ञानी, आपराधिक प्रवृत्ति के लोगों, यौन विकृतों, आव्यस्कों आदि का मनोविश्लेषण कर उनकी यौन समस्याओं का समाधान करते हैं और योग के माध्यम से स्वस्थ करते हैं।

12- fo'o 'kkfUr ds {ks= esa आज विश्व शान्ति की परम आवश्यकता है। देश आपस में परस्पर सौहार्द से मित्रभाव में रहते हैं तो विकास के पथ पर बढ़ते हैं और यदि बैरभाव से रहते हैं, तो हानि ही हानि

टिप्पणी

होती है। इसमें मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों को ध्यान रखते हुए, आपसी मतभेदों और समस्याओं का मनोवैज्ञानिक समाधान ढूंढ़ते हैं, जिससे विश्व में शान्ति बनी रहे।

bdkbxr i'u&11-2

सत्य/असत्य बताइये :

1. आजकल व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग मानसिक स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में किया जा रहा है। ( )
2. लोगों की विभिन्न समस्याओं के समाधन हेतु मनोवैज्ञानिकों द्वारा परामर्श दिया जाता है। ( )
3. सामाजिक बुराइयों कुप्रथाओं और अपराधों से केवल अपराधियों को दण्ड देकर ही नियंत्रित किया जा सकता है। ( )
4. आधुनिक समाज को अपराध मुक्त करने के लिए, अपराधियों को मनोवैज्ञानिक परामर्श देकर, उन्हें सुधारा जा सकता है। ( )

vkiu D;k lh[kk

- व्यावहारिक मनोविज्ञान दो शब्दों से मिलकर बना है– व्यावहारिक + मनोविज्ञान।
- व्यावहारिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान का व्यावहारिक प्रयोगात्मक पक्ष है, जिसमें मानवीय विचारों, कथनों और उसकी क्रियाओं पर नियंत्रण करने और जीवन को कल्याणमय बनाने का अध्ययन किया जाता है।
- व्यावहारिक मनोविज्ञान का उपयोग, मानवजीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उसकी समस्या का समाधान करने में तथा उसक कल्याण हेतु किया जाता है।
- व्यावहारिक मनोविज्ञान का उद्देश्य, मानव व्यवहार का अध्ययन करना, उसकी क्रियाओं का वर्णन करना, भविष्य कथन करना और क्रियाओं पर नियंत्रण रखना है, जिससे वह अपने जीवन को बुद्धिमत्तापूर्वक जी सकें और दूसरे के जीवन को प्रभावित कर सकें।
- पैटर्सन ने सन 1940 में व्यावहारिक मनोविज्ञान के विकास पर सर्वप्रथम प्रकाश डाला और इसे चार चरणों में विभाजित किया :

  (i) गर्भावस्था (ii) जन्मकाल (iii) बाल्यावस्था (iv) युवावस्था।
- व्यावहारिक मनोविज्ञान का क्षेत्र बहुत व्यापक एवं विस्तृत क्षेत्र है। आज बहुत से क्षेत्रों में व्यावहारिक मनोविज्ञान का सदुपयोग किया जा रहा है।

टिप्पणी

bdkbZ d vUr e i'u

1. व्यावहारिक मनोविज्ञान से आप क्या समझते हैं? उसका अर्थ बताते हुए उसकी विभिन्न परिभाषाओं पर प्रकाश डालिए।
2. व्यावहारिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का उल्लेख करते हुए, उसके विकास का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. व्यावहारिक मनोविज्ञान का क्षेत्र बहुत व्यापक एवं विस्तृत है। इस कथन की विवेचना कीजिए।

bdkbZxr i'uksa d mÙkj

11-1

सही विकल्प चुनिए :

1. (ख)
2. (ग)
3. (ग)

रिक्त स्थान भरिए :

1. 1917, 1918
2. बाल्यावस्था
3. युवावस्था

11-2

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. सत्य

12

व्यक्तित्व की अवधारणा

शिक्षार्थियों पिछले इकाई (यूनिट) में हमने व्यावहारिक मनोविज्ञान के विषय पर चर्चा की, जिसमें आपने जाना कि, मानव जीवन की समस्याओं को सुलझाने हेतु हमारे जीवन में, मनोविज्ञान का उपयोग बढ़ता जा रहा है और साथ ही समस्या के अनुसार, यौगिक प्रबंधन किया जा रहा है।

जहाँ एक ओर मनोविज्ञानी, मनोविश्लेषण के माध्यम से समस्या का समाधान करते हैं, वहीं दूसरी ओर पीड़ित के जीवन में व्यावहारिक योग लाकर, उसके जीवन को स्वस्थ और कल्याणमयी बना दिया जाता है।

पिछले इकाई (यूनिट) में आपने यह भी पढ़ा कि वर्तमान में स्वास्थ्य चिकित्सा से लेकर विभिन्न महत्वपूर्ण क्षेत्रों में, व्यावहारिक मनोविज्ञान का सीधा दखल है। इस इकाई (यूनिट) में हम व्यक्तित्व, इसके सिद्धांत और व्यक्तित्व के निर्धारण करने वाले कारकों को समझेंगे।

mís';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन के पश्चात् आप –

- व्यक्तित्व की अवधारणा पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- व्यक्तित्व के निर्धारकों का वर्गीकरण कर सकेंगे और प्रत्येक का वर्णन कर सकेंगे।

12-1 O;fDrRo dh vo/kkj.kk

शिक्षार्थियों, हम प्रतिदिन बहुत से व्यक्तियों से मिलते हैं, बातचीत करते हैं, अच्छा व्यवहार करते हैं, किन्तु

टिप्पणी

उनमें से कुछ ही लोग हमें पसन्द आते हैं। आपने देखा होगा कि कुछ व्यक्तियों का व्यक्तित्व (Personality) इतना आकर्षक होता है कि, उनसे मिलना, बातचीत करना अच्छा लगता है और उनसे मित्रता हो जाती है। जबकि इसके विपरीत अन्य व्यक्तियों से चाहते हुए भी दूरी बनाना चाहते हैं। इसका क्या रहस्य है? इसका रहस्य है व्यक्ति की वह अव्यावहारिक समस्या, जो उसकी आदत बन गई है, जिससे लोग उसे मानसिक बीमार कहने लगते हैं।

उक्त विषय पर विचार किया गया मंथन किया और फिर मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्ति को और व्यक्तित्व समझने के लिए नये–नये सिद्धान्तों की खोज की। उल्लेख मिलता है कि इस प्रकार का अन्वेषण ईसा के चार सौ वर्ष पूर्व प्रसिद्ध दार्शनिक हिप्पोक्रेट्स ने व्यक्ति के काय रस के आधार पर उसके व्यक्तित्व को चार भागों में बांटा– 1. रक्त 2. कृष्ण पित्त 3. पीत पित्त 4. कफ। और बताया कि इन चारों में से जिस काय रस की व्यक्ति में प्रधानता होती है उसकी चित्तवृत्ति उसी के अनुसार होती है।

उक्त सिद्धांत का प्रमाणीकरण, हमारी प्राचीनकाल की आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में मिल जाता है, जिसमें पित्त और कफ के आधार पर व्यक्ति के चित्त की प्रकृति का वर्णन मिलता है।

इसके साथ ही सुप्रसिद्ध उपनिषद् श्रीमद्भगवद्गीता में व्यक्ति के व्यक्तित्व का उल्लेख मिलता है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि, व्यक्ति का व्यक्तित्व तीन गुणों – सत्, रज और तम के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है।

अब यदि गत शताब्दी और वर्तमान काल को देखा जाए तो कई मनोवैज्ञानिकों ने भी विभिन्न सिद्धान्तों द्वारा व्यक्तित्व को जानने का प्रयत्न किया है।

12-1-1 0;fDrRo

शिक्षार्थियों, व्यक्तित्व एक बहुत ही महत्वपूर्ण तथा रोचक विषय है। किसी भी व्यक्ति के विषय में जानने के लिए उसके द्वारा किये जाने वाले व्यवहार उसके गुण, शारीरिक संरचना, विशेषताएँ आदि को जानना परम आवश्यक है। क्या आपने कभी किसी अपरिचित व्यक्ति से मिलकर उसके स्वभाव का आंकलन किया है अब आप विचार करें – आपको बहुत से शिक्षकों ने पढ़ाया होगा किन्तु उनमें से केवल कुछ ही शिक्षकों की याद आपको हमेशा बनी रहती है या फिर जब भी आप अपने शिक्षण समय को याद करते हैं तो उनकी याद आपको आ ही जाती है। ऐसा क्यों होता है? आपको पढ़ाया तो अन्य शिक्षकों द्वारा भी गया था। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इन शिक्षकों की कुछ खास विशेषताएँ थी, जिन्होंने आपको प्रभावित किया।

विशेषताएँ अर्थात् विशेष गुण जो अच्छे भी हो सकते है और बुरे भी। जैसे किसी शिक्षक के पढ़ाने व समझाने की वह अच्छी टेकनिक, उसका सौम्य एवं प्रेमपूर्ण व्यवहार, तो किसी शिक्षक का अकारण क्रोध, दण्डात्मक कार्यवाही, अनुचित व्यवहार।

ये वे विशेषताएँ हैं, जो दूसरे व्यक्ति में नहीं होती और इन्हीं विशेषताओं के कारण ही प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है। ये मुख्य विशेषताएँ अथवा गुण मिलकर उस व्यक्ति का व्यक्तित्व बनाते हैं।

0;fDrRo dh vo/kkj.kk

टिप्पणी

चित्र 12.1: विभिन्न व्यक्तित्व के व्यक्ति

0;fDrRo dk vFk ,o ifjHkk"kk % अभी हमने व्यक्ति में पाये जाने वाले विशेष गुण अथवा विशेषताओं की चर्चा की। अब आप यह समझ ही गये होंगे कि किसी भी व्यक्ति को उसके विशेष गुण अथवा विशेषताएँ, जो अन्य में नहीं पाये जाते, उसे दूसरे से भिन्न बनाती हैं। तो आइये! अब व्यक्तित्व की परिभाषा को समझने का प्रयास करें–

^^iR;d 0;fDr e ik;s tku oky dN fo'k"k x.k tk nlj 0;fDr e ugh gkr vkj ftud dkj.k iR;d 0;fDr nlj l fHkUu curk g] dk lxBu 0;fDr dk 0;fDrRo dgykrk gA**

पर्सनलिटी (Personality) शब्द की उत्पत्ति, लैटिन भाषा के पर्सोना (Persona) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है– मुखौटा यानि बाह्य आवरण।

प्राचीनकाल से ही बाह्य रूपरेखा के आधार पर व्यक्तित्व को परिभाषित किया जाता रहा है। जैसे हम किसी गेरूआ, लाल, पीले, सफेद वस्त्र धारण किये तिलक लगाए, माला पहने, हाथ में कमण्डल आदि लिये जटाधरी व्यक्ति को महात्मा, साधु या संत कहते हैं। किन्तु आधुनिक काल में व्यक्ति के विशेष गुणों के आधार पर उसके व्यक्तित्व का आकलन किया जाता है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने दार्शनिकों व समाज शास्त्रियों द्वारा व्यक्तित्व की परिभाषा, व्यक्तियों के विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखते हुए दी है– जायसवाल (1987) के अनुसार कुछ मनोवैज्ञानिकों की परिभाषाएँ इस प्रकार है–

1. व्यक्तित्व, उन अभ्यास के रूपों का समन्वय है, जो वातावरण में व्यक्ति के विशेष संतुलन प्रस्तुत करता है। **& dEiQ (Kempf) 1919** के अनुसार

टिप्पणी

2. व्यक्तित्व, व्यक्ति की समस्त जैविक जन्मजात विन्यास, उद्वेग, रूझान, क्षुदाएँ, मूल प्रवृत्तियां तथा अर्जित विन्यासों एवं प्रवृत्तियों का समूह है।

&ekVu fi l (Morton Prince) 1924 के अनुसार

3. व्यक्ति के विकास की किसी अवस्था पर उसके सम्पूर्ण संगठन को व्यक्तित्व कहते हैं।

&okju rFkk djekbdy के अनुसार

4. ''व्यक्तित्व व्यक्ति का उसके वातावरण के साथ अपूर्व व स्थायी समायोजन है।'' (Personality is an individual's consistant adjustment to his environment)

&ckfjx के अनुसार

5. मनोवैज्ञानिकों ने माना कि इस प्रकार की ये सभी परिभाषाएँ व्यक्तित्व को परिभाषित करने में आंशिक ही सिद्ध हो पाती है। यह देखा गया है कि किसी व्यक्ति का मानसिक व शारीरिक गुणों का योग कितना भी चिन्तनशील हो परन्तु व्यवहार में गतिशीलता न होने के कारण, उसका व्यवहार और समायोजन अधूरा रह जाता है। अतः मनोवैज्ञानिक आलपोर्ट ने उपर्युक्त बात को ध्यान में रखकर व्यक्तित्व की परिभाषा पर अपने विचार व्यक्त किये और इसे सर्वमान्य बनाने का सफल प्रयास किया जिसके उपरांत अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने इसे पूर्ण परिभाषा के रूप में स्वीकार किया।

मनोवैज्ञानिक जायसवाल जी के अनुसार, आलपोर्ट (1939) ने व्यक्तित्व की जो परिभाषा दी है वह इस प्रकार है–

^^0;fDrRo 0;fDr dh mu euk'kkjhfjd i)fr;k dk og vkUrfjd xR;kRed lxBu g tk fd i;koj.k e mld vuU; lek;ktuk dk fu/kkfjr djrk gA**

Personality is the dynamic organisation with in the individual of those psycho-physical systems that determine his unique adjustment to his environment.

bdkbxr i'u&1-1

रिक्त स्थान भरिए :

1. पर्सनलिटी शब्द की उत्पत्ति .... भाषा के पर्सोना शब्द से हुई है।
2. पर्सोना शब्द का अर्थ है .... ।
3. विशेषताएँ अर्थात् ...., जो अच्छे भी हो सकते हैं और बुरे भी।

टिप्पणी

12-2 0;fDrRo d fu/kkjd (Determinants of Personality)

हमने व्यक्तित्व की विभिन्न परिभाषाओं को समझा। अब आइये व्यक्तित्व के निर्धारकों के बारे में जानें– व्यक्तित्व को प्रभावित करने में कुछ विशेष तत्वों का सहयोग रहता है, इन्हें व्यक्तित्व निर्धारक कहते हैं। इन तत्वों के प्रभाव से ही उनके अनुरूप व्यक्तित्व का विकास होता है। व्यक्तित्व के विकास में जैविक (Biological) तथा पर्यावरणीय (Environmental) दोनों का ही प्रभाव पड़ता है। अतः व्यक्तित्व के निर्धारकों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है– जैविक निर्धारक और पर्यावरणीय निर्धारक।

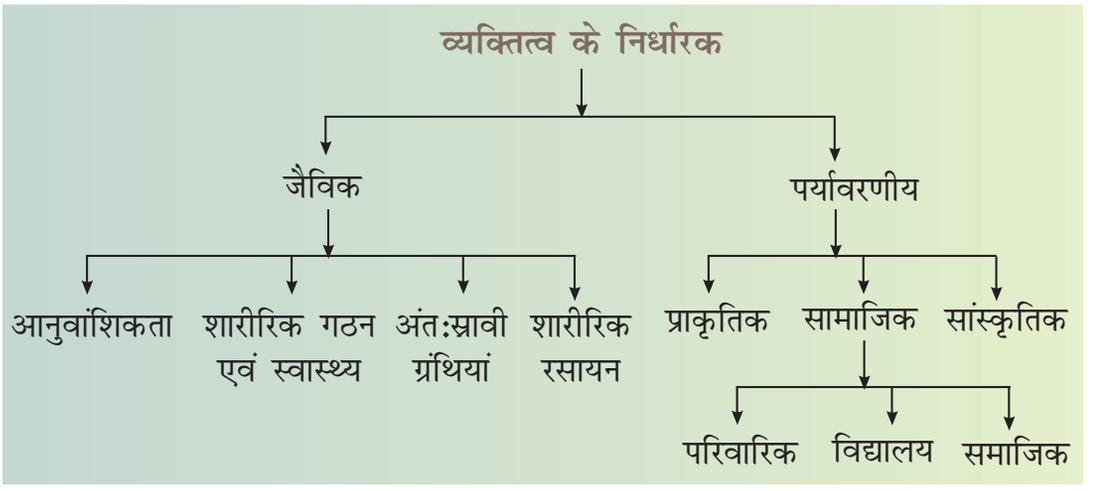

¼v½ tfod fu/kkjd

आइये, पहले जैविक निर्धारक (Biological determinants) के विषय में जानें; वे सभी निर्धारक तत्व, जो जैविक रूप से व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं, जैविक निर्धारक कहलाते हैं। मुख्य रूप से ये चार माने गये हैं–

1. आनुवंशिकता
2. अंतःस्रावी ग्रन्थियां
3. शारीरिक गठन
4. शारीरिक रसायन।

1- vkuqoa'kdrk (Heredity)% संतानों में अपने वंश के पैतृक गुण आते हैं। इसे आनुवंशिकता कहते हैं। व्यक्ति में जो पैतृक गुण आते हैं जैसे–शरीर का रंग, रूप, बनावट, बुद्धि आदि ये पैतृक गुण व्यक्ति के व्यक्तित्व को सीधा प्रभावित करते हैं।

2- 'kkjhfjd xBu vkj LokLF; % शारीरिक गठन का तात्पर्य व्यक्ति की लम्बाई बनावट, शारीरिक रंग, बाल, नैन नक्श आदि की गणना से है। बहुत से लोग इन्हीं शारीरिक विशेषताओं से व्यक्ति का

टिप्पणी

बोध करते हैं। लोग हृष्ट–पुष्टि और सुन्दर व्यक्ति को देखकर प्रभावित होते हैं और प्रशंसा करते हैं। इससे वह व्यक्ति अपने आपको दूसरों से श्रेष्ठ समझने लगता है और उसमें आत्मविश्वास और स्वावलम्बन के भाव उत्पन्न हो जाते हैं।

शारीरिक गठन ठीक न होने पर व्यक्ति में हीन भावना उत्पन्न हो जाती है। इससे उसको आत्म विश्वास में कमी, सफलता में सशंकित रहना और असामाजिक व्यवहार करना आदि पाया जाता है।

ठीक इसी प्रकार व्यक्तित्व विकास पर स्वास्थ्य का भी सीधा असर पड़ता है। स्वस्थ व्यक्ति सफलता के साथ समय से अपने कार्यों को पूर्ण कर लेता है और अस्वस्थ व्यक्ति इसके विपरीत अर्थात् अपने लक्ष्य को पूरा नहीं कर पाता।

3- vr% lzkoh xzfFk;k¡% शिक्षार्थियों आप शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान के अन्तर्गत पहले ही अंतःस्रावी तंत्र का अध्ययन कर चुके हैं। हमारे शरीर में आठ अंतःस्रावी अर्थात् नलिका विहीन ग्रंथियां पायी जाती हैं जो अपने स्राव (हार्मोन्स) को सीधे रूधिर में छोड़ देती है।

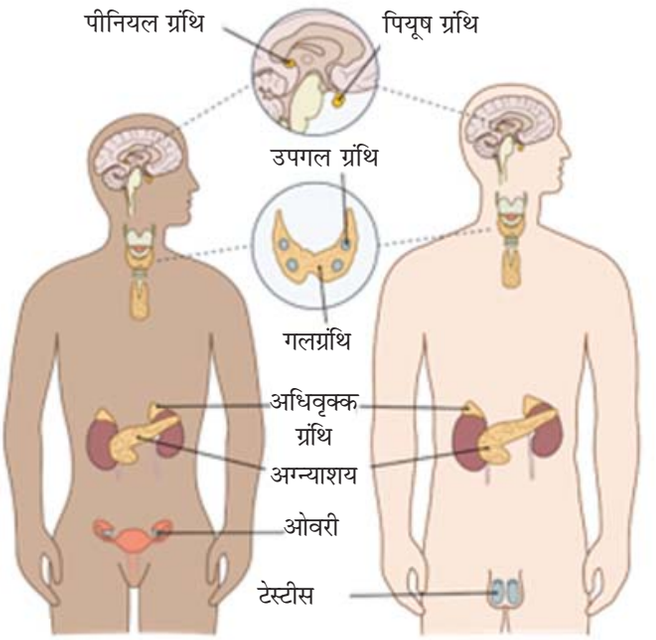

चित्र 12.2: अंतः स्रावी ग्रंथियां

(i) **fi;w"k xzfFk (Pituitary gland) :** इसे मास्टर गलैण्ड भी कहते हैं क्योंकि इससे स्रावित हॉर्मोन्स अन्य ग्रंथियों से निकलने वाले हॉर्मोन्स पर नियंत्रण करते है और शारीरिक विकास में भी यह हॉर्मोन्स बहुत प्रभाव डालता है। विकासकाल में इस ग्रंथि की क्रिया तीव्र होने पर व्यक्ति की मांसपेशियां, अस्थियां, लम्बाई तेजी से बढ़ती हैं।

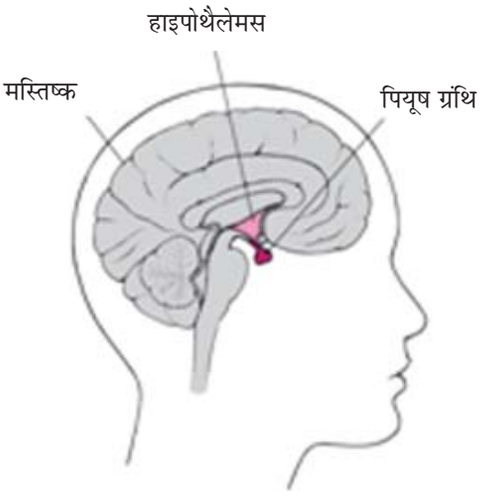

चित्र 12.3 : पियूष ग्रंथि

सामान्य से अधिक स्राव से व्यक्ति असामान्य अथवा दानवाकार और कम होने से व्यक्ति बौना भी रह जाता है।

(ii) **ihfu;y xzfFk (Pineal gland) :** मस्तिष्क में पायी जाने वाली इस ग्रंथि के कार्य एवं स्राव अभी रहस्यमयी बने हुए हैं परन्तु ऐसा अनुभव है कि ये शारीरिक वृद्धि व युवावस्था बनाये रखने में सहायक हैं।

(iii) **xyxzfFk (Thyroid gland)** % कंठ में स्थित यह ग्रंथि थायरोक्सिन नामक हॉर्मोन स्रावित करती है जो शरीर में आयोडीन की मात्रा को नियंत्रित करती है। शरीर मस्तिष्क का उचित विकास करता है।

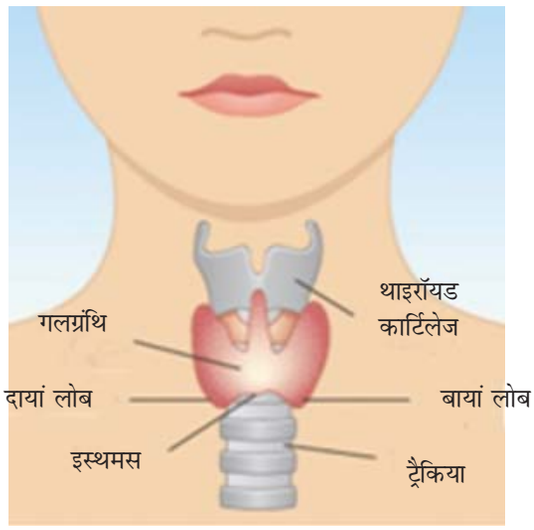

चित्र 12.4: गलग्रंथि

टिप्पणी

(iv) **mixy xfFk (Parathyroid gland)** % यह गलग्रंथि के समीप ही स्थित रहती है। इसके स्राव से शरीर शक्तिमान बना रहता है।

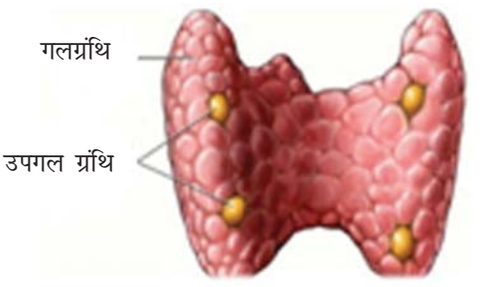

चित्र 12.5 : उपगल ग्रंथि

(v) **Fkkbel xfFk (Thymus gland)** % यह ग्रंथि सीने के अग्रभाग की गुहा में स्थित होती है। इसके कार्य एवं स्राव की भी स्पष्ट जानकारी नहीं है किन्तु ऐसा अनुमान है कि यह युवावस्था में मौन ग्रंथियों पर नियंत्रण रखती है।

(vi) **vf/koDd xfFk (Adrenal gland)** % अधिवृक्क ग्रंथि से अधिवृक्कीय हॉर्मोन स्रावित होता है, जो व्यक्तित्व को बहुत अधिक प्रभावित करता है। सामान्य मात्रा में उत्पन्न होने पर यह पुरूषों व स्त्रियों में उनके सामान्य गुण बनाए रखता है। अधिक मात्रा में उत्पन्न होने पर पुरूषों में स्त्रियों के और स्त्रियों में पुरूष के गुण बढ़ जाते हैं। यह आपत्तिकाल में जीव की शक्तियों का संगठन करता है। इसकी बहुत अधिक मात्रा से रक्तचाप बढ़ जाता है, पसीना आता है तथा आंखों की पुतलियां फैल जाती हैं और अभाव में एडिसन नामक बीमारी हो जाती है। अब आप जानना चाहेंगे कि यह एडिसन नामक बीमारी क्या है या इसके क्या लक्षण हैं तो इस बीमारी में शरीर में निर्बलता और शिथिलता बढ़ जाती है, चयापचय की क्रिया मंद पड़ जाती है। स्वभाव में चिड़चिड़ापन बढ़ जाता है।

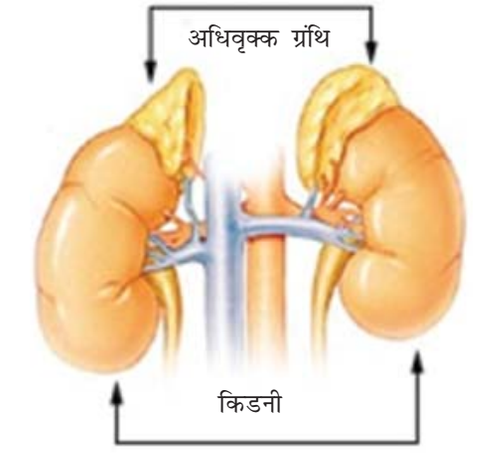

चित्र 12.6 : अधिवृक्क ग्रंथि

(vii) **vXUkk'k; xzfFk (Pancreas gland)** % इस ग्रंथि से अग्नाशय नामक स्राव निकलता है जिसमें इन्सुलिन नामक हार्मोन होता है। शिक्षार्थियों यह हॉर्मोन रक्त में शर्करा को पचाता है जिससे शरीर को ऊर्जा प्राप्त होती है। इस हार्मोन की कमी या अभाव में शर्करा का पाचन नहीं हो पाता जिसे मधुमेह रोग कहते हैं।

(viii) **tuu xzfFk (Gonad gland)** % शिक्षार्थियों, जनन ग्रंथियों के स्राव का भी व्यक्तित्व पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। किशोरावस्था में ये ग्रंथियां विशेष रूप से सक्रिय होती हैं जिसके कारण स्त्रियों में और पुरूषों में यौन चिह्न प्रकट होने लगते हैं। पुरूषों में टेस्टोस्टेरोन हार्मोन के स्रावित होने से पुरूषों जैसे लक्षण जैसे दाढ़ी–मूंछ, भारी आवाज आदि का विकास होता है और स्त्रियों में स्त्री सुलभ लक्षण जैसे दुग्ध ग्रंथियां आदि का विकास एस्ट्रोजन हॉर्मोन स्राव के कारण होता है।

4. **'kkjhfjd jlk;u** % शिक्षार्थियों, शारीरिक रसायन भी व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों में महत्वपूर्ण निर्धारक हैं। ये रसायन कौन से हैं? ईसा से लगभग 400 वर्ष पूर्व यूनान के एक प्रसिद्ध दार्शनिक एवं चिकित्सक हिप्पोक्रेटस ने मनुष्य शरीर में पाये जाने वाले रसायनों के आधार पर उसके स्वभाव का निरूपण किया। यह वर्णन हमारी प्राचीन चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद में भी मिलता है। ये शारीरिक रसायन चार प्रकार के होते हैं–

शारीरिक रसायन

- रक्त
- पित्त
- कफ
- तिल्ली द्रव्य

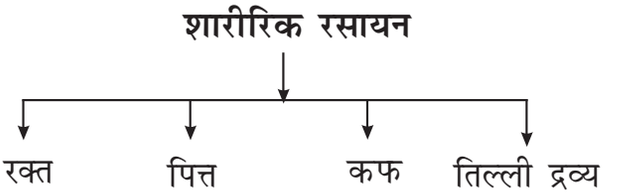

उन्होंने बताया कि –

(i) रक्त की अधिकता वाले व्यक्ति आदतन आशावादी और उत्साही होते हैं।

(ii) पित्त की अधिकता वाले व्यक्ति चिड़चिड़े व क्रोध करने वाले होते हैं।

(iii) कफ की प्रधानता वाले व्यक्ति शान्त व आलसी होते हैं।

(iv) तिल्ली द्रव्य की प्रधानता वाले व्यक्ति उदास रहने वाले होते हैं।

¼c½ i;kZoj.k lEcU/kh fu/kkZjd (Environmental determinants)

ये वे निर्धारक हैं, जो प्रकृति, समाज और संस्कृति के द्वारा व्यक्तित्व को निर्धारित करते हैं। शिक्षार्थियों इसमें मुख्यतः तीन पर्यावरणीय निर्धारक हैं–

1. प्राकृतिक निर्धारक

टिप्पणी

2. सामाजिक निर्धारक
3. सांस्कृतिक निर्धारक

1. **ikÑfrd fu/kkjd %** शिक्षार्थियों, मनुष्य प्राकृतिक पर्यावरण में रहता है अतः उसके जीवन तथा व्यक्तित्व पर भौगोलिक परिस्थितियों एवं जलवायु का प्रभाव पड़ता है। आपने देखा होगा कि ठण्डी जलवायु वाले प्रदेशों में रहने वाले लोग गोरे रंग के होते हैं, जबकि गर्म जलवायु वाले प्रदेशों में रहने वाले लोग सांवले रंग के होते हैं। इसी प्रकार गर्म व ठण्डी जलवायु का प्रभाव लोगों के शारीरिक गठन को भी प्रभावित करते हैं। अब आप यह सोच रहे होंगे कि व्यक्ति के व्यक्तित्व को ये कैसे प्रभावित कर सकते हैं? इसके लिए उदाहरण के तौर पर आप जब किसी व्यक्ति की भौगोलिक परिस्थितियां बदल देते हैं तो उसके व्यक्तित्व में स्वयं ही परिवर्तन आ जाता है। जैसे– उष्ण प्रदेशों में रहने वाले व्यक्तियों को शीत प्रदेशों में रखा जाय तो उनके कार्य करने की क्षमताएँ बहुत कम हो जाती है और उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है।

2. **lkekftd fu/kkjd %** जैसाकि आप जानते हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त समाज में ही बना रहता है। यही कारण है, उस पर समाज का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। किस प्रकार परिवार से लेकर विद्यालय कार्यक्षेत्र और समाज का प्रभाव व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित करता है, इस विषय पर समझने का प्रयास करें–

   (क) **ifjokj o ?kj dk iHkko %** शिक्षार्थियों, यह सत्य है :

   (i) **ekrk firk dk iHkko %** व्यक्तित्व के विकास की शुरूआत घर व परिवार से ही होती है। जन्म होते ही व्यक्ति पहले अपनी मां को देखता है, सुनता है और उससे बोलना, हंसना, प्रेम करना आदि सीखता है। जैसे–जैसे वह बड़ा होता है, माता उसकी देखभाल कुशलता से करती है उसी से उस बालक को जीवन का मार्ग मिल जाता है। तत्पश्चात् पिता और फिर परिवार के अन्य सदस्यों के व्यवहार को वह शीघ्र ही सीख लेता है। यदि आप विचार करें कि शिवाजी, महाराणा प्रताप, स्वामी विवेकानन्द, लाल बहादुर शास्त्री जैसे महापुरूषों के व्यक्तित्व विकास का प्रथम श्रेय किसको जाता है, प्रथम श्रेय उनकी माता को जाता है। तत्पश्चात् ही पिता व परिवार के अन्य सदस्यों को जाता है। माता–पिता द्वारा आवश्यकताओं की उचित पूर्ति तथा उचित मार्गदर्शन बालक को आशावादी, कर्मवीर, धर्मपरायण व परोपकारी बनाता है और इसके विपरीत उचित पूर्ति व मार्गदर्शन न होने पर बालक निराशावादी, कर्महीन, गलत आचरण वाला बन जाता है।

   (ii) **?kj d vU; lnL;k dk iHkko %** शिक्षार्थियों, बालक अपने माता–पिता के बाद घर परिवार के अन्य सदस्यों जैसे दादा–दादी, चाचा–चाची, ताऊ–ताई, बड़े भाई बहन और रिश्तेदारों नाना–नानी, मामा–मामी आदि के व्यवहार को देखते हैं और उनसे सीखते हैं। इन सभी सदस्यों का प्रभाव बालक के व्यक्तित्व पर सीधा पड़ता है। जो कालान्तर में उसको व्यक्तित्व का भाग बन जाता है। उदाहरण के लिए आप देखें कि यदि परिवार

में बालक इकलौती संतान है तो निश्चित ही उसे अधिक लाड़ प्यार मिलता है, फलस्वरूप वह जिद्दी और शरारती हो जाता है। आगे चलकर यह निर्भीक, निडर और साहसी बनता है। किन्तु जब आवश्यकता से अधिक शरारती होता है तो नियंत्रण की सीमा तोड़ देता है और इस प्रकार वह सामाज विरोधी व्यवहार करने लगता है। एक अन्य उदाहरण में यदि बालक को प्यार न किया जाए बात–बात पर झिड़का जाए तो वह दब्बू बन जाता है ओर कई बार वह उदंड बन जाता है।

यदि परिवार में आपराधिक किस्म के लोग हैं, या उनकी प्रवृत्तियां आपराधिक हैं तो बालक में भी आपराधिक प्रवृत्तियां जन्म ले लेती हैं।

(iii) **tUe Øe dk iHkko %** यह हम सब जानते हैं कि परिवार में सभी लोग सभी बच्चों से एक जैसा व्यवहार नहीं करते। वे सबसे बड़े या सबसे छोटे से अधिक प्यार करते हैं जिसका बालक की शारीरिक स्थिति कार्यशैली पर विशेष प्रभाव पड़ता है। जिस बालक को ज्यादा लाड़ प्यार मिलता है, वह दूसरों पर अत्यधिक निर्भर बन जाता है। इसके विपरीत जिसे लाड़–प्यार कम मिलता है, वह स्वावलम्बी व निर्दयी बन जाता है। उसे लगता है कि उसका अधिकार प्यार उसकी वजह से छिन गया है। आपने कई बार छोटे बच्चों को शिकायत करते सुना होगा कि मम्मी, पापा, दादा–दादी सब मेरे भाई को प्यार करते हैं। मुझे कोई नहीं करता और हम इस प्रकार वह अपने उस भाई के प्रति ईर्ष्या करने लगता है और अपना अधिकार बनाए रखने की कोशिश भी करता है। ऐसे में परिवार को इस बात का विशेष ख्याल रखना चाहिए।

¼[k½ **fo|ky; dk iHkko %** व्यक्तित्व विकास में विद्यालय, विद्यालय के अध्ययन, शिक्षक सहपाठी और भौगोलिक स्थिति का सीधा प्रभाव पड़ता है। इसमें विशेष रूप से निम्नांकित कारक व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करते हैं–

चित्र 12.7: विद्यालय का प्रभाव

(i) **f'k{kdk dk iHkko %** शिक्षक का व्यक्तित्व जितना अधिक प्रभावशाली होता है, बालक के व्यक्तित्व विकास पर उतना ही अनुकूल प्रभाव पड़ता है। यदि शिक्षकों में नकारात्मक गुण है तो निश्चित रूप से बालकों में भी उनका आना स्वाभाविक है।

(ii) **fo|ky;h f'k{kk dk iHkko %** विद्यालयी शिक्षा किस प्रकार की दी जाती है, इसका प्रभाव बालक के व्यक्तित्व पर पड़ता है। आजकल प्रायोगिक आधरित शिक्षा, मूल्यपरख शिक्षा, अनेकान्त धार्मिक शिक्षा व शारीरिक विकास की शिक्षा दी जानी बहुत आवश्यक है, जो बालक के व्यक्तित्व विकास में बहुत सहायक होती है।

(iii) **lgikfB;ks dk iHkko %** शिक्षार्थियों, बालक के व्यक्तित्व विकास पर उसके सहपाठियों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। जैसी संगति मिल जाती है वैसा ही व्यक्तित्व विकास होता है। बुद्धिमान अनुशासित, समय अनुपालन वाले छात्रों की संगति में अच्छा विकास होता है।

(iv) **fo|ky; dh HkkSxksfyd fLFkfr %** विद्यालय कहाँ स्थित है उसका भवन कैसा है? किस प्रकार का वातावरण है? वहाँ आसपास आवासीय या व्यावसायिक स्थिति है? आदि सभी की बालक के व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव पड़ता है। एक शान्त प्रदूषणमुक्त वातावरण में सड़क मार्ग से जुड़े, शानदार भवन वाले विद्यालय का बालक के व्यक्तित्व पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, वह अपने विद्यालय में पढ़ने में गर्व महसूस करता है।

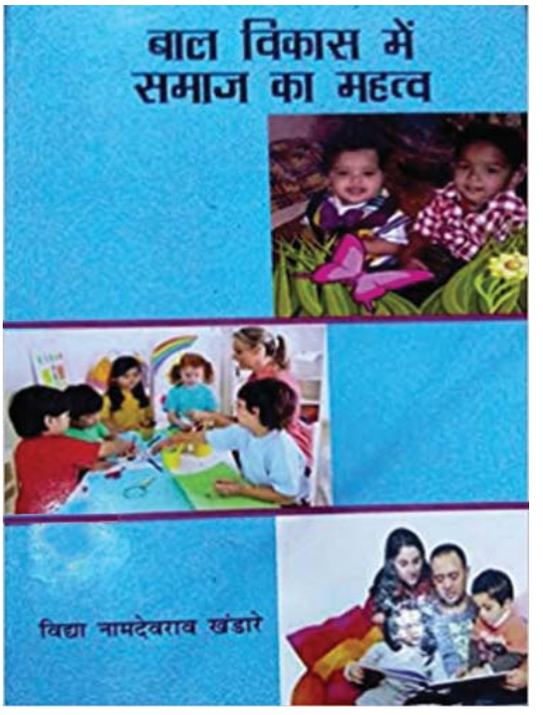

चित्र 7.8: समाज का प्रभाव

¼x½ **lekt dk izHkko %** व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज के बिना नहीं रह सकता। इसलिए उसी समाज का अंग एवं ईकाई के रूप में माना जाता है। चूंकि व्यक्ति समाज की परम्पराओं रीति–रिवाजों सांस्कृति समाजिक नियमों आदि का पालन करता है, अतः उसके व्यक्तित्व विकास पर इनका व्यापक प्रभाव पड़ता है।

जाति, वर्ण तथा व्यवसाय के अनुसार हर व्यक्ति की समाज में स्थिति भिन्न–भिन्न पायी जाती है। वर्ण भेद जैसे–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र की भी समाज में स्थितियां भिन्न–भिन्न ही है। समाज में कुछ लोग कुरीतियों जैसे– बाल विवाह, पर्दा प्रथा, जाति प्रथा के पक्षधर होते है तो कुछ लोग विरोधी। कुछ लोग समाज के नियमों का दृढ़ता से पालन करते है तो वहीं कुछ लोग तोड़ते दिखाई देते हैं। समाज में कुछ समाज सुधारक व सामाजिक कार्यकर्त्ता होते हैं तो वहीं कुछ समाज विरोधी भी और उपर्युक्त इस सबका प्रभाव बालक के व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है।

3. **lkaLÑfrd fu/kkjd (Cultural Determinants) %** शिक्षार्थियों अभी आपने व्यक्तित्व के विकास पर समाज का प्रभाव पढ़ा। आपने जाना कि जिस प्रकार समाज की विभिन्न परम्पराओं रीति–रिवाजों सामाजिक नियमों आदि का व्यापक प्रभाव व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है। ठीक उसी प्रकार हमारी संस्कृति की भी इसमें अहम भूमिका होती है। व्यक्ति का व्यक्तित्व उसकी संस्कृति के अनुरूप होता है क्योंकि जन्मकाल से ही शिशु का पालन पोषण तथा समाजीकरण उसकी सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप होता है और इसी प्रकार यह संस्कृति अपने को सुरक्षित रखती है। जिस संस्कृति में बालक का लालन–पालन होता है उसी संस्कृति के गुण उसके व्यक्तित्व में आ जाते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि संस्कृति और व्यक्तित्व दो भिन्न–भिन्न वस्तुएँ नहीं अपितु एक दूसरे के पूरक हैं। यहाँ इस तथ्य पर गौर करना भी आवश्यक है कि अलग–अलग संस्कृति के समाजों में रहन–सहन, रीति–रिवाजों, धर्म, कुल, मूल्य और परम्पराओं में भिन्नता देखी जा सकती है।

bdkbZxr iz'u&12-2

रिक्त स्थान भरिए :

1. व्यक्तित्व के विकास में व्यक्तित्व निर्धारकों को दो भागों में बांटा – (i) ..... और (ii) पर्यावरण।

2. थायराइड नामक ग्रंथि से ..... नामक हॉर्मोन स्रावित होता है।

3. ..... हॉर्मोन की कमी अथवा अभाव के कारण रक्त में शर्करा का पाचन नहीं होता।

टिप्पणी

vkiu D;k lh[kk

इस इकाई (यूनिट) में हमने सीखा कि :

- व्यक्तित्व एक बहुत ही महत्वपूर्ण तथा रोचक विषय है। किसी भी व्यक्ति के विषय में जानने के लिए उसके द्वारा किये जाने वाले व्यवहार उसके गुण, शारीरिक संरचना, विशेषताएँ आदि को जानना परम आवश्यक है।

- विशेषताएँ अर्थात् विशेष गुण जो अच्छे भी हो सकते है और बुरे भी। जैसे किसी शिक्षक के पढ़ाने व समझाने की वह अच्छी टेकनिक, उसका सौम्य एवं प्रेमपूर्ण व्यवहार, तो किसी शिक्षक का अकारण क्रोध, दण्डात्मक कार्यवाही, अनुचित व्यवहार।

- ''प्रत्येक व्यक्ति पाये जाने वाले कुछ विशेष गुणों, जो दूसरे व्यक्ति में नहीं होते और जिनके कारण प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से भिन्न बनता है, का संगठन व्यक्ति का व्यक्तित्व कहलाता है।''

- पर्सनलिटी (Personality) शब्द की उत्पत्ति, लैटिन भाषा के पर्सोना (Persona) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है– मुखौटा यानि बाह्य आवरण।

- व्यक्तित्व, उन अभ्यास के रूपों का समन्वय है, जो वातावरण में व्यक्ति के विशेष संतुलन प्रस्तुत करता है। **&dEiQ** (Kempf) **1919** के अनुसार

- व्यक्तित्व, व्यक्ति की समस्त जैविक जन्मजात विन्यास, उद्वेग, रूझान, क्षुदाएँ, मूल प्रवृत्तियां तथा अर्जित विन्यासों एवं प्रवृत्तियों का समूह है।

  –मार्टन प्रिंस (Morton Prince) 1924 के अनुसार

- व्यक्ति के विकास की किसी अवस्था पर उसके सम्पूर्ण संगठन को व्यक्तित्व कहते हैं।

  –वारेन तथा करमाइकल के अनुसार

- ''व्यक्तित्व व्यक्ति का उसके वातावरण के साथ अपूर्व व स्थायी समायोजन है।'' (Personality is an individual's consistent adjustment to his environment)
  –बोरिंग के अनुसार

- ''व्यक्तित्व व्यक्ति की उन मनोशारीरिक पद्धतियों का वह आन्तरिक गत्यात्मक संगठन है जो कि पर्यावरण में उसके अनन्य समायोजनों को निर्धारित करता है।''
- व्यक्तित्व को प्रभावित करने में कुछ विशेष तत्वों का सहयोग रहता है, इन्हें व्यक्तित्व निर्धारक कहते हैं। इन तत्वों के प्रभाव से ही उनके अनुरूप व्यक्तित्व का विकास होता है।
- व्यक्तित्व के निर्धारकों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है–

  जैविक निर्धारक और पर्यावरणीय निर्धारक।
- वे सभी निर्धारक तत्व, जो जैविक रूप से व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं, जैविक निर्धारक कहलाते हैं। मुख्य रूप से ये चार माने गये हैं–

  1. आनुवंशिकता
  2. अंतःस्रावी ग्रन्थियां
  3. शारीरिक गठन
  4. शारीरिक रसायन।
- ये वे निर्धारक हैं, जो प्रकृति, समाज और संस्कृति के द्वारा व्यक्तित्व को निर्धारित करते हैं।
- व्यक्तित्व के निर्धारकों को समझा और इनके आधार पर व्यक्तित्व को विकसित करने का कौशल सीखा। आपने सीखा कि यदि निर्धारकों पर नियंत्रण कर लिया जाय, तो व्यक्ति के व्यक्तित्व में बदलाव लाया जा सकता है।

bdkbZ d vUr e i'u

1. व्यक्तित्व से आप क्या समझते हैं? व्यक्तित्व की अवधारणा पर प्रकाश डालिए।
2. व्यक्तित्व के विकास में जैविकीय और पर्यावरणीय निर्धारकों का प्रभाव पड़ता है। इस कथन की विवेचना कीजिए।
3. जैविकीय निर्धारकों का व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पड़ता है? विस्तार से वर्णन कीजिए।

टिप्पणी

bdkbxr i'uk d mÙkj

12-1

1. लैटिन
2. मुखौटा
3. विशेष गुण

12-2

1. जैविक
2. थायरोक्सिन
3. इंसुलिन

13

मनोवैज्ञानिक समस्याएँ एवं यौगिक प्रबंधन

जैसा कि आपको पिछली यूनिटों में बताया जा चुका है कि मनोविज्ञान, मन का विज्ञान है और जब मन प्रसन्न होता है, प्रफुल्लित होता है तो सारे शरीर में रोमांच हो उठता है। वे पल खुशी के और आनन्द के होते हैं। इस समय में हमारे शरीर के सभी तंत्र एक बेहतर समन्वय के साथ कार्य कर रहे होते हैं। यदि कहीं जरा सी भी किसी अंग, तंत्र या शरीर में कोई व्याधि, दर्द या विकार आदि है, वह भी स्वतः ही ठीक होने लगता है। शरीर के अंदर हॉर्मोन्स का संतुलन भी ठीक बना रहता है। व्यक्तित्व का विकास होता है किन्तु जब मानसिक रूप से व्यथित होते हैं, तब हमारा स्वास्थ्य प्रभावित होने लगता है, यदि ये पीड़ा लगातार बनी रहती है तो इसके गम्भीर परिणाम उठाने पड़ते हैं। कभी–कभी रोगी पागल तक हो जाता है। इस इकाई (यूनिट) में हम इसी प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याओं एवं उनके यौगिक प्रबन्धन के विषय में अध्ययन करेंगे।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्या को समझ सकेंगे तथा प्रमुख मनोवैज्ञानिक समस्याओं का वर्णन कर सकेंगे;
- मानसिक तनाव व उत्पन्न होने के कारणों पर चर्चा कर सकेंगे तथा उसके लक्षणों को पहचान कर, यौगिक प्रबंधन कर सकेंगे;

टिप्पणी

- चिंता एवं अवसाद के कारणों का वर्णन कर सकेंगे तथा लक्षणों का उल्लेख करते हुए, यौगिक प्रबंधन को व्यवहार में ला सकेंगे।

13-1 LokLF; lc/kh eukoKkfud leL;k,¡

यह देखा गया है कि जो व्यक्ति अपने जीवनकाल में किसी भी घटने वाली घटना अथवा भविष्य को लेकर चिंतित नहीं रहते, तनाव नहीं लेते बल्कि मस्त रहते हैं उनका स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है और बुढ़ापा भी शीघ्र नहीं आता। वे शारीरिक रूप से भी हृष्ट–पुष्ट पाये जाते है। जबकि इसके विपरीत जो लोग जरा–जरा सी बात पर क्रोध करते हैं, चिंता करते हैं, भविष्य की अनहोनी का अनुमान लगाते रहते हैं, नकारात्मक सोच रखते हैं वे हमेशा अस्वस्थ बने रहते हैं, शारीरिक रूप से कमजोर और शीघ्र ही बूढ़े दिखने लगते हैं। उनकी मन की दशा विचलित रहती है और मन सम्बन्धी विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

अब आप यह समझ ही गये होंगे कि स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ, मन संबंधी वे विकार हैं जो व्यथित मन, भय, क्रोध, भविष्य में घटने वाली आशंका आदि के कारण उत्पन्न होती हैं।

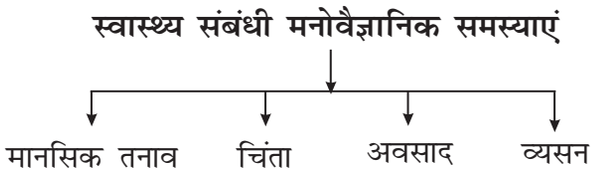

आइये अब यह जाने कि कौन–कौन सी प्रमुख मनोवैज्ञानिक समस्याएँ हैं? स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ निम्नांकित हो सकती हैं–

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि (स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याओं को हम, चार प्रमुख मनोवैज्ञानिक समस्याओं में बांट सकते हैं)

1. मानसिक
2. चिंता
3. अवसाद
4. व्यसन

13-2 ekufld ruko] y{k.k] dkj.k vkj ;kfxd ic/ku

स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों में तनाव एक बहुत बड़ी समस्या है। वर्तमान भौतिक युग में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जो तनाव से मुक्त हो। अपने लक्ष्यों की ओर बढ़ने और उन्हें पूरा करने के उद्देश्य से हम सदैव ही चिंतित और तनाव से ग्रसित रहते हैं। क्या आपने भी अनुभव किया है कि जब कोई लक्ष्य, समस्या या परिस्थिति हमारी क्षमता के नियंत्रण के बाहर होती है और स्वयं को असमर्थ पाते हैं, तो हमारे व्यवहार में स्वयं ही बदलाव आ जाता है और हम असामान्य हो जाते हैं। यह स्थिति तनाव कहलाती है। अर्थात् तनाव

वह मानसिक स्थिति है, जो किसी लक्ष्य समस्या या परिस्थिति के नियंत्रण में न रहने के कारण उत्पन्न होती है और व्यक्ति असामान्य व्यवहार करने लगता है।

व्यक्ति के शरीर एवं मन को समय–समय पर मिलने वाली चुनौतियों, जिनका सामना करने में वह स्वयं असहाय एवं असमर्थ समझता है, तो तनाव उत्पन्न हो जाता है।

आइये तनाव पर मनोवैज्ञानिक विद्वानों ने जो परिभाषाएँ दी है उनमें से एक–दो विद्वानों की परिभाषा नीचे दी जा रही है।

1. बेरोन द्वारा साइकोलॉजी (1992) में दी गई परिभाषा इस प्रकार है–

   ruko ,d ,lh cgvk;keh ifrfØ;k g tk geykxk e olh ?kVukvk d ifr vufØ;kvk d :i e mRiUu gkrh g] tk gekj nfgd ,o eukoKkfud dk;k dk fo?kfVr djrk g ;k fo?kfVr dju dh /kedh nrk gA

2. तनाव पर हेन्सशैली द्वारा द स्ट्रेस ऑफ लाइफ (1979) दी गई परिभाषा इस प्रकार है –

   ^ruko l rkRi;! 'kjhj }kjk vko';drkulkj fd;! x;! vof'k"V vufØ;k l gkrk gA**

   अपने शब्दों में हम कह सकते हैं कि 'तनाव एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जो व्यक्ति में परिस्थितियों पर नियंत्राण न कर पाने कारण उत्पन्न होता है।'

13-2-1 ruko d idkj

तनाव मुख्यतः दो प्रकार का हो सकता है– सकारात्मक तनाव एवं नकारात्मक तनाव।

(क) **ldkjkRed ruko %** सकारात्मक तनाव वह स्थिति है, जिसमें व्यक्ति तनावयुक्त घटना से चिंतित और परेशान नहीं होता अपितु उसका सामना करने के लिए उसे एक चुनौती के रूप में लेता है।

- सकारात्मक तनाव में व्यक्ति की सोच सकारात्मक बनी रहती है।
- वह अपेक्षाकृत अधिक सजग एवं जागरूक होकर अपनी क्षमताओं के अनुसार उससे निपटता है।
- व्यक्ति की कार्य करने की क्षमता सामान्य से अधिक हो जाती है।

(ख) **udkjkRed ruko %** नकारात्मक तनाव सकारात्मक तनाव की ठीक विपरीत स्थिति है जिसमें व्यक्ति तनाव युक्त परिस्थितियों से निपटने में अपने आपको असमर्थ और असहाय पाता है और वह चिंतित व परेशान हो उठता है।

- नकारात्मक तनाव में व्यक्ति की सोच नकारात्मक बनी रहती है।
- वह स्वयं की उन परिस्थितियों से निपटने में असमर्थ और असहाय पाता है।
- व्यक्ति चिंता व शोक में डूब जाता है। कार्य करने की क्षमता और कम हो जाती है।

चित्र 13.1: तनाव

13.2.2 तनाव के कारण

इस विषय पर गहन अध्ययन करने पर मनोवैज्ञानिक द्वारा प्रमुख कारक बताएं हैं–

1. जीवन की अप्रिय परिस्थितियां
2. सकारात्मक दृष्टिकोण की कमी
3. अत्यधिक प्रतिस्पर्धायुक्त जीवन
4. अपनी क्षमताओं का ठीक से मूल्यांकन न कर पाना
5. दूसरों पर निर्भर रहने की आदत बना लेना
6. स्वार्थ और अहंकार की भावना
7. ईश्वर में श्रद्धा व विश्वास की कमी
8. समय प्रबंधन का अभाव

13.2.3 तनाव के लक्षण

निम्नांकित सांकेतिक लक्षणों के आधार पर आप तनावग्रस्त व्यक्ति को पहचान सकते हैं–

शारीरिक लक्षण	मानसिक लक्षण
1. उच्च रक्तचाप होना	मानसिक संतुलन का अभाव
2. हृदय की गति को बढ़ना	भय
3. नाड़ी गति का बढ़ना	चिंता
4. श्वास की गति का बढ़ना	बेचैनी
5. कब्ज/अजीर्ण	चिड़चिड़ापन
6. शारीरिक थकान	नकारात्मक भाव

टिप्पणी

7.	सिर दर्द और सम्पूर्ण शरीर में तनाव	आत्म विश्वास में कमी
8.	भूख न लगना	स्वयं को निर्बल महसूस करना
9.	वजन का कम होना	दूसरे के साथ संतोषजनक व्यवहार न कर पाना
10.	रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी	समायोजन की कमी

उपर्युक्त लक्षणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि तनाव को नकारात्मक ढंग से लेने पर यह मन व शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव डालता है और फिर धीरे–धीरे यह चिंता व अवसाद जैसी मानसिक बीमारी में बदल जाता है।

13-2-4 ruko dk ;kfxd icU/ku

प्रिय शिक्षार्थियों आज की भागदौड़ वाली व्यस्त जीवन शैली में तनाव एक विकट समस्या बन गया है, जिसे दूर करने के लिए यौगिक जीवनशैली ही उत्तम एवं स्थायी समाधान है। आइये तनाव को नियंत्रित करने के उपायों पर चर्चा करें–

1. स्वयं को परमात्मा का अभिन्न अंग समझें।
2. समय की मर्यादा का पालन करें, महत्व को समझें।
3. ईश्वर की अनुकूल व प्रतिकूल दोनों परिस्थितियों में प्रार्थना करें।
4. भविष्य की चिंता छोड़कर, वर्तमान में कर्त्तव्य पालन करें।
5. सकारात्मक दृष्टिकोण रेखें।
6. षट्कर्म का व्यावहारिक अभ्यास करें –

   (i) **tyufr** % तनावमुक्त रहने के लिए कापफी प्रभावी है। मस्तिष्क के न्यूरोन्स में सही ढ़ंग से नेट वकिंग होने लगती है। तमोगुण बढ़ाने वाले विजातीय द्रव्य निकल जाते हैं।

   (ii) **=kVd** % नकारात्मक चिन्तन दूर होता है। मानसिक संतुलन बनता है।

   (iii) **dikyHkkfr** % नियमित अभ्यास से मन में दबी इच्छाएँ बाहर निकलती हैं, जिससे व्यक्ति स्वयं तनावमुक्त महसूस करता है।

   (iv) **vklu** : आसन के अभ्यास से शारीरिक स्थिरता बढ़ती है, जिससे मन स्थिर एवं शांत होने लगता है।

   (v) **ik.kk;ke** : प्राण स्थिर होते हैं। ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से सम्पर्क होने के कारण उसमें प्राण की मात्रा बढ़ने लगती है।

   (vi) **/kkj.kk** : नियमित रूप से किसी एक आदर्श लक्ष्य में स्थिर करें।

   (vii) **ikr%dkyhu Hke.k** % सूर्योदय से पूर्व प्रातःकाल भ्रमण समाकलन ऊर्जा प्रदान करता है।

टिप्पणी

bdkbxr i'u&13-1

सत्य/असत्य बताइये–

1. तनाव में व्यक्ति परिस्थिति को नियंत्रित करने में असफल रहता है। ( )
2. तनाव, चिंता, अवसाद आदि स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ नहीं हैं। ( )
3. तनाव वह मानसिक स्थिति है, जो किसी लक्ष्य, समस्या या परिस्थिति के नियंत्रण में न रहने के कारण उत्पन्न होती है। ( )
4. सकारात्मक तनाव में व्यक्ति की सोच नकारात्मक बनी रहती है। ( )
5. कपालभाति के नियमित अभ्यास से मन में दबी हुई इच्छाएँ बाहर निकलने लगती है, जिससे व्यक्ति का तनाव कम होने लगता है। ( )

13-3 fprk ,o volkn] y{k.k] dkj.k ,o ;kfxd ic/ku

शिक्षार्थियों, इससे पहले हम मानसिक तनाव पर चर्चा कर चुके हैं, जिसमें आपको बताया गया कि मानसिक तनाव क्या है, इसके लक्षण क्या हैं? वे कारण कौन से हैं जिनकी वजह से तनाव उत्पन्न होता है और साथ ही यह भी समझाया गया कि मानसिक तनाव को दूर करने का सबसे बेहतर उपाय यौगिक प्रबंधन है। यदि मानसिक तनाव का कोई समाधन नहीं होता और यह स्थिति लम्बे समय तक बनी रहती है तो आगे चलकर यही तनाव चिन्ता में बदल जाता है और लगातार चिंतित बने रहने से अवसाद (डिप्रैशन) की स्थिति आ जाती है। अर्थात् मानसिक तनाव से चिन्ता और चिन्ता ही अवसाद को जन्म देती है।

13-3-1 fprk

चिंता एक दुःखद भावनात्मक स्थिति है, जिससे व्यक्ति एक अनजाने भय से ग्रस्त रहता है और बेचैन रहता है। हम सभी अपने जीवन में भविष्य की योजनाएँ तैयार करते हैं। इन योजनाओं को पूरा करने व लक्ष्य तक पहुँचने में कुछ समस्याओं के कारण आशंकाएँ दिखती हैं, भय लगता है, तो स्वतः ही मन में एक अनहोनी का विचार उठता है, जिसे चिंता कहते हैं।

चिंता को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–

^fprk oLrr% 0;fDr dk Hkfo"; e gkus okyh fdlh Hk;kud leL;k dh prkouh dk ladr g*A

कुछ लोग छोटी–छोटी समस्याओं को भी बहुत अधिक तनावपूर्ण ढंग से लेते हैं और चिंताग्रस्त हो जाते हैं। जबकि कुछ लोग बड़ी–बड़ी समस्याओं व कठिन परिस्थितियों को भी सहजता से लेते हैं और शान्त भाव व विवेकपूर्ण ढंग से समस्याओं का समाधन करते हैं। यह स्पष्ट हो जाता है कि चिंताग्रस्त होना किसी भी व्यक्ति के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।

शिक्षार्थियों, चिंता से हमारे दैनिक जीवन के सारे क्रियाकलाप प्रभावित होते हैं। यहाँ तक कि हमारी बुद्धि, काम करने की क्षमता, सृजनात्मक क्षमता इत्यादि सभी चिंता से प्रभावित होती है। कभी–कभी यह देखा गया है कि अत्यध्कि चिंताग्रस्त व्यक्ति का व्यक्तित्व ही बुरी तरह प्रभावित हो जाता है।

आइये अब कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा चिंता की जो परिभाषाएँ दी हैं उनमें से एक–दो परिभाषाओं पर विचार करें –

1. फ्रायड (1924) ने चिंता को इस प्रकार परिभाषित किया है:

   ^^fpark ,d HkkoukRed ,oa nq%[kn voLFkk gksrh gS tks O;fDr dks vga dks vkyfEcr [krjs ls lrdZ djrh gS] rkfd O;fDr okrkoj.k ds lkFk vuqdwy <x ls O;ogkj dj ldsA

2. अमेरिकन साइकेट्रिक ऐसोशिऐश्न 2005 एवं बारलोप 1988 के अनुसार, **fpark ,d ,slh euksn'kk gS] ftlds igpku fpfUgr udkjkRed iHkko ls ruko ds 'kkjhfjd y{k.kksa ykHkfoR; ds ifr Hk; ls dh tkrh gSA**

3- **^^fpark ,oa volkn nksuksa gh ruko ds Øfed lkosfxd iHkko gSA vfr xEHkhj ruko dkykUrj esa fpark esa ifjofrZr gks tkrk gS vkSj nh?kZ LFkk;h fpark] volkn dk :i ys yrh gSA**** यह परिभाषा बारलोव, 1998 द्वारा दी गई है।

13-3-2 fpark ds y{k.k

शिक्षार्थियों आपने देखा होगा कि जब कोई व्यक्ति चिंताग्रस्त रहता है तो किस प्रकार वह स्वयं में खो जाता है या उसके मुखमंडल पर लकीरें खिंच जाती है। वह बेचैन व अप्रसन्न दिखता है और कौन–कौन से लक्षण दिखाई देते हैं? इस पर निम्नांकित बिंदुओं के अंतर्गत विवेचना करते हैं–

1. दैहिक लक्षण
2. सांवेगिक लक्षण
3. संज्ञानात्मक लक्षण
4. व्यवहारात्मक लक्षण

चित्र 13.2: चिंता के लक्षण सिर दर्द

टिप्पणी

टिप्पणी

nfgd y{k.k

1. सिर दर्द होना
2. हृदयगति व नाड़ी गति का तेज होना
3. अत्यधिक शारीरिक थकान होना
4. शारीरिक मांसपेशियों में तनाव की स्थिति
5. उच्च रक्त चाप
6. पसीना आना आदि।

Ikofgd y{k.k

1. बेचैनी एवं अप्रसन्नता
2. उदासी एवं निराशा के भाव
3. परेशान
4. चिड़चिड़ापन

IKkukRed y{k.k

1. नकारात्मक विचारों का आना
2. भविष्य के बारे में दुःखद कल्पनाएँ करना

0;kogkjkRed y{k.k

1. दूसरे लोगों से अपने आपको छिपाने का प्रयास करना
2. निर्णय लेने में कठिनता
3. अंतर्मुखी होना

अब आप उन लोगों को पहचानने में समर्थ हो सकते हैं जो चिंता से ग्रसित होंगे।

13-3-3 fpark l fHkUu fpru

शिक्षार्थियों अभी आपने चिंता के विषय में जाना। चिंता की तरह मिलता जुलता एक शब्द है चिन्तन ये चिंतन क्या है? आप सोच रहे होंगे दोनों शब्द मिलते–जुलते ही हैं। दोनों में कोई विशेष अन्तर नहीं होगा। लेकिन

वास्तविकता यह नहीं है। ''चिंतन एक मानसिक प्रक्रिया है और ज्ञानात्मक व्यवहार का जटिल रूप है। सभी प्राणियों में सोचने, समझने एवं चिंतन करने की क्षमता होती है। किन्तु मनुष्य ऐसा प्राणी है जो अन्य प्राणियों से बेहतर सोचने, समझने और चिंतन की क्षमता रखता है। इसी कारण मनुष्य को प्राणियों में विकसित प्राणी माना गया है। यहाँ एक बात जाननी आवश्यक है कि प्रत्येक मनुष्य में सोचने, समझने और चिंतन करने की क्षमता भिन्न–भिन्न होती है।

चिंतन के अंतर्गत हम विचार को जांचते हैं, समालोचना करते हैं, तुलना करते हैं, प्रश्न–प्रतिप्रश्न करते हैं, विश्लेषण करते हैं और दोहराते हैं आदि। अतः चिंतन एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है जो हमारे मस्तिष्क में चलती रहती है। इसमें अनेक आंतरिक क्षमताओं जैसे– कल्पना, एकाग्रता, जागरूकता, समझ, स्मृति आदि का उपयोग होता रहता है।

मनोवैज्ञानिक वुडवर्थ ने चिंतन को बाधाओं के निवारण का एक साधन बताया है। उनके अनुसार ''चिंतन बाधाओं के निवारण का एक साधन है।''

13-3-4 volkn

अवसाद पर चर्चा करने से पहले शिक्षार्थियों एक बार हम तनाव और चिंता पर विचार करें। जैसाकि आपको उक्त संबंधित उपविषयों के बारे में बताया गया है कि मानसिक तनाव लम्बे समय तक बने रहने पर, यह चिंता में बदल जाता है और लम्बे समय बनी रहने वाली चिंता अवसाद में बदल जाती है। अर्थात् किसी व्यक्ति में बहुत लम्बे समय तक बनी चिंता की स्थिति ''अवसाद'' का रूप धारण कर लेती है। यह मनोदशा विकृति है। अवसाद के दौरान उस व्यक्ति की स्थिति कैसी हो सकती है? आइये जानें–

- व्यक्ति का मन बहुत उदास रहता है।
- व्यक्ति अकेले रहना पसंद करता हैं।
- निष्क्रियता जन्म लेती है।
- आत्म हत्या करने की प्रवृत्ति पायी जाती है।
- अवसाद ग्रस्त व्यक्ति स्वयं को दीनहीन, निर्बल मानकर जिंदगी को कुछ नहीं समझता है।
- अपने भविष्य के विषय में नकारात्मक सोचते हैं।
- अपने दैनिक कार्यों में रूचि नहीं होती है।
- अपनी स्वेच्छा से कार्य करने की प्रवृत्ति नहीं होती।
- पहल करने की प्रवृत्ति भी कम होती है।
- अकेले रहने की प्रवृत्ति।
- लोगों से मिलना जुलना नहीं।
- सिरदर्द बने रहना।
- कब्ज व अपच रहना।
- पूरे शरीर में दर्द एवं थकान रहना।

टिप्पणी

- भोजन में रूचि न होना।
- अनिद्रा यानि नींद न आना।

शिक्षार्थियों, उपर्युक्त स्थितियां अवसाद के लक्षण हैं। इन लक्षणों के आधार पर एक मनोदशा विकृत अवसादी व्यक्ति को पहचान सकते है।

13-3-5 fpark ,oa volkn ds dkj.k

चिंता एवं अवसाद के भिन्न–भिन्न कारण हो सकते हैं। मुख्य रूप से इसका कारण ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियां हैं, जिनमें व्यक्ति स्वयं को असहाय एवं निर्बल महसूस करता है। स्थिति उसके नियंत्रण से बाहर होती है। इसके पीछे कई बार आनुवांशिक कारण भी होते हैं, जिसके लिए कुछ जींस जिम्मेदार होते हैं।

13-3-6 fpark ,oa volkn dk ;kfxd izcU/ku

शिक्षार्थियों, आप योग के विभिन्न यौगिक अभ्यास पढ़ चुके हैं। ये यौगिक अभ्यास आरोग्यता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहाँ यह बताना भी बहुत आवश्यक होगा कि योग का चाहे कोई भी अभ्यास, जैसे–आसन, प्राणायाम, ध्यान, मंत्र, जाप इत्यादि इन सभी का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति के चिंतन, चरित्र एवं व्यवहार की त्रुटियों को दूर करके उसे स्वच्छ व शुद्ध बनाना है।

योग अभ्यास वास्तव में प्राण ऊर्जा के अवरोधों को हटाकर चित्त को निर्मल करते हैं जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति नकारात्मक विचारों को छोड़कर सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ता है। इस प्रकार धीरे–धीरे नियमित योगाभ्यास व योगमयी दिनचर्या से व्यक्ति की सभी समस्याओं और रोगों का निदान हो जाता है।

आइये अब चिंता एवं अवसाद जैसी मानसिक बिमारियों से निपटने के लिए यौगिक प्रबंधन को जानें। हालांकि इन दोनों ही मानसिक समस्याओं के लिए यौगिक अभ्यास लगभग मिलते जुलते हैं। अब पहले चिंता के यौगिक प्रबंधन की चर्चा करते हैं और जानते है कि कौन–कौन से यौगिक अभ्यास रोगी को कराया जाना आवश्यक है।

fpark dk ;kfxd izcU/ku

"kVdeZ % षट्कर्म अर्थात् यौगिक शुद्धि क्रियाओं में जलनेति, कपालभाति और कुंजल

lw{e fØ;k,¡ % श्वास–प्रश्वास की सजगता के साथ संधि संचालन के अभ्यास

vklu %

- ताड़ासन, तिर्यक ताड़ासन, कटिचक्रासन (5 से 10 बार)।
- सूर्यनमस्कार (3–5 बार)।
- पद्मासन, सिद्धासन, स्वास्तिक आसन, गोमुखासन, शशांक आसन, वज्रासन, सर्वांगासन, हलासन, सिंहासन, शवासन (15 से 20 मिनट)।

ukV % iR;sd vklu ds ckn dN le; foJke vko';d gSA

eukoKkfud leL;k,¡ ,o ;kfxd ic/ku

ik.kk;ke

- नाड़ीशोधन
- भ्रामरी
- उज्जायी
- चन्द्रभेदी

f'kfFkyhdj.k d vH;kl

- योगनिद्रा
- मंत्र

  ओउम्, गायत्री या महामृत्युन्जय जप
- प्रातःकालीन भ्रमण
- सात्विक यौगिक आहार
- समय पालन
- स्वाध्याय
- सत्कर्म के लिए ईश्वरीय प्रार्थना

volkn d fy, ;kfxd ic/ku

'kVde % शुद्धि क्रियाओं में जलनेति, कपालभाति, वमन

;kfxd l{e vH;kl % संधि संचालन के अभ्यास

vklu %

- ताड़ासन, तिर्यक ताड़ासन, कटि चक्रासन।
- सूर्यनमस्कार।
- उत्तानपादासन, हलासन, विपरीत करणी आसन, सर्वांगासन, भुजंगासन, शशांकासन, सिंहासन।

ik.kk;ke

- नाड़ीशोधन
- भस्त्रिका

टिप्पणी

टिप्पणी

- भ्रामरी
- सूर्यभेदी

e= tils

- महामृत्युजन्यज मंत्र
- ओउम्
- प्रातःकालीन भ्रमण
- सात्विक भोजन
- कार्यों में व्यस्तता
- सकारात्मक कथाओं का पढ़ना व सुनना

lko/kkfu;k

अवसाद के रोगियों को योगनिद्रा एवं ध्यान के अभ्यास नहीं कराने चाहिए। ऐसा कोई अभ्यास नहीं कराना चाहिए जिससे, रोगी अंतर्मुखी हो।

bdkbZxr iz'u&13-2

1. चिंता क्या है?
2. वुडवर्थ के अनुसार चिंतन की परिभाषा लिखिए।
3. अवसाद के कोई दो मुख्य लक्षण बताईये।

vkiu D;k lh[kk

इस इकाई (यूनिट) में आपने सीखा कि–

- स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ, मन की समस्याएँ अथवा विकार हैं, जो व्यथित, मन, भय, क्रोध भविष्य में घटने वाली आशंका आदि के कारण उत्पन्न होती हैं।
- मानसिक तनाव चिंता, अवसाद और व्यसन मुख्य स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ अथवा विकार हैं, जिनके लक्षण पहचान कर यौगिक प्रबंधन को व्यवहार में लाया जा सकता है।
- तनाव वह मानसिक स्थिति है, जो किसी लक्ष्य समस्या या परिस्थिति के नियंत्रण में न रहने के कारण

टिप्पणी

उत्पन्न होती है और व्यक्ति असामानय व्यवहार करने लगता है।

- तनाव मुख्यतः दो प्रकार का हो सकता है– सकारात्मक तनाव एवं नकारात्मक तनाव।
- आज की भागदौड़ वाली व्यस्त जीवनशैली में तनाव एक विकट समस्या बन गयी है, जिसे दूर करने के लिए यौगिक जीवनशैली ही उत्तम एवं स्थायी समाधान है।
- 'चिंता वस्तुतः व्यक्ति को भविष्य में होने वाली किसी भयानक समस्या की चेतावनी का संकेत है'।
- चिंता से हमारे दैनिक जीवन के सारे क्रियाकलाप प्रभावित होते हैं। यहाँ तक कि हमारी बुद्धि, काम करने की क्षमता, सृजनात्मक क्षमता इत्यादि सभी चिंता से प्रभावित होती है। कभी–कभी यह देखा गया है कि अत्यधिक चिंताग्रस्त व्यक्ति का व्यक्तित्व ही बुरी तरह प्रभावित हो जाता है।
- जब कोई व्यक्ति चिंताग्रस्त रहता है तो वह स्वयं में खो जाता है या उसके मुखमंडल पर लकीरें खिंच जाती है। वह बेचैन व अप्रसन्न दिखता है।
- ''चिंतन एक मानसिक प्रक्रिया है और ज्ञानात्मक व्यवहार का जटिल रूप है। सभी प्राणियों में सोचने, समझने एवं चिंतन करने की क्षमता होती है। किन्तु मनुष्य ऐसा प्राणी है जो अन्य प्राणियों से बेहतर सोचने, समझने और चिंतन की क्षमता रखता है। इसी कारण मनुष्य को प्राणियों में विकसित प्राणी माना गया है।
- मनोवैज्ञानिक वुडवर्थ ने चिंतन को बाधाओं के निवारण का एक साधन बताया है। उनके अनुसार ''चिंतन बाधाओं के निवारण का एक साधन है।''
- किसी व्यक्ति में बहुत लम्बे समय तक बनी चिंता की स्थिति ''अवसाद'' का रूप धारण कर लेती है। यह मनोदशा विकृति है।
- चिंता एवं अवसाद के भिन्न–भिन्न कारण हो सकते हैं। मुख्य रूप से इसका कारण ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियां हैं, जिनमें व्यक्ति स्वयं को असहाय एवं निर्बल महसूस करता है। स्थिति उसके नियंत्रण से बाहर होती है। इसके पीछे कई बार आनुवांशिक कारण भी होते हैं, जिसके लिए कुछ जींस जिम्मेदार होते हैं।
- यौगिक अभ्यास आरोग्यता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- योग का चाहे कोई भी अभ्यास, जैसे–आसन, प्राणायाम, ध्यान, मंत्र, जाप इत्यादि इन सभी का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति के चिंतन, चरित्र एवं व्यवहार की त्रुटियों को दूर करके उसे स्वच्छ व शुद्ध बनाना है।
- योग अभ्यास वास्तव में प्राण ऊर्जा के अवरोधों को हटाकर चित्त को निर्मल करते हैं जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति नकारात्मक विचारों को छोड़कर सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ता है। इस प्रकार धीरे–धीरे नियमित योगाभ्यास व योगमयी दिनचर्या से व्यक्ति की सभी समस्याओं और रोगों का निदान हो जाता है।
- अवसाद के रोगियों को योगनिद्रा एवं ध्यान के अभ्यास नहीं कराने चाहिए। ऐसा कोई अभ्यास नहीं कराना चाहिए जिससे रोगी अंतर्मुखी हो।

टिप्पणी

bdkbZ dk vUr esa iz'u

1. स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्या से आप क्या समझते है? सभी मुख्य स्वास्थ्य संबंधी मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।
2. मानसिक तनाव पर मनोवैज्ञानिक बेरोन द्वारा दी गई परिभाषा लिखिए और मानसिक लक्षणों को वर्णन करते हुए, इसके यौगिक प्रबंधन का उल्लेख कीजिए।
3. चिंता और चिंतन में अंतर बताते हुए, चिंता के कारण, लक्षण और इसके यौगिक प्रबंधन को समझाइये।
4. अवसाद से आप क्या समझते हैं? अवसाद के लक्षण बताते हुए, इसके यौगिक प्रबंधन पर प्रकाश डालिए।

bdkbZxr iz'uksa ds mÙkj

13-1

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. सत्य

13-2

1. चिंता वस्तुतः व्यक्ति को भविष्य में होने वाली किसी भयानक समस्या की चेतावनी का संकेत है।
2. वुडवर्थ के अनुसार, चिंतन बाधाओं के निवारण का एक साधन है।
3. (i) व्यक्ति अकेले रहना पसंद करता है।

   (ii) आत्म हत्या करने की प्रवृति पायी जाती है।

14

व्यसन एवं मादक पदार्थों का कुप्रभाव और मुक्ति

शिक्षार्थियों, व्यसन अर्थात् बुरी आदत आज व्यसन एक बहुत बड़ी सामाजिक समस्या है, जो प्रमुख रोग के रूप में हमारे सामने आ रही है। बहुत से किशोर एवं युवक इस रोग की चपेट में आ रहे हैं। भौतिक शान–शौकत, कुसंगति और प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण, लोग मादक द्रव्यों एवं औषधियों को लेना शुरू कर देते हैं। हालांकि ये द्रव्य कुछ समय के लिए तो व्यक्ति के चेहरे पर प्रसन्नता और आराम के भाव दिखाते हैं, लेकिन अंत में उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर अत्यन्त घातक प्रभाव पड़ता है। इस इकाई (यूनिट) में हम, व्यसन, प्रकृति, लक्षण, कारक और मादक पदार्थों के कुप्रभाव की चर्चा करेंगे।

mís';

इस इकाई (यूनिट) का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- व्यसन के आशय को समझाते हुए, इसकी प्रकृति, लक्षण और कारणों पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- मादक पदार्थों के दुष्प्रभावों का वर्णन कर सकेंगे;
- व्यसन मुक्ति के लिए, यौगिक प्रबंधन को व्यवहार में ला सकेंगे।

14-1 0;lu

व्यसन एक ऐसी आसक्ति (addiction) है, जिसमें व्यक्ति दुष्परिणामों को जानते हुए भी मादक द्रव्यों जैसे ड्रग्स, एल्कोहल, भांग, गांजा जैसे नशीले पदार्थ का सेवन करने के लिए बाध्य हो जाता है। इन मादक द्रव्यों

टिप्पणी

के बिना सेवन के वह रह नहीं सकता। आपने समाज में देखा ही होगा, कि आजकल लोगों में इस प्रकार की प्रवृति बढ़ती जा रही है।

व्यसन के लिए मादक द्रव्यों में बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू–गुटका, बीअर, शराब, भांग, चरस, गांजा, हीरोइन, ब्राउन शुगर आदि सम्मिलित हैं। यहाँ ध्यान रखने की एक और महत्वपूर्ण बात है कि व्यसन मात्र उक्त पारम्परिक पदार्थों के सेवन तक ही सीमित नहीं है। यह चाय, कॉफी, चॉकलेट, यौनक्रिया, जुआ आदि का भी हो सकता है, जिससे व्यक्ति की आध्यात्मिक जीवन के क्षमता का भी ह्रास हो जाता है।

चित्र 14.1: व्यसन में फंसा व्यक्ति

14-1-1 0; lu l vk'k;

डाइग्नॉस्टिक एण्ड स्टैटिस्टिकल मैनुअल–IV के अनुसार मनोविज्ञान की भाषा में व्यसन एक द्रव्य संबंधी विकृति है जिसमें व्यक्ति विभिन्न प्रकार के रासायनिक द्रव्यों का सेवन करने लगता है और धीरे–धीरे इनके सेवन का आदी होता जाता है।

शिक्षार्थियों, इस प्रकार व्यक्ति न चाहते हुए भी मादक द्रव्यों के सेवन हेतु विवश हो जाता है। यह एक मनोवैज्ञानिक रोग है। इसे द्रव्य संबंधी रोग भी कहा जाता है। द्रव्य संबंधी रोग को DSM-IV के अनुसार दो शब्दों के साथ स्पष्ट किया जा सकता है :

द्रव्य संबंधी रोग

- द्रव्य दुरूपयोग
- द्रव्य निर्भरता

1. **n0; n:i;kx** % यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति मादक द्रव्यों का लगातार सेवन करता है और पारिवारिक, व्यावसायिक तथा अन्य दायित्वों को पूरा करने में असफल होता जाता है। यह स्थिति बहुत गंभीर नहीं है। इसमें व्यक्ति को नियंत्रित किया जा सकता है।

2. **n0; fuHkjrk %** इसमें व्यक्ति मादक द्रव्यों पर निर्भर होता जाता है। उसे ऐसा महसूस होता है कि उस मादक द्रव्य के बिना वह जी नहीं सकता। वह इस तरह निर्भर हो जाता है कि यदि उसे वह मादक द्रव्य न मिले तो वह पागलों जैसा व्यवहार करने लगता है और मिल जाए तो उसमें एक अजीब सी स्फूर्ति, शक्ति आ जाती है। यह दो प्रकार की हो सकती है– मनोवैज्ञानिक एवं दैहिक।

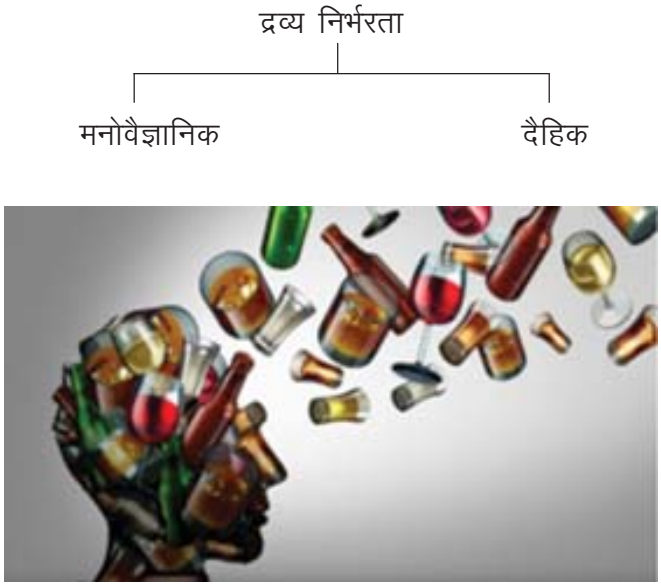

द्रव्य निर्भरता
- मनोवैज्ञानिक
- दैहिक

चित्र 14.2: द्रव्य निर्भरता

(क) **eukoSKkfud n0; fuHkjrk** में व्यक्ति का मन हमेशा उस द्रव्य को किसी प्रकार प्राप्त करने में लगा रहता है। उसकी संगति भी इसी प्रकार के लोगों से हो जाती है।

(ख) **nfgd fuHkjrk %** मादक द्रव्यों के सेवन की मनोवैज्ञानिक निर्भरता, दैहिक निर्भरता को जन्म देती है। धीरे–धीरे व्यक्ति के शरीर को उन द्रव्यों पर निर्भर रहने की आदत पड़ जाती हैं। उसके बिना शरीर में बेचैनी, घबराहट होने लगती है और कई बार तो व्यक्ति की मृत्यु तक हो जाती है।

चित्र 14.3: दैहिक निर्भरता

टिप्पणी

14-1-2 lay{k.k

शिक्षार्थियों, जब व्यक्ति लगातार एक लम्बे समय तक, अत्यधिक मात्रा में बार–बार मादक द्रव्य का सेवन करता है तो उसमें दो प्रकार के संलक्षण उत्पन्न हो जाते हैं– सहनशीलता एवं प्रत्याहार।

lgu'khyrk % सहनशीलता से आशय एक शारीरिक प्रक्रिया से है जिसमें–

- व्यक्ति उस मादक द्रव्य के लेने का आदी हो चुका होता है।
- इच्छित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए, उसे उस द्रव्य की मात्रा का सेवन बढ़ाना पड़ता है।

iR;kgkj lay{k.k % जब व्यक्ति व्यसनी द्रव्य का सेवन नहीं करता, तो;

- उसके शरीर और मन में कई प्रकार की विकृतियां उत्पन्न हो जाती है।
- मन अशांत और बेचैन रहता है।
- शरीर में दर्द, कम्पन होने लगते हैं।
- कई बार रोगी की मृत्यु तक हो जाती है।

शिक्षार्थियों आज समाज में व्यसन बढ़ता ही जा रहा है, जिससे व्यक्तियों में लगातार अपराध की प्रवृति भी बढ़ती जा रही है। आइये जानें कि, व्यसन के मुख्य कारण क्या–क्या हैं?

14-1-3 O;lu ds dkj.k

व्यसन के निम्न कारण हो सकते हैं–

- **vkuqoaf'kd dkj.k %** व्यक्ति के माता–पिता, परिवार या पीढ़ी में व्यसन की आदत है या रही है तो आनुवांशिकता के आधार पर उस व्यक्ति में भी व्यसन से ग्रसित होने की संभावना हो सकती है।
- **lefpr ns[kHkky u gksus ds dkj.k %** यदि किसी बच्चे को समुचित देखभाल, माता–पिता व परिवार का पर्याप्त प्यार व स्नेह न मिले तो व्यक्ति में व्यसन का जन्म हो जाता है।
- **dqlax ds dkj.k %** जब व्यक्ति को कुसंग का साथ मिल जाता है, तो भी देखा गया है कि व्यक्ति में व्यसन उत्पन्न हो जाता है।
- **Lo;a dh xyrh vFkok fdlh ds vkxzg ds dkj.k %** व्यक्ति, जब कभी गलती से या किसी आग्रह पर मादक द्रव्य लेने को प्रेरित हो जाता है और उसे इसके प्रयोग से उत्साह, स्फूर्ति, प्रसन्नता का अहसास होने लगता है वह स्वयं को हल्का एवं तरोताजा महसूस करते हैं। तब भी व्यक्ति व्यसन से ग्रसित हो जाता है। यह व्यवहार परक विचारधारा है जिसका समर्थन मनोवैज्ञानिक क्लाक, जोषेफ्रष, स्टीली, सेचिटी आदि के द्वारा किया गया है।

चित्र 14.4: कुसंग

- **lkekftd lkaLÑfrd fopkj/kkjk dk dkj.k%** सामाजिक सांस्कृतिक विचारधारा भी इसका एक मुख्य कारण है। जब व्यक्ति संबंधित परिवारों व समाज के तनावयुक्त माहौल को देखता है, तो उसमें व्यसन की विकृति आ ही जाती है और सांस्कृतिक समारोहों, कार्यक्रमों में व्यसनी द्रव्यों का सेवन शान समझा जाता है और फिर धीरे–धीरे व्यक्ति व्यसन की ओर बढ़ जाता है।

ये उपर्युक्त ऐसे मुख्य कारण हैं जिनके कारण एक सुसभ्य व्यक्ति, इन परिस्थितियों के तहत व्यसनी बन सकता है और यदि आप विचार करें तो, ऐसे अनेक उदाहरण आपके आसपास समाज में देखने को मिल जाएंगे, जिनकी आप केस स्टडी भी कर सकते हैं।

bdkbZxr iz'u&14-1

सत्य/असत्य बताइए–

1. व्यसन एक द्रव्य संबंधी विकृति है। ( )
2. द्रव्य निर्भरता के अंतर्गत व्यक्ति, मादक द्रव्यों पर निर्भर हो जाता है। ( )
3. व्यसन के कारण व्यक्ति सदैव स्वस्थ रहता है। ( )
4. मादक पदार्थों का हमारे शरीर पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। ( )

14-2 eknd inkFkZ dk n"iHkko

अब तक व्यसन पर, जो चर्चा आपके साथ हुई है, उससे आप यह तो अवश्य जान ही गये होंगे कि, व्यसन एक बुरी आदत है, जो समग्र स्वास्थ्य को बुरी तरह प्रभावित करती है। एक व्यसनी यह जानते हुए भी कि,

टिप्पणी

मादक द्रव्यों का सेवन उसके लिए हानिकारक है, परिवार व समाज उसे तिरस्कृत करता है, फिर भी वह, इनके सेवन के लिए विवश रहता है। एक व्यसनी पर मादक द्रव्यों का क्या दुष्प्रभाव पड़ता है, आइये जानें–

(i) **'kkjhfjd leL;k,i ,o jkx**

- व्यसनी के शरीर में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।
- कभी–कभी भयंकर रोग जैसे– कैंसर, अल्सर, हृदय रोग, फेफडे संबंधी रोग, किडनी संबंधी रोग, पाचन संस्थान और मानसिक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(ii) **ekufld leL;k,i**

- व्यसनी व्यक्ति मानसिक रूप से तनाव में, बेचैन, अशांत और अनजाने भय से व्याकुल रहते हैं।
- आत्म सम्मान, आत्म विश्वास और साहस की कमी पायी जाती है।
- अपने कार्यों के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं।

(iii) **HkkoukRed vlrf"V**

- व्यसनी मादक द्रव्य लेने के पश्चात् अत्यधिक राहत महसूस करता है किन्तु जैसे ही इसका प्रभाव समाप्त होता है, वैसे ही वह व्यक्ति कुण्ठा एवं घुटन का अनुभव करता है।
- सदैव असंतुष्ट रहता है।

(iv) **food dk uk'k**

- व्यसनी व्यक्ति के सोचने समझने की क्षमता, क्षीण हो जाती है।
- वह न विवेकपूर्ण विचार करता है और न ही विवेकपूर्ण व्यवहार। इसी कारण विवेकरहित कार्यों के दुष्परिणाम उसे भुगतने पड़ते हैं।

14-3 0;lu efDr d fy, ;kfxd icU/ku

शिक्षार्थियों, व्यसन दूर करने के लिए कई मनोवैज्ञानिक विधियां हैं किन्तु इनमें कुछ न कुछ कमी के कारण प्रभावी परिणाम नहीं आ पाते हैं। अन्य रोगों की तरह व्यसन मुक्ति के लिए आजकल यौगिक जीवन शैली को अपनाया जा रहा है।

आपको यह जानकर निश्चित रूप से आश्चर्य होगा कि यौगिक प्रबन्धन से इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। आइये इस समस्या के समाधन हेतु यौगिक प्रबंधन पर विचार करें–

(i) **ldkjkRed nf"Vdk.k**

रोगी की भावनाओं को समझें और सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करें।

(ii) **fopkjk ,o Hkkoukvk dk 0;Dr djkuk**

व्यक्ति के विचार, भावना एवं इच्छाए, नैतिकता के दायरे में व्यक्त कराएँ।

(iii) **Lokè;k;**

रोगी को स्वयं का अध्ययन करने, अच्छे विचारों व लोगों की संगति में रहने को निर्देशित करें।

चित्र 14.5: स्वाध्याय

(iv) **thou dh egRrk**

जीवन की महत्वता को समझाएँ। व्यसनी व्यक्ति को समझाना चाहिए कि मानव जन्म बड़ी मुश्किल से मिलता है। इसे यूं ही बर्बाद नहीं करना चाहिए।

(v) **vkè;kRe**

ईश्वर की महत्व बताएँ। उसमें श्रद्धा एवं विश्वास उत्पन्न करें। उसे बताएं कि जीवन का सर्वस्व, हमारे ईश्वर ही है। इस तरह भजन संगति, सत्संग ईश्वरीय कथाएँ आदि में उसे रमाने का प्रयास करना चाहिए।

यह सर्वदा विदित है कि महाकवि कालीदास, सूरदास, तुलसीदास, महर्षि वाल्मीक, मीराबाई, इन सबका जीवन इनके जीवनकाल में, पहले कुछ और था और बाद में वे महान व्यक्तित्व को प्राप्त हुए।

(vi) **;kfxd vH;kl**

आसन और प्राणायाम के अभ्यास शारीरिक दृढ़ता, मानसिक स्थिरता एवं संतुलन प्रदान करते हैं। छोटे–छोटे यौगिक अभ्यास का निश्चित क्रम कराना शुरू करना चाहिए और रूचि को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। यौगिक अभ्यास से व्यक्ति में

- सकारात्मक भाव बढ़ते हैं।
- मन में साहस बढ़ता है।

- काम करने इच्छा शक्ति उत्पन्न होती है।
- विश्वास बढ़ता है।
- धीरे–धीरे वह एक सामान्य व्यक्ति की तरह व्यवहार करता है।

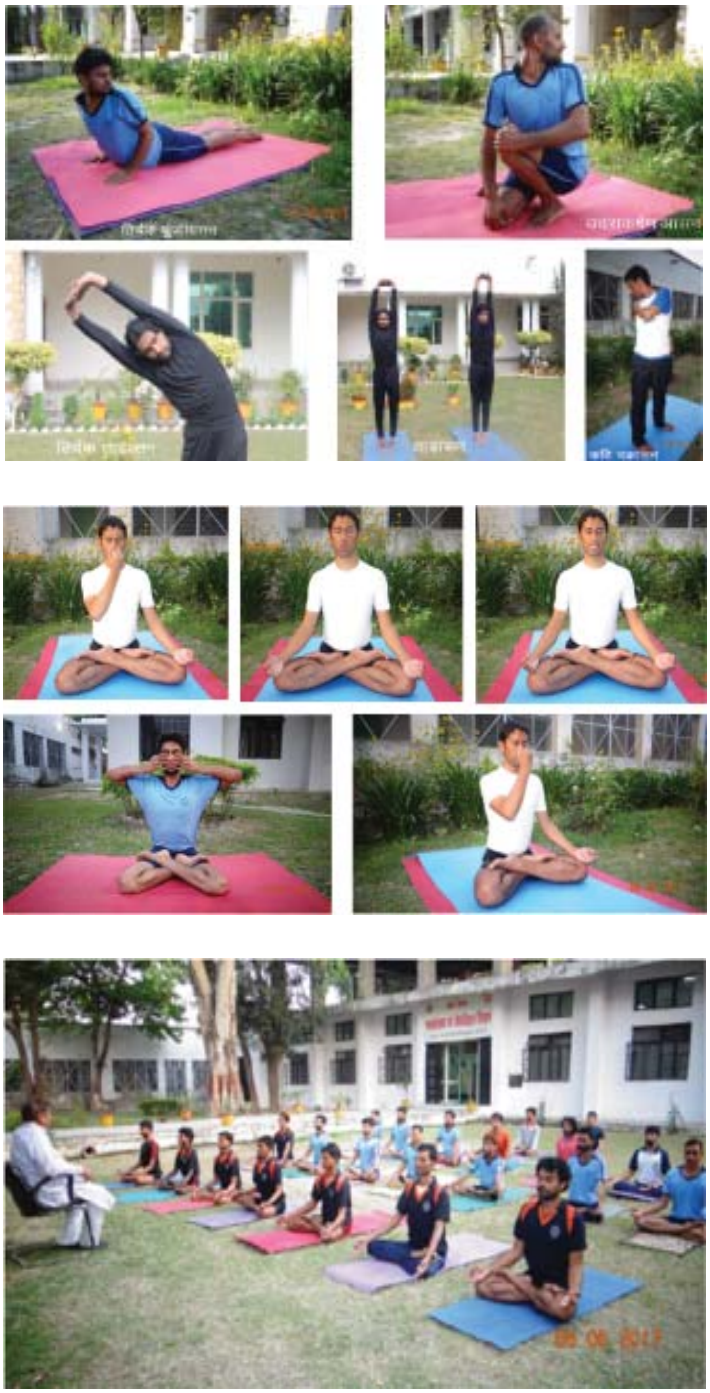

चित्र 14.6: यौगिक अभ्यास

bdkbZxr iz'u&14-2

सत्य/असत्य बताइए–

1. व्यसन मुक्ति के लिए, सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना चाहिए। ( )
2. आध्यात्म का निर्देशन व्यसन मुक्ति उपाय नहीं है। ( )
3. यौगिक अभ्यास से सकारात्मक भाव बढ़ते हैं। ( )
4. लगातार यौगिक अभ्यास करते रहने से मन में साहस उत्पन्न होता है, विश्वास बढ़ता है और वह एक सामान्य व्यक्ति की तरह व्यवहार करने लगता है। ( )

vkius D;k lh[kk

इस इकाई (यूनिट) में आपने सीखा कि :

- व्यसन अर्थात् बुरी आदत, आज व्यसन एक बहुत बड़ी सामाजिक समस्या है, जो प्रमुख रोग के रूप में हमारे सामने आ रही है।
- व्यसन एक ऐसी आसक्ति (addiction) है, जिसमें व्यक्ति दुष्परिणामों को जानते हुए भी मादक द्रव्यों जैसे ड्रग्स, एल्कोहल, भांग, गांजा जैसे नशीले पदार्थ का सेवन करने के लिए बाध्य हो जाता है। इन मादक द्रव्यों के बिना सेवन के वह रह नहीं सकता।
- व्यसन के लिए मादक द्रव्यों में बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू–गुटका, बीअर, शराब, भांग, चरस, गांजा, हीरोइन ब्राउन शुगर आदि सम्मिलित हैं। यहाँ ध्यान रखने की एक और महत्वपूर्ण बात है कि व्यसन मात्र उक्त पारम्परिक पदार्थों के सेवन तक ही सीमित नहीं है। यह चाय, कॉफी, चॉकलेट, यौनक्रिया, जुआ आदि का भी हो सकता है जिससे व्यक्ति की आध्यात्मिक जीव की क्षमता का भी ह्रास हो जाता है।
- इस प्रकार व्यक्ति न चाहते हुए भी मादक द्रव्यों के सेवन हेतु विवश हो जाता है। यह एक मनोवैज्ञानिक रोग है। इसे द्रव्य संबंधी रोग भी कहा जाता है।
- व्यसन के कई मुख्य कारण हैं जैसे – व्यसन एक बुरी आदत है, जो समग्र स्वास्थ्य को बुरी तरह प्रभावित करती है। एक व्यसनी यह जानते हुए भी कि मादक द्रव्यों का सेवन उसके लिए हानिकारक है, परिवार व समाज उसे तिरस्कृत करता है, फिर भी वह, इनके सेवन के लिए विवश रहता है।
- यौगिक प्रबन्धन से इस समस्या का समाधान किया जा सकता है।

टिप्पणी

- यौगिक अभ्यास से व्यक्ति में
  - सकारात्मक भाव बढ़ते हैं।
  - मन में साहस बढ़ता है।
  - काम करने इच्छा शक्ति उत्पन्न होती है।
  - विश्वास बढ़ता है।
  - धीरे–धीरे वह एक सामान्य व्यक्ति की तरह व्यवहार करता है।

bdkbZ ds vUr esa iz'u

1. व्यसन का अर्थ बताते हुए, इसकी प्रकृति, लक्षण एवं कारणों पर प्रकाश डालिए।
2. मादक पदार्थों का स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है। इस तथ्य की विवेचना कीजिए।
3. क्या व्यसन एक बहुत बड़ी सामाजिक समस्या है? व्यसन मुक्ति के लिए आप क्या कदम उठाएगे?
4. मादक पदार्थों के दुष्प्रभावों का वर्णन करते हुए, व्यसन मुक्ति के लिए यौगिक प्रबंधन पर प्रकाश डालिए।

bdkbZxr iz'uksa ds mÙkj

14-1

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. असत्य

14-2

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. सत्य

15

जीवनशैली सम्बंधित रोग एवं उनकी यौगिक चिकित्सा

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिटों में आपने शरीर के महत्वपूर्ण तंत्रों से सम्बन्धित रोगों के लक्षण एवं कारणों के विषय में जाना और इन रोगों की यौगिक चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त किया। मानव शरीर में रोगोत्पत्ति का प्रमुख कारण आहार–विहार की विकृति एवं दिनचर्या पालन का अभाव होता है इसके फलस्वरूप शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण हो जाती है और शरीर में रोगों की उत्पत्ति होने लगती है। वास्तव में मनुष्य के आहार–विहार एवं दिनचर्या को सम्मिलित रूप से जीवनशैली कहा जाता है। जीवनशैली का मनुष्य के स्वास्थ्य के साथ सीधा सम्बन्ध होता है। जीवनशैली के अनुशासित एवं सुव्यवस्थित होने पर मनुष्य का स्वास्थ्य उन्नत बना रहता है जबकि जीवनशैली की विकृति का दुष्प्रभाव मनुष्य के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के स्तर पर पड़ता है और नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होने लगते हैं। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) का विषय जीवनशैली जनित रोगों को जानकर उनकी यौगिक चिकित्सा को समझना है।

जीवनशैली का सामान्य अर्थ होता है–जीवन जीने का तरीका अथवा ढ़ंग। अर्थात् मनुष्य जिस प्रकार और जिस रूप में अपना जीवन व्यतीत करता है उसे जीवनशैली कहा जाता है। इसके अन्तर्गत आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या का समावेश होता है जिनके पालन करने से मनुष्य शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रूप से स्वस्थ रहता है। इसके साथ–साथ आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित आहार–निद्रा एवं ब्रह्मचर्य भी हमारी जीवनशैली का महत्वपूर्ण भाग होते हैं। आहार–निद्रा एवं ब्रह्मचर्य को स्वास्थ्य के उपस्तम्भ कहा गया है। अर्थात् यह तीन स्वास्थ्य के प्रमुख उपस्तम्भ होते हैं जिन पर ध्यान देते हुए इनका पालन करने से स्वास्थ्य का स्तर उत्तम बना रहता है। आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित उपरोक्त कारक हमारी जीवनशैली के प्रमुख घटक अथवा कारक होते हैं जिनका पालन करते हुए जीवनशैली को अनुशासित बनाया जा सकता

टिप्पणी

है किन्तु इन कारकों का पालन नहीं करने पर हृदय रोग, तनाव, मधुमेह, मोटापा, उच्च–निम्न रक्तचाप और थायरॉयड सम्बन्धी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। वर्तमान समय में मनुष्य की जीवनशैली विकृत होने के कारण यह रोग बहुत तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। वर्तमान समय में आंकड़ों पर दृष्टिपात करें तो 40 प्रतिशत से भी अधिक मौतें इन जीवनशैली जनित रोगों से हो रही हैं। यहाँ पर दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि 35 से 50 आयुवर्ग के मनुष्य इन रोगों की चपेट में बहुत अधिक आ रहे हैं। इन रोगों से मुक्ति प्राप्त करने में यौगिक चिकित्सा बहुत महत्वपूर्ण भूमिका वहन करती है। प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में इन जीवनशैली जनित रोगों के यौगिक उपचार का वर्णन किया गया है।

mí';

इस इकाई (यूनिट) के अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- जीवनशैली जनित रोगों का सामान्य परिचय दे सकेगें;
- जीवनशैली जनित रोगों के प्रमुख लक्षणों का वर्णन कर सकेंगे;
- जीवनशैली जनित रोगों की यौगिक चिकित्सा पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- जीवनशैली जनित रोगों से बचाव के महत्वपूर्ण बिन्दुओं की व्याख्या कर सकेंगे।

15-1 thou'kyh tfur jkxk dk lkekU; ifjp;

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रत्येक मनुष्य प्रातः निश्चित समय पर उठता है और दिनभर के कार्य करता है। इसी प्रकार उसका सोने का समय भी निश्चित रहता है और खाद्य सामग्री, भोजन पकाने का ढंग, भोजन ग्रहण करने का ढंग भी निश्चित होता है। इसके साथ–साथ प्रातःकालीन भ्रमण, योगाभ्यास, ईश्वर उपासना, सोच–विचार और चिन्तन–मनन आदि को समुचित रूप से जीवनशैली (Life Style) कहा जाता है। इस जीवनशैली को अनुशासित एवं सुव्यवस्थित बनाने से मनुष्य का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य उन्नत रहता है जबकि जीवनशैली अनुशासनहीन और अव्यवस्थित होने पर शारीरिक और मानसिक रोग उत्पन्न होने लगते हैं। इन रोगों के विषय में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि यह रोग धीरे–धीरे शरीर में प्रवेश करते है। किन्तु शरीर में प्रवेश करने के उपरान्त यह जीर्ण एवं असाध्य रूप धारण कर लेते हैं जिससे ग्रस्त मनुष्य का जीवन बहुत कठिन बन जाता है। जीवनशैली जनित रोगों में हृदय रोगों एवं उच्च–निम्नरक्तचाप का वर्णन बहुत प्रमुख रूप से आता है। इसके साथ–साथ तनाव, चिन्ता और बेचैनी का मूल भी जीवनशैली के साथ जुड़ा होता है। वर्तमान समय में बहुत तेजी से बढ़ता रोग मधुमेह भी जीवनशैली जनित रोगों की श्रेणी में आता है। मधुमेह को सहशताब्दी रोग घोषित किया गया है जिसकी उत्पत्ति में विकृत जीवनशैली प्रमुख कारक होती है। इसी प्रकार वर्तमान समय में फैल रहे थायरॉयड ग्रन्थि से सम्बन्धित समस्याएँ और मोटापा भी प्रमुख जीवनशैली जनित रोग है।

जीवनशैली जनित रोगों के सन्दर्भ में महत्पूर्ण बिन्दु यह है कि, इन रोगों के उपचार में दवाइयों और औषधियों से अधिक महत्वपूर्ण भूमिका जीवनशैली की ही होती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इन रोगों के उपचार में सर्वप्रथम रोगी मनुष्य की जीवनशैली में ही परिवर्तन किया जाता है। जीवनशैली में परिवर्तन करने से इन रोगों में शीघ्र एवं स्थाई लाभ प्राप्त होता है जबकि जीवनशैली में सुधार किए बिना इन रोगों का उपचार संभव नहीं होता है और यह रोग जटिल रूप धारण करने लगते हैं। इसके साथ–साथ जीवनशैली जनित रोगों के उपचार में यौगिक चिकित्सा भी बहुत महत्वपूर्ण एवं लाभकारी प्रभाव रखती है। इस प्रकार अब आपके मन में जीवनशैली जनित रोगों की जिज्ञासा और अधिक बढ़ गयी होगी अतः अब जीवनशैली जनित प्रमुख रोगों पर विचार करते हैं।

15-2 ân; jksx

प्रिय शिक्षार्थियों, हृदय मानव शरीर का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग हैं। इसके स्वस्थ रहने पर सम्पूर्ण शारीरिक और मानसिक क्रियाएँ सुचारू रूप से चलती हैं जबकि हृदय में विकार उत्पन्न होने पर शारीरिक और मानसिक क्रियाएँ बाधित होने लगती हैं। जीवनशैली के कारण हृदय सम्बन्धित निम्न प्रमुख विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं–

15-2-1 mPp&fuEu jDrpki

मानव शरीर में सामान्यतया 5.5 लीटर रक्त उपस्थित होता है। इस रक्त की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि शरीर में रक्त किसी भी स्थान पर रूकता नहीं है अपितु, प्रतिक्षण हृदय और रक्तवाहिनियों में परिभ्रमण करता रहता है। शरीर में रक्त जिस दबाव के साथ हृदय से रक्तवाहिनियों में बहता है उसे रक्तचाप कहा जाता है। जब हृदय सिकुड़ता है तो 120 mm of Hg का दबाव होता है जिसे सिस्टोलिक प्रेशर कहा जाता है जबकि, इसके विपरित जब हृदय पफैलता है तो 80 mm of Hg का दबाव होता है जिसे डायस्टोलिक प्रेशर कहा जाता है। इस प्रकार स्वस्थ मनुष्य का रक्त चाप 120–80 mm of Hg होता है। जिसे स्फिग्मोमेनो–मीटर नामक यंत्र की सहायता से मापा जाता है। परन्तु जब किन्ही कारणों या परिस्थितियों के प्रभाव से रक्तचाप

चित्र 15.1: उच्च–निम्न रक्तचाप

टिप्पणी

इस सामान्य स्तर से अधिक अथवा कम होता है तब उस अवस्था को रक्तचाप रोग की संज्ञा दी जाती है। रक्तचाप सम्पूर्ण विश्व में सबसे बड़ी महामारी है जिससे ग्रस्त होने वाले रोगियों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है।

इस रोग के दो प्रमुख प्रकार होते हैं। प्रथम उच्चरक्तचाप में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं–

1. तेज सिरदर्द के साथ पसीना आना।
2. श्वास गति और नाड़ी स्पंदन की दर अचानक तेज हो जाना।
3. हाथों–पैरों में सूक्ष्म कम्पन होने के साथ श्वास फूलना।
4. संवेगों पर नियंत्रण का अभाव होने के साथ अधिक क्रोध और स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाना।
5. बेचैनी के साथ नींद में कमी होना और नाक से खून निकलना उच्चरक्तचाप के लक्षण हैं।

इस रोग का दूसरा प्रकार निम्न रक्तचाप होता है जिसमें निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं–

1. सिर में हल्का दर्द के साथ हाथ–पैर ठंडे रहना।
2. श्वास गति और नाड़ी स्पंदन की दर अनियमित हो जाना।
3. हाथों–पैरों में शक्तिहीनता के साथ कार्य में मन नहीं होना।
4. जी मिचलाना, उल्टी होना, धुंधला दिखलाई देना और बेहोशी होना निम्न रक्तचाप रोग के लक्षण हैं।

शरीर में उपरोक्त लक्षण रक्तचाप रोग की ओर संकेत करते हैं।

15-2-2 dkjkujh èkeuh jkx (Coronary Artery Disease)

यह हृदय से सम्बन्धित ऐसा रोग है जो वर्तमान समय में बहुत तेजी से बढ़ता जा रहा है। विकृत आहार–विहार का सेवन करने, शरीर में मोटापा, उच्चरक्तचाप, धूम्रपान अथवा अन्य कारणों के परिणामस्वरूप जब शरीर में हृदय से सम्बधित धमनियों में वसा जमने के कारण इनका आकार संकरा हो जाता है तब उस स्थिति में हृदय में रक्त संचार की क्रिया बाधित होने लगती है और सीने में तीव्र चुभन के साथ दर्द उत्पन्न होता है जिसे कोरोनरी आरटरी डिजीज कहा जाता है। इस रोग से ग्रस्त होने पर रोगी व्यक्ति की शल्य चिकित्सा (एन्जियोप्लास्टी) कराई जाती है किन्तु इससे भी समस्या का स्थाई समाधान नहीं होता है। वास्तव में यह जीवनशैली जनित रोग है जिसका उपचार जीवनशैली को अनुशासित किए बिना नहीं किया जा सकता है।

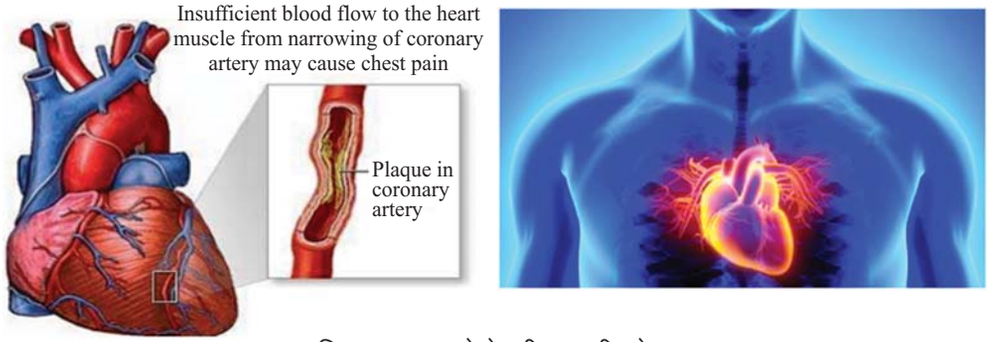

चित्र 15.2: कोरोनरी धमनी रोग

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं–

1. सीने में बहुत तेज दर्द के साथ सुई के समान चुभन का होना इस रोग का सबसे प्रमुख व महत्वपूर्ण लक्षण होता है।
2. सीने में बहुत तेज दर्द के साथ दिल का दौरा भी पड़ जाता है।
3. दीर्घ श्वास में परेशानी होने के साथ छोटी श्वासें आना एवं श्वासों का फूलना।
4. सीने में दर्द के साथ जी मिचलाना।
5. असामान्य रूप से बिना कार्य किए हुए बहुत थकान होना।
6. वक्ष में सूजन के साथ ठंडा पसीना आना।

शरीर में उपरोक्त लक्षण हृदय से सम्बन्धित कोरोनरी आरटरी डिजीज रोग की ओर संकेत करते हैं। कुछ परिस्थितियों में मनुष्य इसे पाचन तंत्र का अपच या एसिडिटी रोग मानकर पाचन तंत्र में जलन मानकर इस ओर ध्यान नहीं देता है जबकि ऐसी अवस्थाओं में बहुत ध्यान देने की आवश्यकता होती है क्योंकि आगे चलकर यह गंभीर हृदयाघात (Heart attack) का कारण भी बन सकता है।

15.2.3 एंजाइना पेक्टोरिस रोग (Angina Pectoris Disaese) का सामान्य परिचय एवं लक्षण

मानव शरीर के वक्ष स्थल में बांयी ओर उठने वाले दर्द को कई बार पाचन तंत्र का अपच या एसिडिटी रोग मानकर इसे अनदेखा कर दिया जाता है जबकि, कई बार मनुष्य इसे हृदयाघात मानकर बहुत परेशान हो जाता है जबकि, वास्तव में यह हृदय का एंजाइना पेक्टोरिस रोग होता है जिसमें हृदय की मांसपेशियों को कम मात्रा में रक्त आपूर्ति होने कारण वक्ष के बायें भाग में दर्द के साथ श्वास लेने में परेशानी होती है।

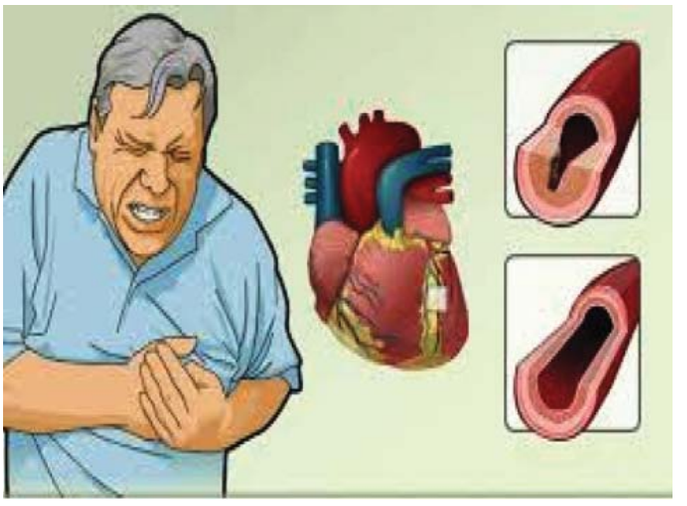

चित्र 15.3: एंजाइना पेक्टोरिस रोग का सामान्य परिचय एवं लक्षण

टिप्पणी

मानव शरीर में एंजाइना पेक्टोरिस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं–

1. सीने में बांयी ओर हल्का अथवा तेज दर्द होना इस रोग का सबसे प्रमुख मूल लक्षण होता है जो इस रोग की ओर संकेत करता है।
2. छाती में जलन के साथ बेचैनी महसूस होना।
3. सीने में जकड़न के साथ भारीपन महसूस होना।
4. सीने का दर्द कन्धों, गले और पीठ की ओर भी फैलना।
5. शरीर में कमजोरी के साथ कार्य करने में रुचि का अभाव होना।

शरीर में उपरोक्त लक्षण हृदय के एंजाइना पेक्टोरिस रोग की ओर संकेत करते हैं। इस रोग की जाँच के लिए आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इलैक्ट्रोकार्डियोग्राम (इ.सी.जी.) कराया जाता है।

इस प्रकार, जीवनशैली में विकृति के परिणामस्वरूप उपरोक्त हृदय रोगों की उत्पत्ति होती है। इन रोगों से ग्रस्त होने पर मनुष्य की कार्यक्षमता कम होने के साथ–साथ हृदयाघात की संभावनाएं भी बढ़ जाती है। विकृत जीवनशैली का दुष्प्रभाव इन हृदय रोगों के साथ–साथ मानसिक तनाव को भी उत्पन्न करता है। मानसिक तनाव अनेक रोगों का जनक होता है जिसके प्रभाव से मनुष्य दुःख, कष्ट, उलझन, समस्याओं और पीड़ा के जाल में फंसने लगता है।

15.3 ekufld ruko (Stress) dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

आधुनिक समय में मनुष्य के जीवनशैली में आये बदलाव के कारण तनाव हम सभी के लिए ऐसा व्यावहारिक शब्द बन गया है कि इसका प्रयोग दिन–प्रतिदिन में अनेक बार किया जाता है। यद्यपि, एक ओर यह मनुष्य को लक्ष्य की ओर जाने के लिए अभिप्रेरित भी करता है किन्तु इस तनाव की अधिकता मनुष्य के जीवन को रोगावस्था में ले जाती है। वर्तमान समय में इस रोग ने महामारी का रूप धारण कर लिया है जिससे ग्रस्त रोगियों की संख्या में दिनोंदिन बहुत तेजी से वृद्धि होती जा रही है। स्वास्थ्य संगठन के अनुसार आने वाले समय में तनाव सम्पूर्ण विश्व में सबसे बड़ी और गंभीर महामारी का रूप धारण कर सकती है। तनाव का शरीर और मन दोनों पर गलत प्रभाव पड़ता है।

चित्र 15.4: मानसिक तनाव का सामान्य परिचय एवं लक्षण

इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं–

1. जीवन की सामान्य क्रियाएँ एवं सामान्य कार्यों में बाधा उत्पन्न होना।
2. स्मरण शक्ति कमजोर होना, भूख नहीं लगना एवं उदास अथवा उत्तेजित रहना।
3. एकाग्रता का अभाव होने के साथ किसी भी कार्य में मन नहीं लगना।
4. सांवेगिक अस्थिरता के साथ भावनात्मक क्रियाओं जैसे अचानक रोना, हँसना अथवा क्रोधित होना।
5. लगतार सिरदर्द रहना, रक्तपाप बढ़ना, बाल झड़ना एवं सफेद होना।
6. हमेशा उलझन में रहने के साथ समस्याओं से घिरे रहने के साथ दुर्व्यसनों के साथ जुड़ जाना।

उपरोक्त लक्षण तनाव (Stress) की ओर संकेत करते हैं। तनाव की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि, इससे ग्रस्त होने का पता ही नहीं चल पाता है। अपितु, जब मनुष्य की शारीरिक क्रियाओं और व्यवहार में अस्वाभाविक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं उस अवस्था में दूसरे व्यक्तियों को यह पता चलता है वह मनुष्य मानसिक तनाव से ग्रस्त हो चुका है और इसके उपरान्त यह तनाव उस मनुष्य की दिनचर्या का अंग बन जाता है और चाह कर भी मनुष्य इससे मुक्त नहीं होने में स्वयं को असक्षम अनुभव करने लगता है। वहीं दूसरी ओर तनाव से ग्रस्त होने पर भूख–प्यास और निद्रा जैसी मूलभूत जैविक क्रियाएँ असन्तुलित एवं अव्यवस्थित होने लगती हैं। इससे परिणामस्वरूप शरीर की चयापचय दर (Metabolism) भी असन्तुलित हो जाती है जिसके फलस्वरूप, विभिन्न शारीरिक और मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न होने लगती हैं और धीरे–धीरे यह समस्या गंभीर रूप धारण करने लगती है। इस गंभीर अवस्था में मनुष्य का स्वयं पर (शारीरिक और मानसिक स्तर) नियंत्रण कम होने लगता और तथा मनुष्य दुर्व्यसनों की चपेट में आने लगता है। विभिन्न शोध इस तथ्य को स्पष्ट करती है कि वर्तमान सभ्य और शिक्षित समाज में तेजी से बढ़ते दुर्व्यसनों में मानसिक तनाव एक महत्वपूर्ण कारक की भूमिका वहन करता है।

bdkbxr i'u&15-1

सही/गलत बताइए :

(क) शरीर में रक्त किसी भी स्थान पर रूकता नहीं है। ( )

(ख) वक्ष में सूजन के साथ ठंडा पसीना आना कोरोनरी आरटरी रोग का लक्षण नहीं है। ( )

(ग) स्फिग्मोमेनोमीटर नामक यंत्र की सहायता से रक्तचाप मापा जाता है। ( )

15-4 e/kqesg jkx (Diabetes)

मधुमेह पहले केवल उच्च वर्ग का रोग माना जाता था किन्तु आज विकृत जीवनशैली के कारण यह उच्च, मध्यम एवं निम्न अर्थात् समाज के हर वर्ग का रोग बन गया है। इसके बढ़ते प्रभाव को देखते हुए इसे सहशताब्दी

टिप्पणी

की बीमारी (Disease of the Millennium) भी घोषित किया गया है। यह ऐसी गंभीर बीमारी है कि कुछ चिकित्सक इसे धीमी मौत की संज्ञा भी देते हैं। इसकी गंभीरता को देखते हुए चारों तरफ इस बीमारी पर अनेक शोध किए जा रहे है किन्तु यह फिर भी काबू से बाहर हो रही है। रोग के भयानक प्रभाव को देखते हुए सम्पूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष 14 नवम्बर का दिन "**fo'o eèkqesg fnol**" के रूप में मनाया जाता है। इसका उद्देश्य मधुमेह रोग के प्रति जनसामान्य में जागरुकता उत्पन्न करना है क्योंकि जागरुक होकर ही इस रोग से बचा जा सकता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मधुमेह वर्तमान समय में विकृत जीवनशैली से फैलता जा रहा गंभीर जीर्ण रोग (Chronic Disease) है जिससे ग्रस्त होने पर मनुष्य कमजोर होने लगता है और उसकी शारीरिक व मानसिक क्रियाएँ अव्यवस्थित हो जाती हैं। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं–

मधुमेह के प्रमुख लक्षण

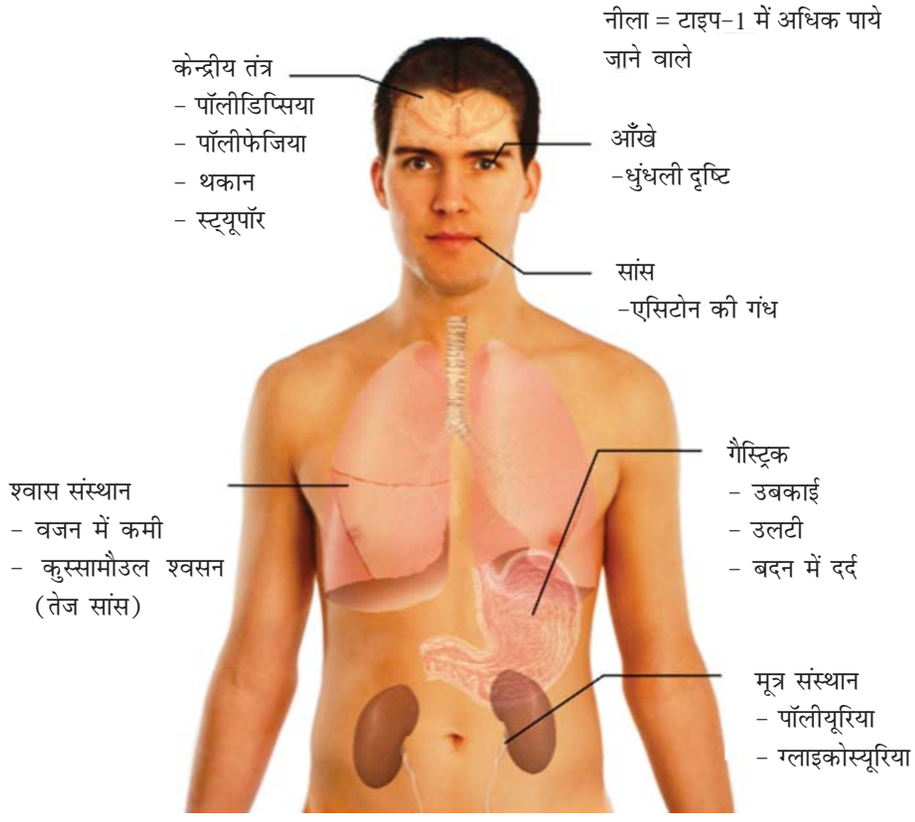

चित्र 15.5: मधुमेह रोग का सामान्य परिचय एवं लक्षण

मधुमेह रोग से ग्रस्त होने पर मनुष्य में निम्न लिखित लक्षण उत्पन्न होते हैं–

1. बार–बार एवं ज्यादा प्यास लगने के साथ होंठ सूखे रहना।
2. बार–बार पेशाब आना एवं पेशाब के स्थान पर चीटियों का आना।

टिप्पणी

3. लगातार भूख बने रहना एवं खाना खाने की इच्छा नहीं होना।
4. शारीरिक और मानसिक कमजोरी के साथ शरीर का वजन तेजी से कम होना।
5. चोट लगने पर घाव नहीं भरना एवं दृष्टि धुंधली हो जाना।
6. चेहरा कान्तिहीन हो जाना एवं कार्यों में मन नहीं लगना।

इस प्रकार शरीर में उपरोक्त शारीरिक और मानसिक लक्षणों के साथ हर समय थकान बने रहना, चेहरा तेजहीन होने के साथ लगातार शरीर का वजन कम होना मधुमेह रोग से ग्रस्त होने की ओर संकेत करता है।

15-5 ekVkik jkx (Obesity) dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, वर्तमान समय में मनुष्य दिन–प्रतिदिन उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है। वह नित्य नये संसाधनों की खोज कर रहा है। शरीर को आराम देने वाले नित्य नये साधनों का मनुष्य प्रतिदिन उपयोग कर रहा है। फ्रिज, कूलर ए.सी., बोयलर, हीटर, मोबाइल और इंटरनेट के नियमित प्रयोग से मनुष्य अक्रियाशील जीवन की ओर बढ़ता जा रहा है। मनुष्य को जो भोजन प्रकृति द्वारा उत्कृष्ट रूप में मिला है, वह उसे अत्यधिक संशोधित और महीन करके खा रहा है जिससे वह अनेक रोगों से भी ग्रस्त हो रहा है, इसके साथ–साथ मनुष्य का जीवनशैली सम्बन्धी बदलाव भी उसे रोगग्रस्त कर रहा है। इन सब कारकों का परिणाम मोटापा रोग के रूप में प्राप्त हो रहा है।

वर्तमान समय में मोटापा व्यापक रूप से बच्चों, बूढ़ों और व्यस्कों में व्याप्त हो रहा है। मोटापे से ग्रस्त व्यक्तियों की संख्या में दिन दुगनी रात चौगुनी वृद्धि हो रही है। मोटापा सिर्फ शरीर का फूलना, मोटा होना या कुरूप होना भर नहीं है, अपितु, यह एक बड़ी बीमारी का रूप धारण कर चुका है। विशेष रूप से समृद्ध समाज में श्रम अभाव से मोटापा रोग बहुत तेजी से फैलता जा रहा है। इस रोग के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं–

1. पेट पर चर्बी बढ़ने के साथ शरीर फूलकर भारी होना।
2. पेट पर मोटापा बढ़ने के साथ कूल्हे, स्तन और हाथ–पैरों में अत्यधिक फैट जमा होना।
3. आन्तरिक अंगों जैस यकृत, मांसपेशियों, गुर्दों और हृदय आदि अंगों का आकार भी बढ़ने के साथ इनकी क्रियाशीलता कम होना।
4. शरीर में आलस्य, भारीपन होने के साथ कार्य में अरुचि उत्पन्न होना और निद्रा बढ़ जाना।
5. कम शारीरिक श्रम में ही श्वास फूलने के साथ अधिक पसीना आना।
6. शरीर भारी होने के साथ जोड़ों एवं कमर में दर्द रहना।
7. शरीर का आकार असन्तुलित होने के साथ व्यक्तित्व में विकृति उत्पन्न होना।

टिप्पणी

इस प्रकार वर्तमान समय में विकृत जीवनशैली के कारण उत्पन्न मोटापा रोग विश्व के अनेक देशों मे सर्वव्यापी समस्या के रूप में उभर रहा है। मोटापा एक ऐसी बीमारी है जो बढ़ने के साथ–साथ अनेक रोगों को जन्म देता है। यह शारीरिक अंगों की कुशलता को कम कर उनके कार्यों को प्रभावित करता है और इसके साथ मधुमेह, ब्रोन्काइटिस, आस्टियोआर्थीरटिस, उच्च रक्तचाप, एन्जाइना और हार्टअटैक आदि समस्याओं में वृद्धि कर देता है।

15-6 Fkk;jk;M lEcU/kh jksxksa dk lkekU; ifjp; ,oa y{k.k

प्रिय शिक्षार्थियों, विकृत जीवनशैली का सबसे अधिक दुष्प्रभाव शरीर की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर पड़ता है। इससे एक ओर जहाँ मधुमेह जैसे घातक रोग की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं तो वहीं दूसरी ओर थायरॉयड ग्रन्थि की क्रियाशीलता भी प्रभावित होती है। थायरॉयड तितली के समान गले में स्थित ग्रन्थि होती है जो हमारे शरीर की चयापचय दर को नियंत्रित करने का कार्य करती है। विकृत जीवनशैली के प्रभाव से कुछ अवस्थाओं में यह ग्रन्थि कम क्रियाशील हो जाती है जिसे हाइपोथायरॉडिज्म कहा जाता है। जबकि इसके विपरीत कुछ परिस्थितियों में जब यह ग्रन्थि अधिक क्रियाशील हो जाती है उसे हायपर थायरोडिज्म कहा जाता है। यह दोनों ही रोगावस्थाएँ होती हैं जिसमें अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

चित्र 15.6: थायरॉयड सम्बन्धी रोगों का सामान्य परिचय एवं लक्षण

इनका वर्णन इस प्रकार है–

15-6-1 gkbiks Fkk;jkfMTe dk y{k.k

हाइपो थायरॉडिज्म की अवस्था में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं–

1. शरीर में शक्तिहीनता के साथ वजन बहुत तेजी से बढ़ना।
2. श्वसन दर, हृदय गति एवं चयापचय दर कम हो जाना।
3. त्वचा रुखी, खुरदरी और भद्दी हो जाना और पसीना कम आना।
4. हाथ–पैर फूलने के साथ चेहरे पर सूजन आना और शरीर भद्दा हो जाना।

5. जोड़ों में दर्द और सूजन के साथ मांसपेशियों में दर्द और कार्य करने की क्षमता में कमी आना।

6. स्मरण शक्ति कम होना।

7. महिलाओं में मासिक चक्र अनियमित होना और प्रजनन क्षमता कम हो जाना।

इस प्रकार उपरोक्त लक्षण हाइपो थायरॉडिज्म रोग का संकेत करते हैं।

टिप्पणी

15-6-2 gkbij Fkk;jkfMTe dk y{k.k

हाइपर थायरॉडिज्म की अवस्था में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं–

1. शारीरिक क्रियाशीलता में असामान्य वृद्धि होने के साथ शरीर का वजन बहुत तेजी से कम होना।

2. श्वसन दर, हृदय गति एवं चयापचय दर असामान्य रूप से बढ़ जाना।

3. हाथों एवं शरीर के अन्य भागों में सूक्ष्म कम्पन प्रारम्भ होना एवं आँखें उभर कर बाहर आ जाना।

4. अधिक गर्मी लगने के साथ पसीना अधिक आना।

5. हृदय धड़कन बढ़ने के साथ उच्चरक्तचाप से ग्रस्त रहना।

6. स्वभाव उग्र एवं क्रोधी होने के साथ अनिद्रा की समस्या उत्पन्न होना।

इस प्रकार उपरोक्त लक्षण हाइपर थायरॉडिज्म रोग का संकेत करते हैं।

bdkbZ xr iz'u&15-2

रिक्त स्थान भरिए :

(क) प्रतिवर्ष .... का दिन 'विश्व मधुमेह दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

(ख) विकृत जीवनशैली का सबसे अधिक दुष्प्रभाव शरीर की .... ग्रन्थियों पर पड़ता है।

(ग) थायरॉयड .... के समान गले में स्थित ग्रन्थि है।

15-7 thou'kyh tfur jksxksa dh ;kSfxd fpfdRlk

प्रिय शिक्षार्थियों, वास्तव में योग मूल रूप से चिकित्सा पद्धति नहीं है अपितु एक अनुशासनात्मक जीवनशैली है जिसका प्रारम्भ महर्षि पतंजलि **^vFk ;ksxkuq'kklue~*** योगसूत्र के साथ करते हैं। इस अनुशासन का सीधा सम्बन्ध हमारी जीवनशैली के साथ होता है। महर्षि पतंजलि द्वारा वर्णित अष्टांग योग के आठ अंगों का पालन जीवनशैली को सुव्यवस्थित एवं सोच–विचार सकारात्मक बनाता है जिसके फलस्वरूप जीवनशैली जनित रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। इसके साथ–साथ हठयोग के सप्तसाधनों का अभ्यास करने से शरीर का शोधन होता है और मन में सकारात्मक ऊर्जा का विस्तार होता है। इसका सकारात्मक प्रभाव जीवनशैलीजनित रोगों में पड़ता

टिप्पणी

है। हठयोग के सप्तसाधनों का नियमित एवं विधिपूर्वक अभ्यास करने से जीवनशैली जनित रोगों के उपचार में बहुत सहायता प्राप्त होती है। योग चिकित्सा के प्रभाव से यह रोग समूल नष्ट होते हैं।

योग चिकित्सा के अन्तर्गत सर्वप्रथम इन रोगों के उपचार में रोगी मनुष्य की दिनचर्या एवं आहार–विहार को सुव्यवस्थित एवं नियंत्रित किया जाता है। प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व उठकर रात्रिकाल तांबे के बर्तन में रखे एक से डेढ़ लीटर जल का सेवन (उषापान) करने के साथ मनुष्य की दिनचर्या का आरम्भ होता है। प्रातःकाल शौच आदि से निवृत्त होने के उपरान्त क्षमतानुसार भ्रमण करना और यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करने से मनुष्य रोगमुक्त होकर उत्तम स्वास्थ्य को प्राप्त करता है। जीवनशैलीजनित रोगों के उपचार में निम्न यौगिक चिकित्सा दी जाती है–

15-7-1 "kVdeZ dh 'kqf) fØ;kvksa dk iHkko

षट्कर्मों में जल नेति का अभ्यास प्रतिदिन करना चाहिए। प्रतिदिन जल नेति का अभ्यास करने से मस्तिष्कीय तनाव दूर होता है। जिससे तनाव और अवसाद आदि भावनाएँ दूर होती हैं और मनुष्य की चयापचय दर सन्तुलित बनती है।

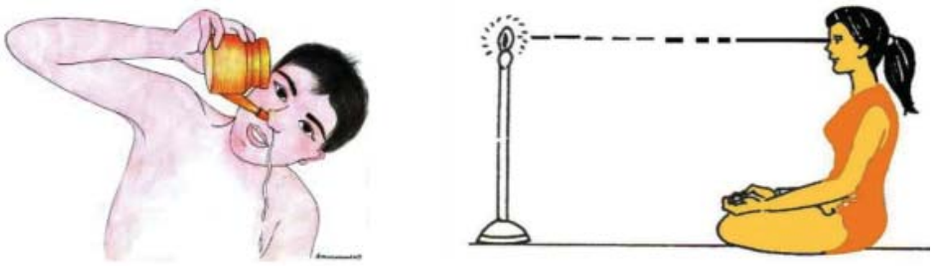

चित्र 15.7: षट्कर्म की शुद्धि क्रियाओं का प्रभाव

शोधन क्रियाओं में वर्णित शंखप्रक्षालन क्रिया का अभ्यास भी मोटापा रोग को कम करने में सहायक होता है। शंखप्रक्षालन एवं बस्ति क्रिया के अभ्यास द्वारा पाचन तंत्र का शोधन होता है और कब्ज रोग से मुक्ति मिलती है जिसका सकारात्मक प्रभाव पूर्व वर्णित सभी रोगों में प्राप्त होता है। इसी प्रकार नौली क्रिया का अभ्यास करने से जठराग्नि प्रदिप्त होती है जिससे पाचन क्रिया सुव्यवस्थित होने के साथ भूख अच्छी प्रकार लगती है और शरीर को सभी पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होते हैं।

त्राटक क्रिया मानसिक स्थिरता और एकाग्रता उत्पन्न करती है। त्राटक क्रिया का अभ्यास करने से तनाव दूर होता है। इसके अभ्यास से हृदय को बल मिलता है और इससे मन में प्रसन्नता एवं उत्साह का विस्तार होता है जिससे शारीरिक क्रियाशीलता बढ़ती है और मोटापा रोग दूर होता है। इसके साथ–साथ मधुमेह और थायरॉयड सम्बन्धी रोगों में भी त्राटक क्रिया बहुत लाभकारी प्रभाव रखती है। षट्कर्म की शोधन क्रियाओं के अन्तर्गत कपालभाति का अभ्यास जीवनशैली जनित सभी रोगों के उपचार लाभ प्रदान करता है। कपालभाति

टिप्पणी

के अभ्यास से विषाक्त तत्व शरीर से बाहर उत्सर्जित होते हैं जिससे रोग प्रतिरोधक क्षमता उन्नत बनती है और इन सभी रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। यहाँ पर महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि उच्चरक्तचाप रोग की अवस्था में कपालभाति का अभ्यास नहीं करना चाहिए और शोधन क्रियाओं के अभ्यास में प्रयुक्त जल में नमक का प्रयोग नहीं करना चाहिए अपितु, नमक के स्थान पर सौंफ के जल का प्रयोग करना चाहिए।

15-7-2 vklu dk izHkko

जीवनशैलीजनित रोगों के उपचार में आसनों का अभ्यास बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। रोगी व्यक्ति को सूक्ष्म अभ्यास से प्रारम्भ करना चाहिए। पैरों से प्रारम्भ करते हुए सन्धि संचालन के सभी अभ्यास नियमित रूप से करने के उपरान्त योगासनों का अभ्यास करना चाहिए। ताड़ासन, त्रिकोणासन, वातायनासन, पश्चिमोत्तानासन, उष्ट्रासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, शशांकासन, भुजगांसन, धनुरासन, मकरासन और शवासन का अभ्यास हृदय रोगों एवं तनाव में लाभकारी प्रभाव रखता है। उच्च रक्तचाप की अवस्था में शवासन और योगनिद्रा का अभ्यास लाभ दायक है। परन्तु यहाँ पर महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि हृदय रोगों एवं तनाव की अवस्था में शीर्षासन और सर्वांगासन का अभ्यास नहीं करना चाहिए। विशेष रूप से उच्च रक्तचाप एवं मानसिक तनाव की अवस्था में शीर्षासन का अभ्यास नहीं करना चाहिए। वैज्ञानिक शोधों से स्पष्ट होता है कि वज्रासन, मण्डूकासन और अर्द्धमत्स्येन्द्रासन का अभ्यास मधुमेह रोग में विशेष लाभकारी प्रभाव रखता है।

मोटापा रोग में चक्रासन, धनुरासन, हलासन, उत्तानपादासन, नौकासन, पादहस्तासन, पवनमुक्तासन, चक्कीचालन और तितली आसन का अभ्यास लाभकारी प्रभाव रखता है। इनके साथ–साथ शरीर की क्षमतानुसार सूर्यनमस्कार का अभ्यास करने से मोटापा रोग दूर होता है। मोटापे की अवस्था में कठिन आसनों का अभ्यास शरीर से पसीना निकलने तक करते रहना चाहिए। कठिन आसनों का अभ्यास करने से शरीर में स्थित अनावश्यक चर्बी पिघलने लगती है और मोटापा रोग से मुक्ति प्राप्त होती है। थायरॉयड ग्रन्थि से सम्बन्धित रोगों में मत्स्यासन और उष्ट्रासन का अभ्यास विशेष लाभकारी प्रभाव रखता है। इस प्रकार योगासनों का अभ्यास करने से जीवनशैलीजनित रोगों के उपचार में बहुत लाभकारी एवं महत्वपूर्ण भूमिका वहन करते हैं।

15-7-3 eqnzk vkj cèk dk izHkko

मुद्राओं का अभ्यास करने से आन्तरिक ऊर्जा में वृद्धि होती है जिससे रोग प्रतिरोधक क्षमता और जीवन शक्ति उन्नत बनती है और रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। जीवनशैलीजनित रोगों में आन्तरिक ऊर्जा को संचित करने हेतु मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध, जालंधर बन्ध, महाबन्ध, शाम्भवी मुद्राओं का अभ्यास करना चाहिए। इसके साथ–साथ विपरीत करणी और शक्ति चालनी मुद्राओं का अभ्यास करने से आन्तरिक ऊर्जा जाग्रत होती है और रोग से मुक्ति प्राप्त होती है।

15-7-4 izR;kgkj ikyu dk izHkko

प्रत्याहार का अर्थ इन्द्रियों पर संयम करना होता है जबकि जीवनशैली जनित रोगों की उत्पत्ति का मूल कारण इन्द्रियों पर संयम का अभाव होता है। प्रत्याहार पालन करते हुए प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व उठना और सुव्यवस्थित दिनचर्या का पालन किया जाता है। इसके साथ–साथ इन्द्रियों पर संयम करते हुए शुद्ध–सात्विक और शरीर

टिप्पणी

के लिए हितकारी भोजन का ही सेवन किया जाता है जिससे इन सभी रोगों में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। प्रत्याहार पालन के अन्तर्गत राजसिक और तामसिक आहार का त्याग करते हुए निश्चित समय में रोग में हितकारी भोजन का सेवन किया जाता है और दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या का पालन करते हुए संयमित जीवन व्यतीत किया जाता है। इसका रोगावस्था में बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

15-7-5 ik.kk;ke dk iHkko

जीवनशैली के विकृत होने पर प्राणऊर्जा क्षीण हो जाती है और रोगों की उत्पत्ति होती है अतः इन रोगों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए प्राणायाम का अभ्यास करने से विशेष लाभ प्राप्त होता है। हृदय रोगों में दीर्घ श्वास–प्रश्वास का बहुत लाभ प्राप्त होता है। लम्बी और गहरी श्वसन क्रिया करने से हृदय को आराम मिलता है और रोग दूर होते हैं। उच्चरक्तचाप एवं मानसिक तनाव की अवस्था में दीर्घ श्वसन के साथ प्रणव जप के साथ अनुलोम–विलोम, नाड़ी शोधन, शीतली और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। जबकि निम्न रक्तचाप और मोटापा रोग को दूर करने में में सूर्यभेदी, भस्त्रिका और उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास लाभकारी प्रभाव रखता है। विभिन्न शोध–अनुसंधानों से प्रमाणित हुआ है कि निममित प्राणायाम का अभ्यास करने से पेन्क्रियाज और थायरॉयड ग्रन्थि की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है जिससे मधुमेह और थायरॉयड सम्बन्धी रोगों में शीघ्र एवं स्थाई लाभ प्राप्त होता है। विशेष रूप से उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास थायरॉयड ग्रन्थि की क्रियाशीलता में वृद्धि करता है जिससे हाइपोथयरोडिज्म रोग में लाभ प्राप्त होता है।

यहाँ पर महत्वपूर्ण बिन्दु है कि प्राणायाम का अभ्यास शान्त एवं स्थिर मन के साथ करना चाहिए एवं प्राणायाम को दिनचर्या का प्रमुख अंग बनाते हुए इसका अभ्यास नियमित रूप से एवं पर्याप्त समय तक करना चाहिए। उच्च रक्तचाप एवं तनाव की अवस्था में सूर्यभेदी एवं भस्त्रिका आदि ऊर्जा में वृद्धि करने वाले प्राणायाम का अभ्यास कदापि नहीं करना चाहिए।

15-7-6 è;ku dk iHkko

जीवनशैली विकृत होने पर स्वतः ही तनाव उत्पन्न होता है और तनाव का शरीर और मन दोनों स्तरों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पूर्व का अध्ययन भी स्पष्ट करता है कि हृदय रोगों, मोटापा, मधुमेह और थायरॉयड आदि रोगों के मूल में तनाव ही प्रमुख कारण होता है। इस तनाव को दूर करने का सबसे सरल एवं प्रभावकारी उपाय ध्यान का अभ्यास करना होता है। ध्यान करने से तनाव से मुक्ति प्राप्त होती है जिससे इन सभी रोगों में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। अतः प्रातःकाल साफ–स्वच्छ स्थान पर सकारात्मक ऊर्जा का ध्यान करने से इन रोगों में लाभ प्राप्त होता है। ध्यान के साथ–साथ ईश्वर की उपासना में लीन रहना, ईश्वर भक्ति के भजन गाना और श्रद्धाभाव से ईश्वर से प्रार्थना करने का भी बहुत सकारात्मक प्रभाव इन रोगों में प्राप्त होता है।

इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि योग चिकित्सा के द्वारा जीवनशैली जनित रोगों जैसे हृदय रोग, उच्च–निम्न रक्तचाप, मोटापा, मधुमेह और थायरॉयड आदि में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। योग चिकित्सा में यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने के साथ–साथ पथ्य–अपथ्य आहार पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

टिप्पणी

इन रोगों की यौगिक चिकित्सा में रोगी मनुष्य को अपथ्य आहार का त्याग करते हुए निम्न पथ्य आहार का सेवन करना चाहिए–

¼d½ **viF; vkgkj %** चाय, कॉफी, चीनी, नमक आदि उत्तेजक एवं तामसिक पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। मैदा और मैदे से बने सभी खाद्य पदार्थों, कृत्रिम रंगों एवं रसायनों से युक्त बाजार की मिठाइयाँ एवं अन्य प्रिजर्वेटिव युक्त खाद्य पदार्थों का प्रयोग त्याग देना चाहिए। धूम्रपान, मद्यपान और नशीली दवाइयों को संकल्पशक्ति के साथ पूर्णरूप से त्याग देना चाहिए।

¼[k½ **iF; vkgkj %** प्रातःकाल उषापान करते हुए प्रातःकालीन भ्रमण और नियमित योगाभ्यास करने के साथ अंकुरित आहार का सेवन, जौ, चना, गेहूँ को मिलाकर चोकर सहित रोटियों का सेवन, गाय का घी, बादाम, अखरोट, अंजीर, मुनक्का, पिस्ता आदि सूखे मेवे, मौसम के अनुसार हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे मैथी, पालक, लौकी, तुरई, परवल, करेला, नींबू आदि का सेवन करना चाहिए। मौसमी ताजे फलों जैसे मौसमी, सन्तरा, अनार, आम, पपीता, अंगूर आदि का पर्याप्त सेवन करना चाहिए।

15-8 egRoiw.kZ lq>ko

जीवनशैली जनित रोगों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए रोगी मनुष्य को निम्न महत्वपूर्ण नियमों को अपने आचरण अर्थात् दिन–प्रतिदिन के व्यवहार में अवश्य लाना चाहिए–

1. प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व निश्चित समय पर जागरण और रात्रिकाल में निश्चित समय पर शयन का नियम बनाना चाहिए।
2. प्रातःकाल नियमित रूप से उषापान अर्थात् खाली पेट पर्याप्त मात्राा में जल का सेवन करना चाहिए।
3. प्रातःकालीन भ्रमण एवं योगाभ्यास को दिनचर्या का अंग बनाना चाहिए।
4. स्वयं पर संयम करते हुए निश्चित समय पर शुद्व–सात्विक एवं प्राकृतिक आहार का सेवन करना चाहिए।
5. मानसिक संवेगों जैसे क्रोध, तनाव, ईर्ष्या, घबराहट और बेचैनी आदि से स्वयं को मुक्त रखना चाहिए।
6. दिनचर्या का प्रबन्धन करते हुए प्रतिदिन कुछ समय रचनात्मक क्रियाओं जैसे सफाई करना, हस्त लेखन करना आदि, मनोरंजन एवं परोपकार में व्यतीत करना चाहिए।
7. जीवन में परिश्रम की आदत बनानी चाहिए एवं पूर्ण परिश्रम के उपरान्त सन्तोष के भावों को ग्रहण करना चाहिए।
8. जीवन में ईश्वर प्रणिधान को अपनाते हुए सदैव सुख–दुख में सम, प्रसन्न और सकारात्मक रहने का प्रयास करना चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त सुझावों का नियमपूर्वक पालन करने से मनुष्य जीवनशैली जनित रोगों से मुक्त होकर उत्तम स्वास्थ्य के साथ आनन्द की अनुभूति करता है।

टिप्पणी

bdkbZxr iz'u&15-3

(क) त्राटक का शरीर पर प्रभाव बताइए।

....

....

(ख) जीवनशैली जनित रोगों में किए जाने वाले दो आसनों के नाम बताइए।

....

....

(ग) थायरॉयड ग्रन्थि से संबंधित रोगों में किन आसन के अभ्यास से विशेष लाभ प्राप्त होता है।

....

....

vkius D;k lh[kk

प्रिय शिक्षार्थियों, प्रस्तुत इकाई (यूनिट) में जीवनशैली जनित रोगों की यौगिक चिकित्सा को समझाया गया है। इकाई (यूनिट) के प्रारम्भ में जीवनशैली के अर्थ एवं स्वरूप को समझाया गया है। जीवनशैली का अर्थ होता है मनुष्य का जीवन जीने का तरीका अथवा ढंग। जीवनशैली के अन्तर्गत आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित दिनचर्या, रात्रिचर्या और ऋतुचर्या का समावेश होता है। इसके साथ–साथ आहार–निद्रा और ब्रह्मचर्य पालन भी जीवनशैली के महत्वपूर्ण अंग होते हैं। इनका पालन करने से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य उन्नत बना रहता है किन्तु इनका पालन करने से हृदय रोग, उच्च–निम्न रक्तचाप, तनाव, मोटापा, मधुमेह और थायरॉयड से सम्बन्धित रोग उत्पन्न होते हैं। इन रोगों को जीवनशैली जनित रोग कहा जाता है। इन रोगों के उपचार में यौगिक चिकित्सा बहुत लाभकारी प्रभाव रखती है।

इकाई (यूनिट) में स्पष्ट किया गया है कि दिनचर्या को अनुशासित और सुव्यवस्थित करते हुए प्रातःकाल सूर्योदयपूर्व उठने और यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से इन रोगों में स्थाई लाभ प्राप्त होता है। प्रातःकाल खाली पेट उषापान करने के शरीर का शोधन होता है और रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। षट्कर्म की शोधन क्रियाओं शारीरिक स्वच्छता एवं मानसिक एकाग्रता की प्राप्ति होती है। इसके साथ–साथ सूक्ष्म अभ्यास और आसन करने से रक्त संचार में वृद्धि होती है और अंगों की क्रियाशीलता बढ़ती है। प्रत्याहार के द्वारा इन्द्रियों पर संयम स्थापित होता है और प्राणायाम के अभ्यास से प्राणऊर्जा बढ़ती है अतः इन्द्रियों पर संयम करते हुए प्राणायाम का अभ्यास करने से इन रोगों में लाभ प्राप्त होता है। इसके साथ–साथ ध्यान और सकारात्मक अनुभूतियाँ करने से भी इन रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है। इकाई (यूनिट) में यह भी समझाया गया है जीवनशैली जनित रोगों में आहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए और रोगावस्था से मुक्त होने के लिए रोगी व्यक्ति को सदैव अपथ्य आहार का त्याग करते हुए पथ्य आहार का ही सेवन करना चाहिए।

bdkbZ d vUr e i'u

1. जीवनशैली जनित रोगों की यौगिक चिकित्सा पर प्रकाश डालिए।
2. मोटापा रोग के प्रमुख लक्षण लिखते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा का वर्णन कीजिए।
3. हाइपो थायरॉयड के प्रमुख लक्षणों एवं यौगिक चिकित्सा की व्याख्या कीजिए।
4. मधुमेह रोग के प्रमुख लक्षण समझाते हुए इसकी यौगिक चिकित्सा लिखिए।
5. टिप्पणियाँ लिखिए–
   (क) तनाव की यौगिक चिकित्सा।
   (ख) जीवनशैली जनित रोगों में आसन एवं प्राणायाम का महत्व।

bdkbZxr i'uksa d mÙkj

15-1

(क) सही (ख) गलत (ग) सही

15-2

(क) 14 नवम्बर (ख) अन्तः स्रावी (ग) तितली

15-3

(क) त्राटक क्रिया मानसिक स्थिरता और एकाग्रता उत्पन्न करती है।

(ख) वज्रासन, मण्डूकासन

(ग) मत्स्यासन, उष्ट्रासन